सत्यमेव जयते

विज्ञान गरिमा सिंधु

संयुक्तांक 126-127

ISSN: 2320-7736
(ONLINE)

जुलाई-सितंबर:अक्टूबर-दिसंबर
(2023)

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार
Commission for Scientific and Technical Terminology
Ministry of Education (Department of Higher Education)
Government of India

ISSN: 2320-7736 (online) *UGC care List Journal*

सत्यमेव जयते

विज्ञान गरिमा सिंधु

(त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका)

अंक 126-127

जुलाई-सितंबर:अक्टूबर-दिसंबर (2023)

शब्दावली आयोग CSTT

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय
(उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार

COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY
MINISTRY OF EDUCATION
(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)
GOVERNMENT OF INDIA

"वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग" द्वारा प्रकाशित "विज्ञान गरिमा सिंधु" एक त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका है । पत्रिका का उद्देश्य हिंदी भाषा में तकनीकी लेखन के माध्यम से शिक्षाविदों ,विश्वविद्यालयी एवं अन्य विद्यार्थियों तथा जनमानस के लिए विज्ञान और प्रोद्योगिकी संबंधी उपयोगी एवं अद्यतनित पाठ्य पुस्तकीय तथा संपूरक साहित्य की प्रस्तुति करना है। पत्रिका में में वैज्ञानिक लेख, शोध-लेख, तकनीकी निबंध, शब्द-संग्रह, शब्दावली- चर्चा, विज्ञान-समाचार, पुस्तक समीक्षा आदि का समावेश होता है ।

लेखकों के लिए निर्देश-

1. लेख की सामग्री मौलिक, अप्रकाशित तथा प्रामाणिक होनी चाहिए ।
2. लेख का विषय विज्ञान और प्रोद्योगिकी विषयों से संबंधित होना चाहिए और लेख हिंदी भाषा में देवनागरी लिपि में लिखित होना चाहिए ।
3. लेख सरल हों जिसे विद्यालय/ महाविद्यालय/विश्वविद्यालय के छात्र आसानी से समझ सकें ।
4. लेख लगभग 2000 से 3000 शब्दों का हो तथा लेख यूनिकोड फॉन्ट में लिखा गया हो ।
5. कृपया लेख vgscstt202425@gmail.com पर ई-मेल द्वारा अनिवार्यतः वर्ड और पी डी ऍफ़ दोनों प्रारूप में भेजें तथा हार्ड कॉपी 'संपादक' विज्ञान गरिमा सिंधु, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली -110066 पर भेजें ।
6. लेख के प्रकाशन के संबंध में संपादक या संपादन मंडल का निर्णय ही अंतिम होगा ।
7. लेखों की स्वीकृति के संबंध में पत्र व्यवहार का कोई प्रावधान नहीं है । अस्वीकृत लेख वापस नहीं भेजे जाएँगे अतः लेखक कृपया टिकट लगा लिफाफा साथ ना भेजें ।
8. पत्रिका में प्रकाशित लेखों के लिए किसी भी प्रकार के मानदेय का प्रावधान नहीं है ।
9. पुस्तक-समीक्षा हेतु कृपया पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजें ।
10. लेख की सन्दर्भ सूची का अनुवाद ना करें , सन्दर्भ सूची सन्दर्भों की मूल भाषा एवं लिपि में ही भेजें ।
11. लेख से संबंधित तकनीकी शब्दावली हेतु https://shabd.education.gov.in का प्रयोग किया जाना आवश्यक है ।
12. प्रकाशन हेतु विस्तृत जानकारी आयोग की वेबसाइट http://cstt.education.gov.in/ पर उपलब्ध है ।

पत्राचार विवरण :		
वेबसाइट : www.cstt.education.gov.in **कॉपीराइट : ©2025** **प्रकाशक :** वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग शिक्षा मंत्रालय,भारत सरकार पश्चिमी खंड -7 ,रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली - 110066	**बिक्री हेतु पत्र-व्यवहार का पता :** प्रभारी अधिकारी, बिक्री एकक,वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, पश्चिमी खंड -7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली- 110066 टेलीफोन - (011) 20867172 फैक्स - (011) 26105211/246	**बिक्री स्थान :** प्रकाशन नियंत्रक, प्रकाशन विभाग भारत सरकार, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054

पत्रिका का शुल्क:	**भारतीय मुद्रा**	**विदेशी मुद्रा**
सामान्य ग्राहकों/संस्थाओं के लिए प्रति अंक शुल्क	Rs 14.00	पौंड 1.64 डॉलर 4.84
वार्षिक शुल्क	Rs 50.00	पौंड 5.83 डॉलर 18.00
विद्यार्थियों के लिए प्रति अंक शुल्क	Rs 8.00	पौंड 0.93 डॉलर 10.80
विद्यार्थियों के लिए वार्षिक शुल्क	Rs 30.00	पौंड 3.50 डॉलर 2.88

अध्यक्ष की कलम से...

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित "विज्ञान गरिमा सिंधु" का नवीनतम संयुक्तांक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है । वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों के प्रतिपादन में हिंदी भाषा की मानक तकनीकी शब्दावली का प्रयोग करने वाली यह एकमात्र विज्ञान पत्रिका है । हालांकि हिंदी में मूल रूप से वैज्ञानिक लेखन करने वाले लेखकों की संख्या बहुत अधिक नहीं है, तथापि विविध वैज्ञानिक पत्रिकाओं में 'विज्ञान गरिमा सिंधु' का अपना विशिष्ट स्थान है। पत्रिका के पाठक और लेखकों को विदित है कि 'विज्ञान गरिमा सिंधु' विज्ञान की अध्ययन सामग्री के अतिरिक्त मानक तकनीकी शब्दावली एवं उसके प्रयोग व प्रचार-प्रसार के प्रति भी कटिबद्ध है। अत: पूर्ण विश्वास है कि इस पत्रिका के माध्यम से भविष्य में भी पाठकों को विज्ञान एवं तकनीकी से संबंधित स्तरीय पाठ्य सामग्री निरंतर प्राप्त होती रहेगी ।

शोध पत्रिकाएँ न केवल संस्था के वैशिष्ट्य की परिचायक होती हैं, बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे महत्त्वपूर्ण अनुसंधानों एवं शोध कार्यों का एक समेकित व जनोपयोगी सार्थक मंच भी होती हैं । इस संयुक्तांक में हम 14 लेखों का संग्रह प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसमें डिजिटल शिक्षा, सूचना प्रौद्योगिकी, नैनो द्रव्य, सौर वायु तापक की दक्षता, ग्रामीण परिवेश में सेवा केंद्र, कृषि में मृदा स्वास्थ्य, जैविक खाद एवं सामुदायिक भागीदारी, हिमालयी क्षेत्रों में मौजूद पहाड़ी एगामिड छिपकली (लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा) की पारिस्थितिकी, समाज में सोशल मीडिया का प्रभाव, प्राकृतिक संसाधनों का खाद्य पदार्थों में प्रयोग जैसे विविध विषयों का समावेश है।

सभी पाठकों से अपेक्षा है कि वे पत्रिका के संबंध में अपने सुझावों एवं प्रतिक्रियाओं से आयोग को अवगत कराते रहें ताकि पत्रिका में सुधार हो और इसकी स्वीकार्यता में निरंतर वृद्धि होती रहे। पत्रिका की परामर्श एवं संपादन समिति के विशेषज्ञों के प्रति विशेष सहयोग हेतु आभार व्यक्त करता हूँ । पत्रिका के संपादक श्री विजय राज सिंह शेखावत, सहायक निदेशक एवं सह-संपादक डॉ. आकाश मोहन रावत सराहना के पात्र हैं । हम उन विद्वान लेखकों के प्रति अत्यंत आभारी हैं जिन्होंने विज्ञान गरिमा सिंधु के इस अंक के लिए लेख भेजे हैं । भविष्य में भी विद्वान लेखकों से इसी तरह के सहयोग की अपेक्षा रहेगी ।

हमें विश्वास है कि यह अंक पाठकों की वैज्ञानिक सोच व कौशल को समृद्ध करेगा। सुधी पाठकों के अमूल्य सुझावों एवं सहयोग की प्रतीक्षा रहेगी ।

(प्रोफेसर धनंजय सिंह)
अध्यक्ष

संपादकीय...

'विज्ञान गरिमा सिंधु' के 126-127 वें सयुक्तांक को आप सभी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है, जो विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विभिन्न आयामों व नवीनतम अनुसंधानों पर आधारित है। प्रस्तुत संयुक्तांक हमारी शोध-पत्रिका के विशेष वैज्ञानिक एवं तकनीकी दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करता है जिसमें विज्ञान, प्रौद्योगिकी के अद्यतन एवं नवीन शोध कार्यों को प्रस्तुत किया गया है। पर्यावरण,विज्ञान,प्रौद्योगिकी,कृषि एवं स्वास्थ्य किसी भी प्रगतिशील समाज को न केवल सम्पूर्णता प्रदान करते हैं बल्कि सामाजिक ढांचे को भी मजबूती प्रदान करते हैं साथ ही देश के सतत विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। उपरोक्त बहु विधाओं से परिपूर्ण समाज शिक्षा, संस्कृति तथा आर्थिक प्रगति की ओर अग्रसर रहता है तथा नागरिकों में तार्किक समझ को और गहरा करता है ।

इस संयुक्तांक में हमनें 14 लेखों का संग्रह प्रस्तुत किया है, जिसमें प्रौद्योगिकी क्षेत्र से डिजिटल शिक्षा, सूचना प्रौघोगिकी; कृषि विज्ञान क्षेत्र से जैविक खाद व सामुदायिक भागीदारी, कृषि में मृदा स्वास्थ्य; विज्ञान के अन्य क्षेत्रों से नैनो द्रव्य, हिमालयी क्षेत्रों में मौजूद एगामिड छिपकली (लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा) की पारिस्थितिकी, मधुमेह के दुष्परिणाम, समाज में सोशल मीडिया का प्रभाव, ग्रामीण परिवेश में सेवा केंद्र, सौर वायु तापक की दक्षता, प्राकृतिक संसाधनों का खाद्य पदार्थों में प्रयोग जैसे विविध विषयों को समाहित किया गया है।

विस्तृत रूप से संयुक्तांक में डिजिटल शिक्षा व राष्ट्रीय शिक्षा नीति, चिकित्सा,भौतिकी व समाज में मौजूद जटिल समस्यों के निवारण हेतु नवीन अवकलन विधियों के प्रयोग,नैनो द्रवों व बेहतर ऊष्मा अंतरण क्षमता, सौर वायु तापक की दक्षता वृद्धि विधियाँ, ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास के लिए सेवा केन्द्र,जैविक खेती द्वारा बेहतर मृदा स्वास्थ्य,व अकृष्ट भूमि पर बेहतर खेती की संभावनाएं, सोशल मीडिया के भावनात्मक पहलुओं पर चर्चा, बेहतर बाग प्रबंधन द्वारा एकांतर फलन का न्यूनीकरण, बेहतर स्वास्थ्य व आर्थिकी के लिए निर्जलीकरण विधियाँ, गढ़वाल हिमालय में मौजूद एगामिड छिपकली की पारिस्थितिकी व आकारमिति विश्लेषण, हृद्वय वाहिका रोग व मधुमेह के प्रमुख कारण,निदान एवं रोकथाम, सामुदायिक चारा बैंक मॉडल व पशुपालकों की आर्थिकी पर विशेष ध्यान आकर्षित किया गया है जो पाठकों में इन विविध क्षेत्रों की समझ विकसित करेंगे ।

मैं संयुक्तांक की समीक्षा एवं संपादन समिति के विद्वत सदस्यों को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने संपादन एवं समीक्षा में सहयोग प्रदान किया । लेखकों से विशेष आग्रह है कि वे अपने शोध और विचार हमारे साथ साझा करते रहें, ताकि ज्ञान-विज्ञान विनिमय के माध्यम से एक समृद्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले समाज का निर्माण किया जा सके।आगामी अंकों में भी हम नवीनतम अनुसंधान और विचार प्रकाशित करने के लिए प्रयासरत रहेंगे ।

(विजय राज सिंह शेखावत)
सहायक निदेशक

संपादन सलाहकार समिति

प्रो. सुधीर कुमार सोपोरी (पद्मश्री), एमेरिटस वैज्ञानिक, पूर्व कुलपति, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ. संजय मिश्रा, वैज्ञानिक 'एच' जैवप्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार, दिल्ली

प्रो. सुकल्याण सेनगुप्ता, सिविल एवं पर्यावरण इंजीनियरिंग विभाग, मैसाचुसेट्स विश्वविद्यालय, डार्टमाउथ, संयुक्त राज्य अमरीका

प्रो. पवन धर, जैव प्रौद्योगिकी विभाग, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रोफेसर अरुण खरात, स्कूल ऑफ लाइफ साइंसेस, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रोफेसर सी.बी.शर्मा, इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, मैदानगढ़ी,नई दिल्ली

प्रो. ए.जी. रामकृष्णन, वैज्ञानिक भारतीय विज्ञान संस्थान, बेंगलुरु,कर्नाटक

प्रोफेसर राकेश भटनागर,पूर्व कुलपति बनारस हिंदू विश्वविद्यालय,वाराणसी,उत्तर प्रदेश

प्रोफेसर सुरेश सी.आमेटा, अधिष्ठाता-विज्ञान, पी ए एच ई आर, उदयपुर, राजस्थान

शब्दावली आयोग CSTT

संपादन मंडल

प्रधान संपादक
प्रोफेसर धनंजय सिंह
अध्यक्ष

संपादक
श्री विजय राज सिंह शेखावत
सहायक निदेशक (विषय)

सह-संपादक
डॉ. आकाश मोहन रावत
सहायक वैज्ञानिक अधिकारी (भूविज्ञान)

शब्दावली आयोग CSTT

समीक्षा एवं संपादन समिति

डॉ.निमिषा शर्मा, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

श्री रतनाकर सिंह,आल इंडिया रेडियो,नई दिल्ली

डॉ.संगमेश, जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय ,नई दिल्ली

डॉ. छगन लाल, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

वेद्य संघमित्रा दास,आयुर्वेदाचार्य, नई दिल्ली

श्री रघुबर दत्त,रिखाड़ी,पूर्व संपादक(आविष्कार एवं इंटेलिजेंस)

प्रोफेसर पूनम शर्मा,शहीद भगत सिंह कॉलेज,नई दिल्ली

डॉ.पीयूष गोयल,विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय,नई दिल्ली

डॉ.एम.पी. मिश्रा, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ. विश्वास दीप जोशी,जे ई सी आर सी,जयपुर,राजस्थान

डॉ. अशोक एन. सेलवटकर, सहायक निदेशक (विषय),वै. त. श. आयोग,नई दिल्ली

श्री विजय राज सिंह शेखावत, सहायक निदेशक (विषय),वै. त. श. आयोग,नई दिल्ली

डॉ. आकाश मोहन रावत, सहायक वैज्ञानिक अधिकारी (भूविज्ञान), वै. त. श. आयोग,नई दिल्ली

अनुक्रमणिका

प्रधान संपादक
प्रोफेसर धनंजय सिंह
अध्यक्ष

संपादक
श्री विजय राज सिंह शेखावत
सहायक निदेशक (विषय)

सह-संपादक
डॉ. आकाश मोहन रावत
सहायक वैज्ञानिक अधिकारी
(भूविज्ञान)

प्रकाशन-मुद्रण व्यवस्था
डॉ. अशोक एन. सेलवटकर
सहायक निदेशक (विषय)

सम्पर्क सूत्र
'संपादक'
विज्ञान गरिमा सिंधु,
वैज्ञानिक तथा तकनीकी
शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय,भारत
सरकार, पश्चिमी खंड -7
रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली - 110066

प्रौद्योगिक युग में डिजिटल होती शिक्षा और संचार माध्यम (राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 के विशेष संदर्भ में)	अंकिता मिश्रा	01
जटिल जालक्रम में समुदाय संरचना के मूल्यांकन के लिए गुणवत्ता मापदण्डों का श्रेणीकरण	अंजली कुमारी, पवन कुमार	06
एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव के व्यवहार का अध्ययन	अमृता त्रिपुरे, अमृत शेन्डे, संतोष कुमार मिश्रा	16
विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न वाले अवशोषक प्लेट के साथ सौर वायु तापक में ऊष्मा अंतरण सुधार की संख्यात्मक जांच	अमृत शेन्डे, अमृता त्रिपुरे, संतोष कुमार मिश्रा, हरीश कुमार घृतलहरे	29
सिरमौर जनपद (हि०प्र०) में सेवा केंद्र का पदानुक्रम	राम चन्द्र शर्मा	43
सूचक के रूप में मिट्टी के प्रकिण्व का उपयोग करके हिमाचल प्रदेश की कृष्ट और अकृष्ट मिट्टी के स्वास्थ्य का तुलनात्मक अध्ययन	शिवानी त्यागी, ममतेश सिंह, गजेंद्र प्रताप सिंह	51
दिल्ली की किशोर बालिकाओं में स्क्रीन समय और सोशल मीडिया का उपयोग	संजीव कुमार	61
फलों मे एकान्तर फलन की समस्या एवं निवारण	मुकेश शिवरान, निमिषा शर्मा, ज्योति	72
सहजन (ड्रमस्टिक) के पाउडर का निर्माण एवं मूल्य संवर्धन द्वारा कम लागत वाले परम्परागत खाद्य पदार्थों का विकास एवं मानकीकरण	आंचल सिंह	79
फसलों में खाद एवं उर्वरकों का सही उपयोग: आर्थिक दृष्टिकोण	विजय कुमार, रूही	92
गढ़वाल हिमालय क्षेत्र में लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा ग्रे, 1827 की आकारमिति और प्रजनन पारिस्थितिकी पर एक व्यापक अध्ययन	स्मिता डंगवाल, दिनेश कुमार शर्मा	107
हृद् वाहिका रोग के प्रमुख कारक एवं त्वरक के रूप में इंसुलिन प्रतिरोध संलक्षण: एक समीक्षात्मक पुनरावलोकन	डॉ सुभाष भिमराव दोंदे	128
सरकारी एवं निजी भागीदारी द्वारा सामुदायिक चारा विकास : एक अनुभव	डॉ देवेश ठाकुर, डॉ सुदेश रडोत्रा	140
स्वास्थ्य पर मधुमेह के दुष्परिणाम	दया शंकर त्रिपाठी	146

"विज्ञान गरिमा सिंधु" पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचारों,सूचनाओं,जानकारियों आदि से वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, शिक्षा मंत्रालय,भारत सरकार, या इस अंक के संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। यह पत्रिका वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली के प्रचार प्रसार के साथ हिंदी में वैज्ञानिक तथा तकनीकी लेखन को प्रोत्साहित करने के लिए त्रैमासिकी के रूप में प्रकाशित की जाती है ।

1. प्रौद्योगिक युग में डिजिटल होती शिक्षा और संचार माध्यम (राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 के विशेष संदर्भ में)

अंकिता मिश्रा

सार: मनुष्य में अच्छे विचारों का निर्माण कर जीवन के मार्ग को प्रशस्त करना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। शिक्षित नागरिक एक बेहतर समाज के निर्माण की आधारशिला है। बदलती वैश्विक परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो ऐसे नागरिकों का निर्माण करने में समर्थ हो जो वर्तमान समय की अवश्यकताओं को पूरा करने में अपना सक्रिय योगदान दे सकें। इन्हीं आवश्यकताओं और बदलती हुई परिस्थितियों को ध्यान रखते हुए समय-समय पर शिक्षा नीति की समीक्षा कर उसे वर्तमान परिपेक्ष्य के अनुसार नया स्वरूप प्रदान किया जाता है। इसका मूल उद्देश्य यही है कि वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, उसमें आवश्यक संशोधन करके उसे उपयोगी, सार्थक और तर्कसंगत बनाया जा सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1992 के निर्माण के समय वर्तमान समय के क्रांतिकारी बदलावों का अनुमान कठिन था। मौजूदा समय में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का उपयोग हर क्षेत्र में किया जा रहा है। प्रौद्योगिकी ने हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित किया है। शिक्षा का क्षेत्र भी इसके प्रभाव से अछूता नहीं है। शिक्षा एवं प्रौद्योगिकी का परस्पर घनिष्ठ संबंध है। ये एक दूसरे के पूरक हैं। संचार यथा जनसंचार के क्षेत्र में भी इसके अवदानों को नकारा नहीं जा सकता है। संचार के इस युग में डिजिटल प्रौद्योगिकी का अनूठा संगम नए रूप में डिजिटल शिक्षा पद्धति के रूप में भी देखने को मिल रहा है।

मुख्य शब्द (Key Words): प्रौद्योगिकी, जनसंचार, शिक्षा, डिजिटल।

1. प्रस्तावना

भारत में संचार एवं प्रौद्योगिकी के विकास की यात्रा पर दृष्टि डालें तो ये स्पष्ट हो जाता है कि हर एक क्षेत्र में प्रौद्योगिकी की अभूतपूर्व उन्नति हुई है। वर्ष 1975 में इसरो द्वारा अंतरिक्ष में उपग्रह संचालन का अनुभव प्राप्त करने के लिए भारत का प्रथम उपग्रह 'आर्यभट्ट' निर्माण किया गया था। इसका निर्माण एक्स-रे, खगोल विज्ञान एवं सौर भौतिकी के प्रयोगों के संचालन के लिए किया गया था। भारत में उपग्रह संचार युग का आरंभ वर्ष 1981 में देश के पहले संचार उपग्रह 'एप्पल' के प्रक्षेपण के समय से ही हो गया था। एप्पल को सैंडविच यात्री के तौर पर अभिकल्प (design) एवं निर्मित किया गया। एप्पल का प्रयोग टी.वी. कार्यक्रमों के प्रसारण एवं रेडियो जालक्रम (radio networking) सहित कई अन्य संचार से जुड़े परीक्षणों में किया गया। 15 अगस्त 1981 को तत्कालीन प्रधानमंत्री

श्रीमती इंदिरा गांधी के लाल किले की प्राचीर से दिए गए भाषण का भी एप्पल के माध्यम से सीधा प्रसारण किया गया। तदोपरांत दिन-प्रतिदिन भारत की संचार प्रौद्योगिकी में उन्नति हो रही है।

शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के महत्त्व एवं उसके सक्रिय उपयोग के लिए 20 सितम्बर 2004 को शिक्षा के लिए पूर्णतः समर्पित उपग्रह 'एडुसेट' (GSAT-3) का प्रक्षेपण जीएसएलवी-ऍफ़-1 के द्वारा किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य अन्योन्यक्रियात्मक उपग्रह (interactive satellite) आधारित दूरस्थ शिक्षा की मांग को पूरा करना था। वर्ष 2004-05 में भारत में उच्चतर शिक्षा में लगभग 1 करोड़ 10 लाख शिक्षार्थी नामांकित थे। जिनमें से लगभग 20 प्रतिशत लोगों के लिए दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के माध्यम से उच्च शिक्षा के रास्ते खुल गए। वर्ष 1996 से 2004 तक उच्च शिक्षा तथा दूरस्थ शिक्षा के नामांकन में वृद्धि हुई जिसमें दूरस्थ शिक्षा का समग्र योगदान लगभग 19 प्रतिशत है। भारत शिक्षा के क्षेत्र में संचार प्रौद्योगिकी के विस्तार को लेकर पूरी तरह सजग है। विश्व भर में उदारीकरण एवं भू-मण्डलीकरण के कारण आए बदलाव को देखते हुए शिक्षा के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों में परिवर्तन हो चुका है। केंद्र सरकार द्वारा भी शिक्षा को संचार एवं प्रौद्योगिकी से जोड़ने एवं ऑनलाइन शिक्षा प्रदान करने पर विशेष बल दिया जा रहा है। आभासी विश्वविद्यालय (virtual university) की परिकल्पना की जा रही है, ताकि सुदूर बैठे छात्र भी कम्प्यूटर एवं इंटरनेट द्वारा घर बैठे अपनी शिक्षा में निरंतरता बनाए रख सकें। 'सभी के लिए शिक्षा' जैसे सूत्रवाक्य को सफल बनाने में प्रौद्योगिकी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहेगी। मुक्त विश्वविद्यालयों के लिए संचार एवं प्रौद्योगिकी ने संजीवनी का कार्य किया है। जनवरी 2000 से 'ज्ञानदर्शन' चैनल के माध्यम से तथा 7 नवम्बर 2001 से 'ज्ञानवाणी' चैनल के द्वारा शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण किया जा रहा है। 27 अक्तूबर 2009 को इग्नू द्वारा स्वीडन की दूरसंचार कंपनी 'एरिक्सन' से तीसरी पीढ़ी की मोबाइल फोन प्रौद्योगिकी के जरिए ऑनलाइन शिक्षा प्रदान करने संबंधी एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। वर्तमान में चौथी पीढ़ी की तकनीक द्वारा ऑनलाइन शिक्षा प्रणाली को सर्वसुलभ बनाया गया है। वैश्विक महामारी कोविड-19 में बेहद अनिश्चितता और भय के समय में प्रौद्योगिकी कई मायनों में आशा और जीवन का स्रोत रही है। प्रौद्योगिकी ने कोविड-19 के कारण शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले नुकसान को काफ़ी हद तक कम कर दिया है। शिक्षण संस्थानों द्वारा शिक्षा की निरंतरता बनाए रखने के लिए विभिन्न ऑनलाइन प्लेटफॉर्म जैसे- गूगल क्लासरूम, माइक्रोसॉफ्ट टीम, जूम आदि के माध्यम से इसे सुचारु तरीके से चलाने में मदद मिली है। वर्तमान में भी इनका उपयोग मीटिंग एवं कक्षा संचालन में प्रभावी रूप से किया जा रहा है। कोविड-19 के दौरान विश्व भर में पूर्व प्राथमिक कक्षाओं के लिए 42 प्रतिशत देशों द्वारा, प्राथमिक कक्षाओं के लिए 74 प्रतिशत देशों द्वारा तथा माध्यमिक कक्षाओं के लिए 77 प्रतिशत देशों द्वारा डिजिटल प्लेटफॉर्म का इस्तेमाल किया गया। इसके अतिरिक्त कई देशों ने टेलीविजन एवं रेडियो आधारित कार्यक्रमों के प्रसारण के माध्यम से शिक्षण की निरंतरता के लिए विशेष प्रयास किए हैं। भारत शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल क्रांति का पक्षधर रहा है। पिछले कुछ वर्षों में एवं कोविड-19 वैश्विक महामारी के कारण उपजी समस्याओं के निराकरण के लिए भी शिक्षा के क्षेत्र में तकनीक का

अभिनव प्रयोग हुआ है और प्रौद्योगिकी ने इसके लिए उत्प्रेरक का कार्य किया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भी शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल आधारभूत ढांचा व सुविधाओं के विकास के लिए एक समर्पित इकाई के निर्माण की बात करती है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के प्रभावी उपयोग में कुछ व्यवहारिक बाधाएं भी हैं जिनके समाधान के लिए प्रभावी योजनाओं की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2017-18 के अनुसार भारत में लगभग 24 प्रतिशत घरों तक ही इंटरनेट की पहुंच है। जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों का प्रतिशत 14.9 प्रतिशत व शहरी क्षेत्रों का प्रतिशत 42 प्रतिशत है। पिछले कुछ वर्षों में इन आकड़ों में कुछ वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय स्तर पर मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय द्वारा ऑनलाइन शिक्षा के क्षेत्र में विशेष प्रयास किए जा रहे हैं। इन्हीं प्रयासों के परिणाम स्वरूप मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय (वर्तमान में शिक्षा मंत्रालय) ने राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के साथ मिलकर वर्ष 2007 में देश के विभिन्न राज्यों के छात्रों हेतु उपयोगी 'दीक्षा' प्लेटफॉर्म विकसित किया है। दीक्षा प्लेटफॉर्म न सिर्फ छात्रों बल्कि शिक्षकों के लिए भी उपयोगी है। वैश्विक महामारी कोविड-19 के दौरान छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्या के समाधान के लिए मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय द्वारा 'मनोदर्पण' नामक वेब पोर्टल विकसित किया गया। केंद्र सरकार के 'स्वयंप्रभा' चैनल के माध्यम से शैक्षिक सामग्री छात्रों तक नियमित रूप से पहुंच रही है।

2. गुणात्मक विश्लेषण

आंकड़ों के मुताबिक भारत के लगभग 66 प्रतिशत परिवारों के पास टेलीविजन की उपलब्धता है। जिससे चैनलों द्वारा प्रसारित शैक्षिक सामग्री का लाभ इन परिवारों व विद्यार्थियों तक पहुंच रहा है। इसके अतिरिक्त ऑल इण्डिया रेडियो के द्वारा भी ऑनलाइन माध्यम से विभिन्न कक्षाओं के लिए शैक्षिक सामग्री का प्रसारण नियमित रूप से किया जा रहा है ताकि अधिकतम विद्यार्थियों तक पहुंच बनाई जा सके। शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी प्रयोग के माध्यम से ऑनलाइन शिक्षा के लिए उल्लेखनीय प्रयास किए जा रहे हैं। इन राज्यों के द्वारा विभिन्न शैक्षिक प्लेटफार्म विकसित किए गए हैं, जैसे: छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा 'शिक्षा आपके द्वार', केरल द्वारा 'केआईटीई (KITE)', मध्यप्रदेश द्वारा 'डिजी-एलईपी (digi-LEP)' एवं उत्तर प्रदेश द्वारा 'मिशन प्रेरणा' के माध्यम से ई-पाठशाला का संचालन किया जा रहा है। केंद्र एवं राज्य सरकारों के अतिरिक्त विभिन्न राज्यों के कुछ स्वप्रेरित शिक्षकों द्वारा भी शिक्षा की निरंतरता बनाए रखने के लिए विभिन्न सोशल मिडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग डिजिटल शिक्षा के लिए किया जा रहा है। इन्हीं वर्तमान परिस्थितियों और आवश्यकताओं को ध्यान रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भी शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के उपयोग एवं प्रयोग के विषय में एक तार्किक एवं न्यायसंगत रूप से एक विस्तृत दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अनुसार प्रौद्योगिकी शिक्षा को कई मायनों में प्रभावित करेगी। नए प्रौद्योगिकी क्षेत्र जैसे- कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence), मशीन लर्निंग, ब्लॉक चेन, स्मार्ट बोर्ड, एडेप्टिव कम्प्यूटर टेस्टिंग

शब्दावली आयोग CSTT

और अन्य प्रकार के सॉफ्टवेअर छात्रों में सीखने व सिखाने की प्रक्रिया एवं परिणामों का सटीकता से पता लगाने में सहायक होंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 शिक्षा से संबंधित क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी एवं शैक्षिक दोनों दृष्टि से व्यापक शोध की आवश्यकता पर भी बल देती है। स्कूली शिक्षा एवं उच्च शिक्षा दोनों में शिक्षा के विभिन्न आयामों जैसे - शिक्षण अधिगम, मूल्यांकन, नियोजन, प्रबंधन, प्रशासन आदि में सुधार हेतु 'राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मंच' के गठन का प्रस्ताव भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में सम्मिलित किया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के उपयोग के लिए पूर्ण रूप से समर्पित इस मंच द्वारा बौद्धिक एवं संस्थागत क्षमताओं का निर्माण, परिकल्पना, नवाचार व अनुसंधान के लिए नई दिशाओं की खोज की जा सकेगी। इसके अतिरिक्त इस मंच द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी से जुड़ी नवीन जानकारी, प्रयोगों एवं नवाचारों को साझा कर सभी को लाभांवित करने के लिए क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर कार्यशालाओं का आयोजन किया जाएगा। साथ ही शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के न्यायसंगत एवं प्रभावी उपयोग के माध्यम से इसे बेहतर बनाने वाले विशेषज्ञों को आमंत्रित कर उनके विचारों एवं कार्यों को साझा करने के अवसर प्रदान किए जाएंगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के लिए विभिन्न उपयोगी सॉफ्टवेअर विकसित करने एवं उनकी संबंधित तक पहुंच की बात सामने रखती है। ये सॉफ्टवेअर सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं में उपलब्ध होंगे ताकि सुदूर क्षेत्रों में रहने वाले एवं दिव्यांग छात्रों को भी उनका समुचित लाभ मिल सके। प्रौद्योगिकी के माध्यम से सभी तक शैक्षिक सामग्री की पहुंच सुनिश्चित करने के लिए सभी राज्यों में एनसीईआरटी, सीआईईटी, सीबीएसई, एनआईओएस एवं अन्य निकायों द्वारा विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में विकसित शिक्षण एवं अधिगम सामग्री को ई-कंटेंट के रूप में दीक्षा प्लेटफॉर्म पर अपलोड करना भी सम्मिलित है। प्रौद्योगिकी आधारित प्लेटफॉर्म जैसे – 'दीक्षा', 'स्वयं' आदि के द्वारा शिक्षण अधिगम सामग्री के साथ-साथ शिक्षकों के लिए उपयोगी प्रशिक्षण कार्यक्रम भी संचालित किए जाएंगे। बदली हुई विषम परिस्थितियों जैसे - संक्रामक रोग एवं वैश्विक महामारी को देखते हुए शिक्षा के वैकल्पिक संसाधनों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। इस संबंध में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा में प्रौद्योगिकी के सही और प्रभावी उपयोग पर भी बल देती है, ताकि बदली हुई विषम परिस्थितियों में प्रौद्योगिकी के उपयोग द्वारा शिक्षण अधिगम से जुड़ी प्रक्रिया की निरंतरता को बनाए रखा जा सके। हालांकि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए डिजिटल इंडिया अभियान का सफलतापूर्वक क्रियान्वयन एवं शैक्षिक उपयोग में आने वाले सस्ते डिजिटल उपकरणों की उपलब्धता सुनिश्चित करना आवश्यक है। ऑनलाइन शिक्षा में शिक्षकों एवं छात्रों दोनों का प्रौद्यिगिकी के उपयोग के प्रति सजग होना अति आवश्यक है। इसकी पूर्ति के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करने की आवश्यकता की बात भी शिक्षा नीति में की गई है।

3. निष्कर्ष

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में स्कूली शिक्षा से लेकर उच्चतर शिक्षा तक प्रौद्योगिकी के महत्त्व को देखते हुए कुछ सिफारिशें भी की गई हैं, जैसे - ऑनलाइन शिक्षा की हानियों को कम करते हुए उसे छात्रों के अनुकूल बनाना, डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर का निर्माण करना, ऑनलाइन शिक्षण मंच एवं उपकरण प्रदान करना, दूरस्थ शिक्षा हेतु मौजूदा जनसंचार माध्यमों जैसे - टीवी, रेडियो आदि का उपयोग कर डिजिटल शैक्षिक सामग्री का प्रसारण, आभासी प्रयोगशाला, शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन कार्यक्रम, ऑनलाइन मूल्यांकन एवं परीक्षाएं आदि आयोजित करना प्रमुख है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020, शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के सार्थक, तर्कसंगत एवं न्यायसंगत उपयोग का पूर्ण रूप से समर्थन करती है एवं उसके प्रभावी प्रयोग के लिए विस्तृत कार्ययोजना भी प्रस्तुत करती है।

वरिष्ठ संपादक,आविष्कार,इन्वेंशन इंटेलीजेंस,नेशनल रिसर्च डिवेलपमेंट कारपोरेशन (एनआरडीसी), 20-22, जमरूदपुर सामुदायिक केंद्र, कैलाश कॉलोनी विस्तार, नई दिल्ली-110048
ankita@nrdc.in

संदर्भ

1. भानावत, (संपादक) डॉ. संजीव, पटैरिया, डॉ. मनोज (2006); ''वैज्ञानिक दृष्टिकोण और संचार माध्यम'', जयपुर राजस्थान विश्वविद्यालय, जनसंचार केन्द्र, नई दिल्ली, राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्
2. बरनाल, जे. डी., अनुवाद (चन्द्रभूषण) (2000); ''विज्ञान की सामाजिक भूमिका'', दिल्ली, ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड
3. भानावत, (संपादक) डॉ. संजीव, (2006); ''विकास एवं विज्ञान संचार'', जयपुर राजस्थान विश्वविद्यालय, जनसंचार केन्द्र
4. मिश्र डॉ. चन्द्र प्रकाश, (2006); ''संचार और माध्यम'', दिल्ली, संजय प्रकाशन
5. दयाल डॉ. मनोज, (2006); ''मीडिया शोध'', पंचकूला, हरियाणा साहित्य अकादमी
6. गोठी ऋतु (2004) ''मीडिया शोध'', नई दिल्ली, लक्ष्य पब्लिकेशन
7. पटैरिया मनोज, (2001) ''विज्ञान संचार'', नई दिल्ली, तक्षशिला प्रकाशन
8. मणि डॉ. दिनेश, द्विवेदी देवव्रत, संपादन डॉ. शिवगोपाल मिश्र, (2001), ''पत्रकारिता के मूल सिद्धान्त'' नई दिल्ली, तक्षशिला प्रकाशन

2. जटिल जालक्रम में समुदाय संरचना के मूल्यांकन के लिए गुणवत्ता मापदण्डों का श्रेणीकरण

[1]अंजली कुमारी, [1]पवन कुमार

सार: समुदाय संरचना (community structure) शोधन भौतिक विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, सामाजिक विज्ञान से लेकर प्रौद्योगिकी जैसे विविध क्षेत्रों में उभरने वाले जटिल जालक्रम (complex network) का अध्ययन करने के लिए एक मौलिक साधन बन गया है। इससे कई समुदाय संरचना शोधन कलन विधियों का विकास हुआ, और ऐसी कलन विधियों (algorithms) का मूल्यांकन करने के लिए कई गुणवत्ता मापदण्ड (quality-metric) अस्तित्व में आए हैं जैसे- न्यूमैन-गिरवन प्रतिरूपकता, भारित अतिव्यापी प्रतिरूपकता (weighted overlapping modularity), काट-अनुपात (cut-ratio), चालकता (conductance), आदि। ये सभी मूल्यांकन मापदण्ड एक दूसरे से मेल नहीं खाते। इससे शोधकर्ताओं के लिए यह निर्धारित करना मुश्किल हो जाता है कि समुदाय संरचना का आकलन करने के लिए किस मापदण्ड का प्रयोग किया जाए। इस समस्या को हल करने के लिए, हमने छः सामान्य गुणवत्ता मापदण्डों का चयन किया, और एक कृत्रिम जालक्रम में विभिन्न समुदाय संरचनाओं पर उनका विश्लेषण किया। सबसे पहले, हमने चयनित समुदाय संरचनाओं को उच्च सहसंबंधित (highly correlated) मूल्यांकन मापदण्डों के औसत मान के अनुसार क्रमबद्ध करके उनका श्रेणीकरण किया। समुदाय संरचनाओं की इस श्रेणी का प्रयोग चयनित गुणवत्ता मापदण्डों को क्रमबद्ध करने के लिए किया गया। यह अध्ययन शोधकर्ताओं को यह तय करने में मदद करेगा कि समुदाय संरचना कलन विधियों का विश्लेषण करने के लिए किन मापदण्डों (metrics) का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके अलावा, यह अध्ययन नए गुणवत्ता मापदण्ड विकसित करने के लिए मानक निर्धारित करेगा।

मुख्य शब्द(Key Words): जालक्रम, समुदाय संरचना, गुणवत्ता मापदण्ड, प्रतिरूपकता, सहसंबंध गुणांक।

1. प्रस्तावना

वास्तविक जगत जालक्रम की समुदाय संरचना कई क्षेत्रों के समावेश से प्राप्त होती हैं, जिनमें सामाजिक विज्ञान, व्यवहार विज्ञान, जैविक विज्ञान, संगणक विज्ञान आदि शामिल हैं (Leskovec et al., 2009)। वास्तविक जगत के जालक्रम की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह समुदायों (सघनता से जुड़ी हुई संबंधित इकाइयों के समूह) से बना होता है। समुदाय संरचना के अध्ययन में, उनकी मूल्यांकन पद्धतियां केन्द्रीय भूमिका निभाती हैं, क्योंकि वे प्रयोगकर्ताओं को यह निर्णय लेने में सक्षम बनाती हैं कि कौन-सी कलन विधि किस विशेष समस्या के लिए सबसे उपयुक्त है (Fortunato, 2010)। वास्तविक जगत जालक्रम में समुदायों की विशेषताओं का अध्ययन करने के लिए लेस्कोवेक और उसके साथियों (Yang & Leskovec, 2012) ने चालकता (conductance) की अवधारणा का प्रयोग

करके समुदाय प्रारूप आरेख (profile-plot) दिया जिसकी आकृति जालक्रम में मौजूद समुदाय संरचना के बारे में समग्र जानकारी देती है। समुदाय संरचना की कुछ प्रमुख विशेषताएं हैं:

पृथक्करण (separability), घनत्व (density), संसंजकता (cohesiveness), गुच्छन गुणांक (clustering-coefficient), उच्च आंतरिक संबद्धता (maximum internal connectivity), न्यून बाह्य संबद्धता (minimum external connectivity) , अतिव्यापन (overlap), आदि (Fortunato, 2010; Lancichinetti et al., 2009; Yang & Leskovec, 2012)। समुदाय शोधन कलन विधियों (P. Kumar & Dohare, 2019) पर काम करने वाले शोधकर्ता प्राय: अपनी कलन विधि को मान्य करने के लिए एक या अधिक गुणवत्ता मापदण्डों का प्रयोग करते हैं। हालाँकि, कई गुणवत्ता मापदण्ड विभेदन सीमा (resolution limit) (Fortunato & Barthelemiy, 2007) की समस्या से ग्रस्त हैं। इस लेख में हमारा ध्यान मौजूदा गुणवत्ता मापदण्डों का विश्लेषण करने और कृत्रिम जालक्रम का प्रयोग करके उनको श्रेणीबद्ध (ranking) करने पर है। यह अध्ययन समुदाय शोधन के क्षेत्र में काम करने वाले शोधकर्ताओं के लिए लाभप्रद होगा।

2. संबंधित कार्य

इस अनुभाग में असंयुक्त और अतिव्यापी समुदायों के लिए गुणवत्ता मूल्यांकन मापदण्डों का विस्तृत विवरण दिया गया है, साथ-साथ उनके फायदे और नुकसानोँ को सूचीबद्ध किया गया हैं। इसके अलावा हमने समानता मापदण्डों (similarity metrics) का भी वर्णन किया है।

2.1 सामान्य संकेतन

मान लीजिए हमारे पास एक अभारित (unweighted), अनिर्देशित (undirected) ग्राफ G(V,E) है जिसमें n=|V|, m=|E| और संलग्न आव्यूह (adjacency-matrix) $A = (a_{uv})_{n\times n}$ है। यहाँ $a_{uv} = 1$, जब शीर्ष, u और v, परस्पर संलग्न हैं अन्यथा $a_{uv} = 0$ है। किसी समुदाय C की आंतरिक और बाहरी कोटि क्रमशः इस प्रकार हैं: $d^{int}(C) = \sum_{u,v\in C} a_{uv}$, और $d^{ext}(C) = \sum_{u\in C, v\notin C} a_{uv}$, हैं। C की कुल कोटि $d(C) = d^{int}(C) + d^{ext}(C)$ है। विभाजन $\mathcal{P}$(partition) समुदाय संरचनाओं $\{C_1, C_2, \ldots, C_k\}$ के समूह का एक समुच्चय है जिसके लिए $\cup_{i=1}^{k} C_i = V(G)$, और सभी $i \neq j$ के लिए $C_i \cap C_j = \emptyset$ है। इसके अलावा, $\|C\|$ समुदाय C में कोर (edge) की संख्या को दर्शाता है, |C| समुदाय C में शीर्ष की संख्या को दर्शाता है।

2.2 गुणवत्ता मापदण्ड मूल्यांकन पर प्रारंभिक अध्ययन

साहित्य में मुख्य ध्यान उन विभाजनों या आवरणों को प्राप्त करने पर है जो केवल कुछ गुणवत्ता मापदण्डों के सापेक्ष में अनुकूलित हैं (Fortunato & Hric, 2016)। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि समस्या सिर्फ़ समुदाय शोधन कलन

विधियों की बनावट में है (P. Kumar & Dohare, 2021, 2022)। इसका संभावित कारण गुणवत्ता मापदण्डों की रचना के लिए प्रयोग की जाने वाली अलग-अलग अवधारणाएँ हो सकती हैं। गुणवत्ता मापदण्ड का पहला संपूर्ण विश्लेषण यांग और लेस्कोवेक (Yang & Leskovec, 2012) द्वारा किया गया था। इसमें 13 गुणवत्ता मापदण्ड शामिल थे जिन्हें चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया : श्रेणी-I में अधिकतम-ODF, औसत-ODF, फ्लेक-ODF (Flake et al., 2002), चालकता और सामान्यीकृत-काट (normalised-cut) (Shi & Malik, 2000) शामिल हैं। श्रेणी-II में TPR, औसत-कोटि (avg-degree), आंतरिक-कोर (edges-inside), FOMD और आंतरिक-घनत्व (internal-density) (Radicchi et al., 2004) शामिल हैं। श्रेणी-III में विस्तार (expansion) और काट-अनुपात (cut-ratio) हैं। श्रेणी-IV में केवल प्रतिरूपकता (modularity) (Newman & Girvan, 2004) शामिल है। इसके अलावा, चार समंजन मापदण्डों (goodness-metrics) – पृथक्करण, घनत्व, संसंजकता (cohesion) और गुच्छन गुणांक के सापेक्ष श्रेणी की गणना के लिए चारों श्रेणियों में से प्रत्येक से एक या दो गुणवत्ता मापदण्ड चुने गए। परिणामस्वरूप, TPR को घनत्व, संसंजकता और गुच्छन के सापेक्ष अच्छी श्रेणी मिली, जबकि चालकता को केवल पृथक्करण के सापेक्ष में अच्छी श्रेणी मिली।

2.3 असंयुक्त और अतिव्यापी समुदायों पर आधारित मापदण्ड

- **न्यूमन-गिर्वन प्रतिरूपकता:** न्यूमन और गिर्वन (2006) ने प्रतिरूपकता की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसमें "शून्य मॉडल" का प्रयोग किया गया, जो एक समुदाय संरचना विहीन जालक्रम है। प्रतिरूपकता एक सामान्य और व्यापक रूप से प्रयुक्त सूत्र है। इसकी कई कमियाँ हैं, जैसे कि विभेदन सीमा समस्या (Fortunato & Barthelemiy, 2007) और विभाजन अपभ्रष्टता (degeneracy of the solution) (Good et al., 2010)। इसे इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

$$Q_{NG}(\mathcal{P}) = \frac{1}{m}\sum_{C\in\mathcal{P}}\left[\|C\| - \frac{(2\,\|C\| + d^{int}(C))^2}{4m}\right] \qquad (1)$$

- **प्रतिरूपकता-घनत्व:** इसका उद्देश्य विभेदन प्राचल (resolution parameter) λ∈[0,1] का प्रयोग करके प्रतिरूपकता में विभेदन सीमा समस्या को समाप्त करना है। Q_MD (Zhang et al., 2010) का उच्च मान बताता है कि विभाजन अधिक सटीक है। गणितीय रूप से इसे इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

$$Q_{MD}(\mathcal{P}) = \sum_{C\in\mathcal{P}}\frac{1}{|C|}\left(2\lambda d^{int}(C) - 2(1-\lambda)d^{ext}(C)\right) \qquad (2)$$

- **Z-प्रतिरूपकता:** यह पारंपरिक प्रतिरूपकता का एक प्रकार है जिसे विभेदन प्रतिबंध को दूर करने के लिए प्रस्तावित किया गया है (Miyauchi & Kawase, 2016)। यह निम्न प्रकार से परिभाषित है:

$$Q_Z(\mathcal{P}) = \frac{\left[\sum_{C\in\mathcal{P}}\frac{\|C\|}{m} - \sum_{C\in\mathcal{P}}\left(\frac{d(C)}{2m}\right)^2\right]}{\sqrt{\sum_{C\in\mathcal{P}}\left(\frac{d(C)}{2m}\right)^2\left(1-\sum_{C\in\mathcal{P}}\left(\frac{d(C)}{2m}\right)^2\right)}} \qquad (3)$$

- **भारित अतिव्यापी प्रतिरूपकता:** यह अतिव्यापी सदस्यता, समुदायों की संख्या और उनकी आंतरिक कोटियों पर निर्भर करता है। इसकी ऊपरी सीमा $Q_{wo} = (1 - 1/|\mathcal{K}|)$ है, जबकि निम्न सीमा 0 है। अन्य मापदण्डों की तुलना में Q_{wo} अच्छे निष्कर्ष देता है**,** अपने सरल रूप और प्रभावशाली परिणाम के कारण यह तेजी से महत्त्व प्राप्त कर रहा है (P. Kumar & Dohare, 2019)। Q_{wo} को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

$$Q_{wo} = \frac{1}{|\mathcal{K}|}\sum_{C\in\mathcal{K}}\left(1-\frac{\sum_{v\in C}|m_v|}{|C||\mathcal{K}|}\right)\frac{d^{int}(C)}{d(C)} \qquad (4)$$

यहाँ पर G(V,E) में समुदायों की संख्या |K| है**,** और $|m_v|$, v की सदस्यता फलन की गणन संख्या है जिसे उन समुदायों की संख्या के रूप में परिभाषित किया गया है जिनमें शीर्ष v स्थित है। इसमें कुछ कमियाँ भी हैं**,** जैसे - असंबद्ध समुदायों के लिए उच्च मान देना**,** वलन/गुट (ring/clique) के एक दूसरे के साथ अधिक अतिव्यापन होने पर अच्छे परिणाम देना और अपभ्रष्टता (degeneracy) ।

- **आंतरिक कोर घनत्व:** यह किसी समुदाय के कोरों की संख्या और सभी शीर्षों के बीच कुल संभावित कोरों की संख्या के अनुपात को दर्शाता है (Radicchi et al., 2004)। गणितीय रूप में**,** इसे इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

$$IED(C) = \frac{2\|C\|}{|C|(|C|-1)} \qquad (5)$$

- **मापक्रमित घनत्व (Scaled Density):** SD एक सामान्यीकृत घनत्व है जिसे आंतरिक समुदाय कोटि और समुदाय घनत्व के अनुपात के रूप में परिभाषित किया जाता है:

$$SD(C) = \frac{2\|C\|}{|C|-1} \qquad (6)$$

2.4 समानता मापदण्ड

समुदाय शोधन, समानता मापदण्ड पर निर्भर करता है ताकि यह मूल्यांकन किया जा सके कि प्राप्त किए गए समुदाय, वास्तविक समुदायों के साथ कितने मेल खाते हैं। अतिव्यापी शीर्षों और आकार भिन्नताओं को ध्यान में

रखते हुए समुदाय संरचनाओं की तुलना करने के लिए विभिन्न मापदण्ड तैयार किए गए हैं। सामान्य समानता मापदण्डों में अतिव्यापी सामान्यीकृत परस्पर सूचकांक (ONMI), ONMI-LFK (Lancichinetti et al., 2009), ONMI-MGH (McDaid et al., 2013), और ओमेगा इंडेक्स (Murray et al., 2012) हैं, जो अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाते हैं।

3. समुदाय संरचना मूल्यांकन मापदण्डों का विश्लेषण

ऊपर चर्चा किए गए गुणवत्ता मापदण्डों का तुलनात्मक विश्लेषण करने के लिए, हमने 66 शीर्षों वाले एक कृत्रिम जालक्रम का चयन किया है, जो 10 शीर्षों के 6 गुटों में विभाजित हैं, और 6 एकल-शीर्ष (single-vertex) एक वलयाकार तरीके से इस प्रकार व्यवस्थित हैं कि प्रत्येक एकल-शीर्ष अपने आस-पास के दो गुटों से संलग्न है। चित्र 1, जालक्रम में दस अलग-अलग समुदाय संरचनाओं $C_1, C_2, ..., C_{10}$ को दर्शाता है। हमने समुदाय संरचनाओं को उनके गुणधर्मों के अनुसार क्रमबद्ध किया है।

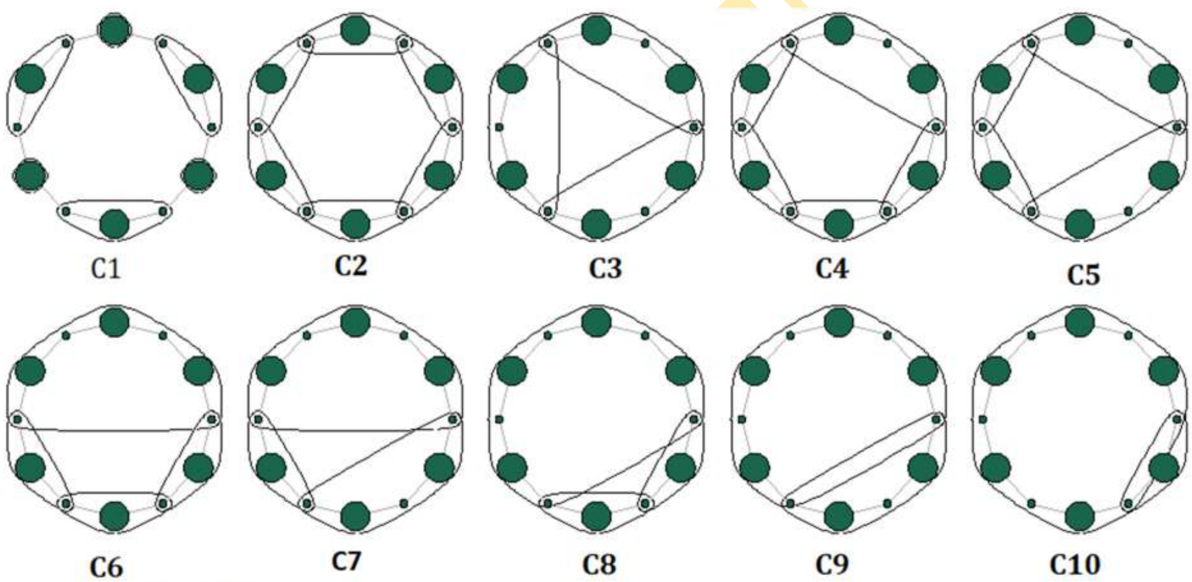

चित्र 1: वलय जालक्रम में 10 विभिन्न समुदाय संरचनाएं

तालिका-1 में Python भाषा के CDlib पैकेज (Rossetti et al., 2019) का प्रयोग करके प्रत्येक समुदाय के लिए अनुच्छेद-2.3 में बताए गए गुणवत्ता मापदण्डों के मान दिखाए गए हैं। हमने देखा कि समुदाय संरचना C_1 ने सभी मूल्यांकन मापदण्डों में उच्च मान लिया। चूँकि प्रत्येक गुणवत्ता मापदण्ड दस अलग-अलग समुदाय संरचनाओं के साथ एक ही जालक्रम पर मान (value) लेता है, इसलिए हम उनकी समानता निर्धारित करने के लिए उनके बीच

सहसंबंध गुणांक (correlation-coefficient) की गणना कर सकते हैं। इससे हमें गुणवत्ता मापदण्डों को वर्गीकृत करने और समुदाय संरचनाओं को श्रेणीबद्ध करने में मदद मिलेगी।

तालिका-1: समुदायों के लिए विभिन्न मूल्यांकन मापदण्डों के सामान्यीकृत-मान

मापदण्ड	C_1	C_2	C_3	C_4	C_5	C_6	C_7	C_8	C_9	C_{10}
Q_{NG}	0.81	0.81	0.66	0.76	0.71	0.66	0.60	0.49	0.44	0.28
Q_{MD}	0.98	0.92	0.49	0.78	0.63	0.61	0.48	0.47	0.33	0.32
Q_Z	0.72	0.73	0.45	0.61	0.53	0.46	0.41	0.33	0.28	0.2
Q_{wo}	0.82	0.79	0.63	0.75	0.71	0.70	0.61	0.61	0.45	0.43
IED	0.86	0.71	0.37	0.64	0.54	0.60	0.44	0.54	0.28	0.43
SD	0.86	001	001	0.90	0.76	0.84	0.62	0.75	0.75	0.60

तालिका-2, अनुच्छेद-2.3 में सूचीबद्ध गुणवत्ता मापदण्डों के लिए सहसंबंध गुणांक प्रदर्शित करती है। किन्ही भी दो मापदण्डों X और Y के बीच सहसंबंध गुणांक $\rho(X,Y)$, -1 से 1 तक विचरित हो सकता है, जहाँ $\rho(X,Y) = 1$ का अर्थ है कि X और Y दृढ़ता से सहसंबंधित हैं। दूसरी ओर, $\rho(X,Y) = -1$ का अर्थ है कि X और Y दृढ़ता से नकारात्मक सहसंबंधित हैं। यदि हम सहसंबंध गुणांक के लिए सीमा 0.50 लेते हैं तो मापदण्ड Q_{NG}, Q_{MD}, Q_Z, Q_{wo}, IED, SD परस्पर सहसंबंधित होते हैं, और इस प्रकार एक गुट बनाते हैं।

तालिका 2: दस समुदायों के लिए विभिन्न मूल्यांकन मापदण्डों का सहसंबंध गुणांक

	Q_{NG}	Q_{MD}	Q_Z	Q_{wo}	*IED*	SD
Q_{NG}	1	0.90	0.96	0.96	0.71	0.72
Q_{MD}	*	1	0.98	0.94	0.92	0.62
Q_Z	*	*	1	0.95	0.82	0.70
Q_{wo}	*	*	*	1	0.86	0.65
IED	*	*	*	*	1	0.40
SD	*	*	*	*	*	1

शब्दावली आयोग CSTT

हम प्रत्येक समुदाय के लिए मापदण्डों के औसत मान की गणना करते हैं और उनके मान के आधार पर उन्हें श्रेणीबद्ध (ranking) करते हैं। यह तालिका-3 में दिखाया गया है, जहाँ I (उच्चतम) से X (निम्नतम) तक श्रेणी दी गई हैं। स्पष्ट है कि C_1 को उच्चतम श्रेणी और C_{10} को निम्नतम श्रेणी प्राप्त है।

तालिका 3: मापदण्डों के औसत मान के सापेक्ष समुदायों की क्रमबद्धता

श्रेणी	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X
समुदाय	C_1	C_2	C_4	C_5	C_6	C_3	C_8	C_7	C_9	C_{10}
औसत मान	0.84	0.83	0.74	0.65	0.64	0.60	0.531	0.53	0.42	0.38

तालिका-4 में तालिका-1 से निकाले गए मापदण्ड मानों को तालिका-3 में दिए गए श्रेणीबद्ध समुदायों के क्रम में स्तंभवार व्यवस्थित किया गया है। इस तालिका में, गुणवत्ता मापदण्डों के संगत सभी स्तंभ, स्तंभ-। में दी गई समुदाय संरचनाओं की श्रेणीकरण के सापेक्ष अवरोही क्रम का पालन नहीं कर रहे हैं। इसीलिए गुणवत्ता मापदण्डों के अक्रम का मूल्यांकन करने के लिए, हम एक अक्रम प्रचाल (disorder parameter), D_S को निम्न प्रकार से परिभाषित कर रहे हैं-

तालिका 4: गुणवत्ता मापदण्ड मान की समुदाय संरचना श्रेणी

समुदाय	Q_{NG}	Q_{MD}	Q_Z	Q_{wo}	IED	SD
C_1	0.81	0.98	0.72	0.82	0.86	0.86
C_2	0.81	0.92	0.73	0.79	0.71	1
C_4	0.76	0.78	0.61	0.75	0.64	0.90
C_5	0.71	0.63	0.53	0.71	0.54	0.76
C_6	0.65	0.61	0.46	0.70	0.60	0.84
C_3	0.66	0.49	0.45	0.63	1	0.37
C_8	0.49	0.47	0.33	0.62	0.54	0.75
C_7	0.60	0.48	0.41	0.61	0.44	0.62
C_9	0.44	0.33	0.29	0.45	0.28	0.75
C_{10}	0.27	0.32	0.20	0.43	0.43	0.60
D_S	0.93	0.98	0.96	1	0.82	0.80

शब्दावली आयोग CSTT

$$D_S = \frac{\text{अवरोही क्रम में क्रमित युग्मों की संख्या}}{\binom{10}{2}}$$

D_S का मान तालिका-4 की अंतिम पंक्ति में गणना करके दर्ज किया जाता है।

तालिका 5, D_S मानों के आधार पर सभी 6 गुणवत्ता मापदण्डों को श्रेणीबद्ध करती है। यह व्यापक विश्लेषण समुदाय शोधन कलन विधियों के परीक्षण के लिए मूल्यांकन मापदण्ड की प्रभावकारिता के बारे में जानकारी प्रदान करता है। विशेष रूप से, परिणाम इस संदर्भ में दूसरों की तुलना में कुछ मापदण्डों की उपयुक्तता को दर्शाते हैं। समग्र विश्लेषण से संकेत मिलता है कि समुदाय शोधन कलन विधियों का मूल्यांकन करने के लिए Q_{wo} मापदण्ड विशेष रूप से प्रभावी है।

तालिका 5: मूल्यांकल मापदण्डों की श्रेणी

श्रेणी	मापदण्ड	औसत मान
I	Q_{wo}	1
II	Q_{MD}	0.98
III	Q_{Z}	0.96
IV	Q_{NG}	0.93
V	IED	0.82
VI	SD	0.80

इस तरह के व्यापक मूल्यांकन, उचित मूल्यांकन पद्धतियों के चयन का मार्गदर्शन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे जालक्रम विश्लेषण में समुदाय शोधन कलन विधियों की प्रभावकारिता और विश्वसनीयता बढ़ जाती है।

4. निष्कर्ष

इस अध्ययन में, हमनें एक कृत्रिम जालक्रम की 10 विभिन्न समुदाय संरचनाओं पर गुणवत्ता मापदण्ड के प्रदर्शन का विश्लेषण किया। हमनें सबसे पहले समुदायों को चयनित गुणवत्ता मापदण्डों पर उनके मान के क्रम में श्रेणीबद्ध किया। फिर हमनें विकार प्राचल (D_S) का प्रयोग करके गुणवत्ता मापदण्डों को श्रेणीबद्ध किया। यह श्रेणी शोधकर्ताओं को समुदाय शोधन कलन विधियों को मान्य करने के लिए उपयुक्त मापदण्ड चुनने में मदद करेगी। भविष्य में, हम जालक्रम विश्लेषण से संबंधित कई महत्वपूर्ण समस्याओं को संबोधित करना चाहते हैं। हमारा मुख्य उद्देश्य एक नया मूल्यांकन मापदण्ड बनाना है जो उच्च श्रेणी वाले मापदण्ड (Q_{wo}) से बेहतर प्रदर्शन करे और साथ ही इसकी विषमताओं को दूर करे।

शब्दावली आयोग CSTT

आभार

अंजलि कुमारी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC), भारत सरकार को कनिष्ठ अनुसंधान अध्येतावृत्ति [संदर्भ संख्या: 231610055873] प्रदान करने के लिए धन्यवाद देती हूँ।

[1]विज्ञान विद्यापीठ, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-110068,भारत
पत्राचार लेखक (Corresponding author) – pawankumar@ignou.ac.in

संदर्भ

1. Flake, G. W., Lawrence, S., Giles, C. L., & Coetzee, F. M. (2002). Self-organization and identification of Web communities. *Computer*, *35*(3), 66–70. https://doi.org/10.1109/2.989932

2. Fortunato, S. (2010). Community detection in graphs. *Physics Reports*, *486*(3), 75–174. https://doi.org/10.1016/j.physrep.2009.11.002

3. Fortunato, S., & Barthelemiy, M. (2007). Resolution limit in community detection. *Proc. Natl. Acad. Sci.*, *104*, 36–41. https://doi.org/10.1073/pnas.0605965104

4. Fortunato, S., & Hric, D. (2016). Community detection in networks: A user guide. *Physics Reports*, *659*, 1–44. https://doi.org/10.1016/j.physrep.2016.09.002

5. Good, B. H., de Montjoye, Y.-A., & Clauset, A. (2010). Performance of modularity maximization in practical contexts. *Physical Review E*, *81*(4), 046106. https://doi.org/10.1103/PhysRevE.81.046106

6. Kumar, P., & Dohare, R. (2019). A neighborhood proximity based algorithm for overlapping community structure detection in weighted networks. *Frontiers of Computer Science*, *13*(6), Article 6. https://doi.org/10.1007/s11704-019-8098-0

7. Kumar, P., & Dohare, R. (2021). Formalising and Detecting Community Structures in Real World Complex Networks. *Journal of Systems Science and Complexity*, *34*(1), 180–205. https://doi.org/10.1007/s11424-020-9252-3

8. Kumar, P., & Dohare, R. (2022). An interaction-based method for detecting overlapping community structure in real-world networks. *International Journal of Data Science and Analytics*, *14*(1), 27–44. https://doi.org/10.1007/s41060-022-00314-3

9. Lancichinetti, A., Fortunato, S., & Kertész, J. (2009). Detecting the overlapping and hierarchical community structure in complex networks. *New Journal of Physics*, *11*(3), 033015. https://doi.org/10.1088/1367-2630/11/3/033015

10. Leskovec, J., Lang, K. J., Dasgupta, A., & Mahoney, M. W. (2009). Community Structure in Large Networks: Natural Cluster Sizes and the Absence of Large Well-Defined Clusters. *Internet Mathematics*, *6*(1), 29–123. https://doi.org/10.1080/15427951.2009.10129177

11. McDaid, A. F., Greene, D., & Hurley, N. (2013). *Normalized Mutual Information to evaluate overlapping community finding algorithms* (No. arXiv:1110.2515). arXiv. https://doi.org/10.48550/arXiv.1110.2515

12. Miyauchi, A., & Kawase, Y. (2016). Z-Score-Based Modularity for Community Detection in Networks. *PLOS ONE*, *11*(1), e0147805. https://doi.org/10.1371/journal.pone.0147805

13. Murray, G., Carenini, G., & Ng, R. (2012). Using the Omega Index for Evaluating Abstractive Community Detection. In J. M. Conroy, H. T. Dang, A. Nenkova, & K. Owczarzak (Eds.), *Proceedings of Workshop on Evaluation Metrics and System Comparison for Automatic Summarization* (pp. 10–18). Association for Computational Linguistics. https://aclanthology.org/W12-2602

14. Newman, M. E. J. (2006). Modularity and community structure in networks. *Proceedings of the National Academy of Sciences*, *103*(23), 8577–8582. https://doi.org/10.1073/pnas.0601602103

15. Newman, M. E. J., & Girvan, M. (2004). Finding and evaluating community structure in networks. *Physical Review E*, *69*(2), 026113. https://doi.org/10.1103/PhysRevE.69.026113

16. Radicchi, F., Castellano, C., Cecconi, F., Loreto, V., & Parisi, D. (2004). Defining and identifying communities in networks. *PNAS*, *101*, 2658–2663. https://doi.org/10.1073/pnas.0400054101

17. Rossetti, G., Milli, L., & Cazabet, R. (2019). CDLIB: A python library to extract, compare and evaluate communities from complex networks. *Applied Network Science*, *4*(1), 52. https://doi.org/10.1007/s41109-019-0165-9

18. Shi, J., & Malik, J. (2000). Normalized cuts and image segmentation. *IEEE Transactions on Pattern Analysis and Machine Intelligence*, *22*(8). https://doi.org/10.1109/34.868688

19. Yang, J., & Leskovec, J. (2012). Defining and evaluating network communities based on ground-truth. *Proceedings of the ACM SIGKDD Workshop on Mining Data Semantics*, 1–8. https://doi.org/10.1145/2350190.2350193

20. Zhang, S., Ning, X.-M., Ding, C., & Zhang, X.-S. (2010). Determining modular organization of protein interaction networks by maximizing modularity density. *BMC Systems Biology*, *4*(2), S10. https://doi.org/10.1186/1752-0509-4-S2-S10

शब्दावली आयोग CSTT

3. एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव के व्यवहार का अध्ययन

[1*]अमृता त्रिपुरे, [1]अमृत शेन्डे, [2]संतोष कुमार मिश्रा

सार: एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह के अध्ययन से प्राप्त परिणाम, प्रयोगात्मक और वास्तविक परिस्थितियों में निकटता को दर्शाते हैं। एकल प्रावस्था वाले नैनोद्रव में समरूप गुणधर्मों पर विचार किया जाता है, जबकि द्वि-प्रावस्था वाले नैनोद्रव में इसे विषम माना जाता है। द्वि-प्रावस्था अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि विश्लेषण के दौरान नैनोद्रव का गुणधर्म स्थिर नहीं रहता तथा इसमें कणों का बैठना और संकलन भी शामिल होता है। नैनोद्रव के ताप-भौतिकीय गुणधर्म भी बदलते हैं, इसलिए यूलेरियन-यूलेरियन द्वि-प्रावस्था मॉडल तथा मिश्रण मॉडल का उपयोग किया जाता है। मिश्रण मॉडल गणना समय और श्रम के संदर्भ में अधिक कुशल है। वर्तमान अध्ययन में, एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था की तुलना करने के लिए, नैनोद्रव को 4000 से 20000 रेनॉल्ड्स संख्या की सीमा में नलिका में प्रवाहित किया गया, जिसमें नैनोकणों का आयतन अंश 0.5% से 4% तक था। निम्न आयतन अंश 0.5% और 1% पर, एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह के लिए औसत नुसल्ट संख्या के मान लगभग समान होते हैं। उच्च आयतन अंश 2% और 4% पर, एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था प्रवाह के बीच औसत नुसल्ट संख्या में अधिक अंतर होता है। स्थिर आयतन अंश के लिए, औसत नुसल्ट संख्या पर रेनॉल्ड्स संख्या का भी प्रभाव पड़ता है। नलिका की स्थिर अवस्था में नैनोकणों का समुच्चयन (aggregation) होने लगता है, जिससे ऊष्मा अंतरण में कमी आती है। इस संकलन को कंपन द्वारा रोका जा सकता है, जिससे ऊष्मा अंतरण में सुधार किया जा सकता है। समुच्चयन के विलंबन को बढ़ाने के लिए ज्यामितीय संशोधन भी किए जा सकते हैं। केनिक्स मिश्रण यंत्र और ट्विस्टेड टेप इन्सर्ट्स ने बेहतर ऊष्मा अंतरण और विलंबन दर्शाया है, जो वास्तविक अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त हैं। ज्यामिति संशोधन और कंपन के प्रयोग ने अन्य किसी भी तकनीक की तुलना में श्रेष्ठ परिणाम दिखाए हैं।

मुख्य शब्द: एकल प्रावस्था (single phase) , द्वि-प्रावस्था (double phase), नैनोद्रव (nano fluid)

1. प्रस्तावना

विषम व्यवहार वाले द्रवों की ऊष्मा चालकता समरूपी व्यवहार वाले द्रवों की तुलना में अधिक होती है। इस गुण के कारण हमेशा उच्च चालकता वाले कणों के साथ द्रवों का उपयोग किया जाता है [1]। नैनोकणों की खोज से पहले मिलीमीटर आकार के कणों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता था। वर्ष 1956 में वैज्ञानिकों ने नैनोमीटर आकार के कणों वाले द्रवों का एक बहुत ही अनोखा व्यवहार खोजा। इन कणों का माप 1-100 नैनोमीटर था और

इन्हें कुछ आधार द्रवों के साथ उपयोग किया गया; जिसे उन्होंने नैनोद्रव नाम दिया [2]। ये नैनोकण मिलीमीटर और माइक्रोमीटर आकार के कणों से छोटे थे। प्रयोगात्मक रूप से नैनो पदार्थों का उपयोग करते हुए एक उच्च ऊष्मा अंतरण दर पाई गई [3]। विभिन्न उपयोगों के लिए नैनोकणों का चयन आधार द्रवों के प्रकार पर भी निर्भर करता है। कुछ प्रमुख आधार द्रव पानी, एथनॉल, एथिलीन ग्लाइकॉल, तेल, प्रशीतक आदि हैं [4] [3]। Al_2O_3 और CuO नैनोकणों के साथ पानी को आधार द्रव के रूप में उपयोग किया जाता है। कार्बन नैनोट्यूब्स, एथिलीन ग्लाइकॉल के साथ अधिक संगत होते हैं। नैनोद्रव गैर-न्यूटोनियन द्रवों की श्रेणी में आते हैं, विशेष रूप से शीयर थिनिंग गैर-न्यूटोनियन द्रवों में [5] [6]। इन द्रवों की श्यानता (viscocity) उन पर लागू होने वाले अपरूपण (shear) के साथ घटती है। ये द्रव काल अनाश्रित प्रकृति के होते हैं।

न्यूटोनियन द्रवों की तुलना में अपरूप विरलन द्रवों (shear thinning liquids) के लिए वक्र को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

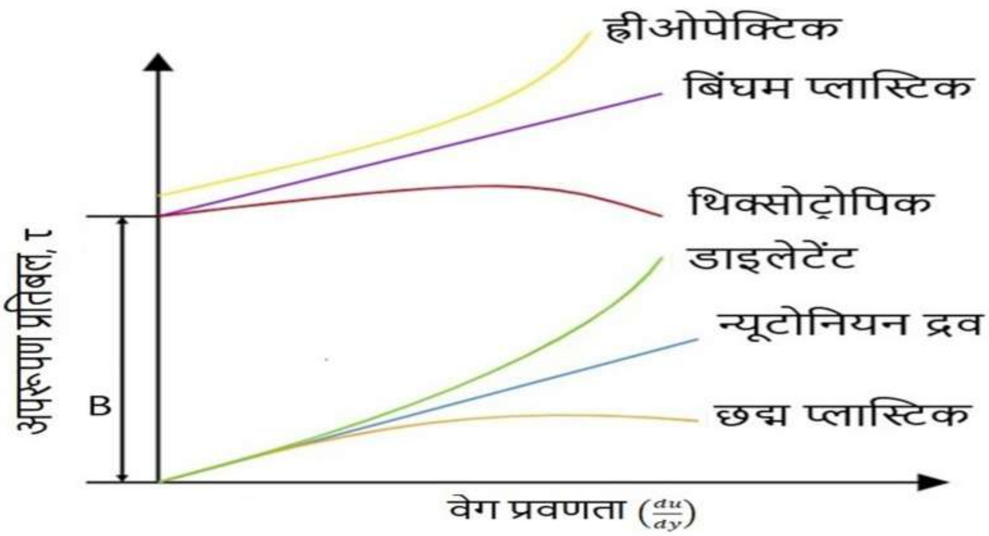

चित्र 1. न्यूटोनियन और गैर -न्यूटोनियन तरल पदार्थ

गैर-न्यूटोनियन द्रव, न्यूटन के श्यानता के नियम का पालन नहीं करते हैं और इसे गणितीय रूप से इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

$$\tau = A\left(\frac{du}{dy}\right)^n + B \qquad (1)$$

जहां, $\frac{du}{dy}$ वेग प्रवणता है, **A** संगति गुणांक और B न्यूनतम क्षेत्रगत तनाव हैं जो प्रवाह की स्थितियों पर निर्भर करते हैं, और **n =** प्रवाह सूचक **(**फ्लो इंडेक्स**)** है।

अपरूप विरलन द्रव को छद्म-प्लास्टिक द्रव भी कहा जाता है। इस द्रव का प्रवाह विभिन्न पैटर्न जैसे नली प्रवाह, समतल प्लेट प्रवाह आदि में देखा जा सकता है। नली प्रवाह और इसके मापदंड, द्रव यांत्रिकी का एक प्रमुख भाग है, जिनका विभिन्न प्रवाह व्यवहार और उनके अध्ययन में उपयोग किया जाता है। नली प्रवाह के लिए विभिन्न मापदंडों पर विचार किया गया है, जैसे: गतिक श्यानता, घनत्व, नलिका अनुप्रस्थ काट का आकार, वेग आदि।

नलिका के माध्यम से प्रवाह को वर्गीकृत करने के लिए रेनॉल्ड्स संख्या और नुसल्ट संख्या बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

रेनॉल्ड्स संख्या इस प्रकार दी जाती है:

$$Re = \frac{\rho U D}{\mu} \qquad (2)$$

रिचर्डसन संख्या के न्यून मान के लिए, नैनोद्रव में एकल प्रावस्था की स्थिति में संतोषजनक परिणाम प्राप्त होते हैं। लेकिन जैसे-जैसे रिचर्डसन संख्या बढ़ती है, द्रव में कणों के बीच विषमता भी प्रवाह को प्रभावित करने लगती है, जिससे एकल प्रावस्था दृष्टिकोण के माध्यम से परिणामों के पूर्वानुमान में असमानता होती है। इस समस्या को दूर करने के लिए, द्वि-प्रावस्था मॉडल अपनाए गए हैं जो अधिक सटीक परिणाम प्रदान करते हैं। रिचर्डसन संख्या को गणितीय रूप से इस प्रकार व्यक्त किया जाता है:

$$Ri = \frac{Gr}{Re^2} \qquad (3)$$

रिचर्डसन संख्या की वृद्धि भी उत्प्लावकता का संकेत देती है, जिससे प्रवाह की गतिशीलता बढ़ती है और यह असमरूपता की ओर अग्रसर होता है [6]। एल्यूमिनियम ऑक्साइड जल नैनोद्रव को मिनी-चैनल ऊष्मा अभिगम (heat sink) में प्रवाहित किया जाता है, जिसका ऊष्मीय निष्पादन चार विभिन्न तकनीक यथा 1. एकल प्रावस्था मॉडल 2. तरल का आयतन मॉडल (VOF) 3. मिश्रण मॉडल 4. द्वि-प्रावस्था मॉडल के माध्यम से अध्ययन किया गया। द्वि-प्रावस्था मॉडल में प्रयोग और परिणामों के बीच संयुक्त अनुपात पाया गया, जबकि मिश्रण मॉडल, कम सी पी यू शक्ति खपत और गणना समय के संदर्भ में सबसे उपयुक्त मॉडल था। यह अवलोकन 0.5%, 1% और 6% आयतन अंश तथा $130 < Re < 1600$ की सीमा में देखा गया [7]। ऊष्मा अंतरण के लिए केंद्रीय प्रक्रमण इकाई, सी एफ डी मॉडलिंग की शर्तें मिश्रण मॉडल के प्रायोगिक परिणामों से मेल खाती हैं। विकर्षण प्रावस्था मॉडल सहित मिश्रण मॉडल, ऊष्मीय संचालन और दबाव में गिरावट की स्थिति में प्रायोगिक परिणामों को सटीक रूप से प्रदर्शित करता है। जैसे ही मॉडल में गुच्छन प्रभाव, ब्राउनियन गति और थर्मोफोरेसिस को शामिल किया जाता है, इसे द्विचरणीय रूप से अंकित किया जाना चाहिए। ज़िरकोनिया, एल्यूमिना और सिलिका नैनोकणों के 2.76% तक आयतन अंश के लिए, एकल प्रावस्था मॉडल सटीकता की कमी दिखाता है। इस स्थिति में, डी पी ऍम मिश्रण मॉडल प्रायोगिक परिणामों से सर्वाधिक मेल खाता है [8]। द्रवगतिकीय व्यवहार के लिए एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था मॉडल समान

परिणाम दिखाते हैं, लेकिन उष्मीय व्यवहार में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे जाते हैं। एल्यूमिनियम ऑक्साइड जल नैनोद्रव के साथ, 0-3% आयतन अंश और $1050 < Re < 1600$ की सीमा में, एकल और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव में उष्मीय व्यवहार में व्यापक अंतर पाया गया [9]। औसत नुसल्ट संख्या, मिश्रण मॉडल के लिए तरंगित प्रवाह में द्वि-प्रावस्था मॉडल की तुलना में बेहतर परिणाम दिखाती है। हालांकि, एल्यूमिनियम ऑक्साइड-जल नैनोद्रव में सान्द्रता ताप संचार में बहुत अधिक अंतर नहीं पाया गया। इस प्रकार, यूलेरियन द्वि-प्रावस्था मॉडल, मिश्रण मॉडल के काफी करीब होते हैं और प्रायोगिक परिणामों के साथ अच्छी संगति दिखाते हैं [10]।

2. अभिनियन्त्रक समीकरण

नैनोद्रव ठोस और तरल कणों से बने होते हैं। अतः ध्यान देने योग्य होता है कि इन द्रवों का व्यवहार एकल समरूप द्रव के व्यवहार से थोड़ा अलग होगा। इसलिए, ऐसी गुणधर्मों की गणना करने के लिए तरल अवस्था और ठोस अवस्था दोनों के गुणधर्मों को लिया जाता है। नैनोद्रव का विश्लेषण करने के लिए जिन मुख्य समीकरणों का उपयोग किया जा सकता है, वे नीचे उल्लेखित हैं:

सततता समीकरण

$$\vec{\nabla} \cdot \rho_m \vec{V}_m = 0 \qquad (4)$$

$$\vec{V}_m = \frac{\sum_{k=1}^{n} \phi_k \rho_k \vec{V}_k}{\rho_\mathrm{m}} \qquad (5)$$

$$\rho_m = \sum_{k=1}^{n} \phi_k \rho_k \qquad (6)$$

जहां, ρ_m मिश्रण का घनत्व, ϕ_k बिखरे हुए नैनोकणों का आयतन अंश, k मिश्रण की प्रावस्था और $\vec{V}_m$ द्रव्यमान औसत वेग है।

संवेग का समीकरण

$$\vec{\nabla} \cdot (\rho_\mathrm{m} \vec{V}_\mathrm{m} \vec{V}_\mathrm{m}) = -\vec{\nabla} P + \vec{\nabla}. [\mu_\mathrm{m} (\vec{\nabla} \vec{V}_\mathrm{m} + \vec{\nabla} \vec{V}_\mathrm{m}^\mathrm{T})] + \rho_\mathrm{m} \vec{g} + \vec{F} + \vec{\nabla}. \left(\sum_{k=1}^{n} \phi_k \rho_k \vec{V}_{\mathrm{dr},k} \vec{V}_{\mathrm{dr},k}\right) \qquad (7)$$

जहां, $\vec{F}$ आयतन वस्तु बल, $\vec{V}_{\mathrm{dr},k}$ द्वि-प्रावस्था प्रवाह वेग और μ_m मिश्रण की श्यानता है

ऊर्जा का समीकरण

$$\vec{\nabla} \cdot \left[\sum_{k=1}^{n} \left(\phi_k \vec{V}_k \left(\rho_k \left(h_k + V_k^2/2\right)\right)\right)\right] = \vec{\nabla} \cdot (k_m \vec{\nabla} T) \qquad (8)$$

जहां h_k, प्रावस्था की एन्थैल्पी है।

शब्दावली आयोग CSTT

3. अनुसंधान विधि

3.1 सी एफ डी मॉडलिंग

सभी अनुकरण चरणों के लिए अभिकलनी तरल गतिकी (CFD) सॉफ़्टवेयर एनसिस (ANSYS) फ्लुएंट संस्करण 2020.**R**2 का उपयोग किया गया। ज्यामिति के निर्माण के लिए डिज़ाइन मॉडलर, जाल निर्माण के लिए एनसिस मेश, सी.एफ.डी अनुकरण और विश्लेषण के लिए फ्लुएंट, तथा परिणामों के संगणन के लिए सी.एफ.डी पोस्ट का उपयोग किया गया।

वेग-दबाव संयोजन के लिए युग्मित कलन विधि का उपयोग किया गया, और संवहन पदों को दूसरे क्रम के ऊर्ध्वगामी (upwind) योजना से विवर्णित किया गया। सततता, ऊर्जा और संवेग समीकरणों के लिए अभिसरण मापदंड 10^{-6} रखा गया। इसके अतिरिक्त, समस्या के सही ढंग से अभिसरित होने को सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक पुनरावृत्ति में वेग और ऊष्मा मान के द्रव्यमान-भारित औसत का अनुवीक्षण किया गया। सी एफ डी मॉडलिंग के लिए 11.7 मिमी व्यास और 770 मिमी लंबाई की नलिका का चयन किया गया है। कार्यशील तरल पदार्थ के रूप में Al_2O_3-जल नैनोद्रव को लिया गया तथा इसके ताप-भौतिकीय गुण [11] से लिए गए हैं।

तालिका 1. Al_2O_3-जल नैनोद्रव के तापभौतिकीय गुण (Sahin et al., 2013)

आयतनअंश (φ), (%)	ऊष्मीय चालकता (k_{nf}), (W/mK)	घनत्व (ρ_{nf}) (kg/m^3)	तापक्षमता (c_{pnf}) (J/kg K)	श्यानता (μ_{nf}) (kg/ms)
0.5	0.62178	1010.82	4114.61	0.0008797
1	0.63065	1025.24	4051.06	0.0009147
2	0.64864	1054.07	3929.17	0.0010650
4	0.68560	1111.74	3704.38	0.0016890

प्रयुक्त जाल में नोड्स की संख्या - 409920 और संगठित जाल संरचना का प्रकार निर्दिष्ट किया गया है। ज्यामिति के जाल निर्माण को चित्र (2) में और अनुप्रस्थ दृश्य को चित्र (3) में दिखाया गया है।

3.2 सीमांत शर्तें

तालिका 2

सीमा	शर्तें
प्रवेश	प्रवाह वेग
निकास	वायुमंडलीय–दाब
दीवार पर ताप प्रवाह	2000 W/m^2

शब्दावली आयोग CSTT

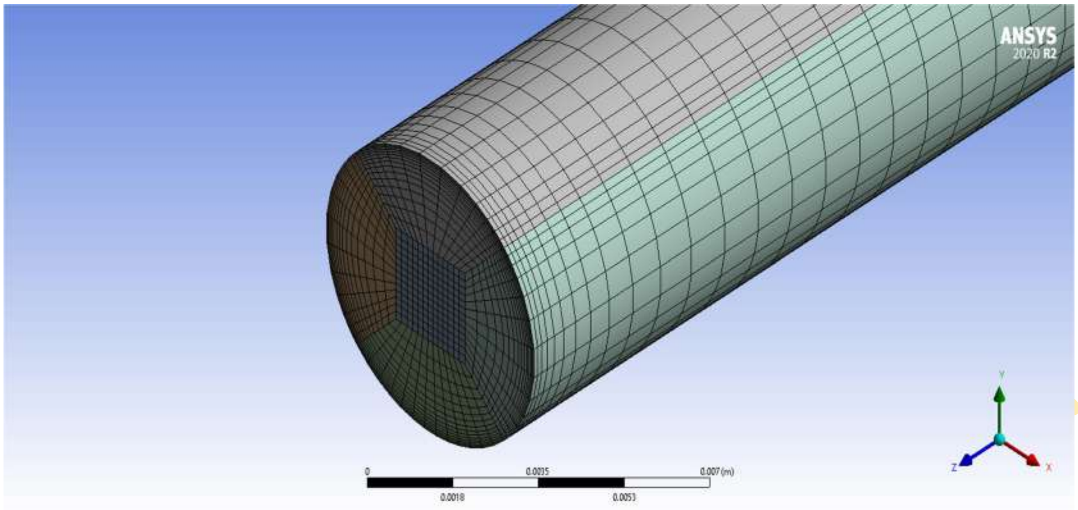

चित्र 2. नली का जाल

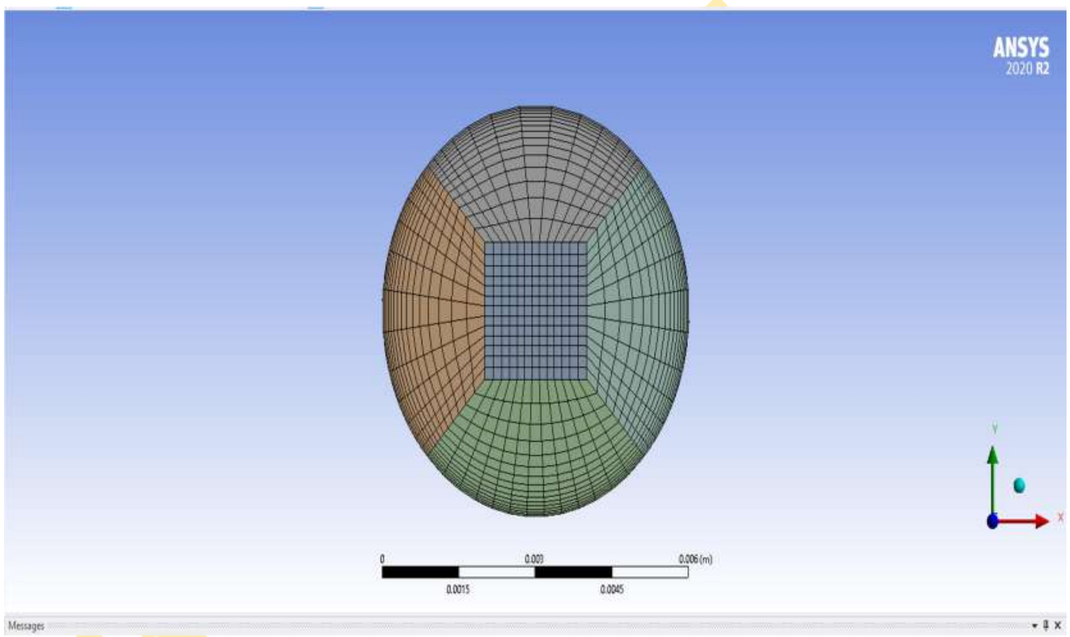

चित्र 3. नली के जाल का अनुप्रस्थ दृश्य

3.3 सत्यापन

प्राप्त परिणामों को प्रयोगात्मक परिणाम [11] के साथ सत्यापित किया गया ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सी.एफ.डी. मॉडलिंग सही और विश्वसनीय है। (चित्र 4.)

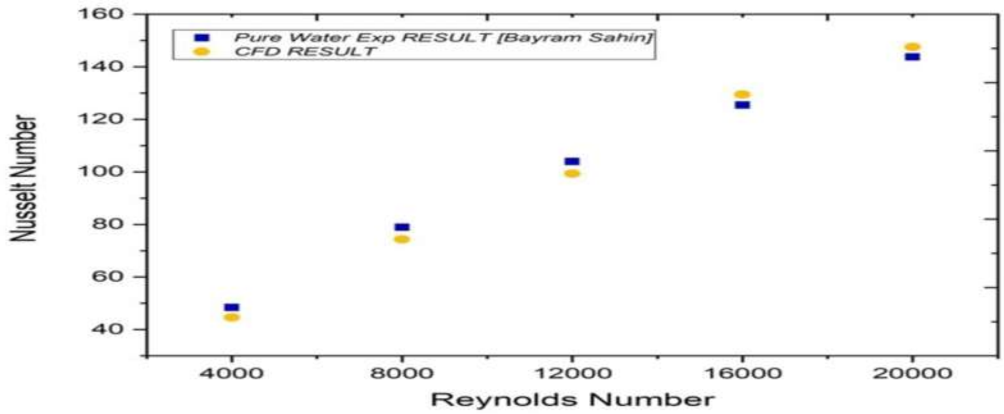

चित्र 4. सत्यापन वक्र

3.4 ग्रिड स्वतंत्रता परीक्षण

एनसिस आर-2020 के मेशिंग मॉड्यूल का उपयोग नैनोद्रव प्रवाह वाली नली के अभिकलनात्मक क्षेत्र पर संरचित जाल (स्ट्रक्चर्ड मेश) बनाने के लिए किया गया है, जैसा कि चित्र 2 में दर्शाया गया है। प्रवाह व्यवहार को सटीक रूप से हल करने के लिए, नली की दीवार के पास बहुत ही सूक्ष्म जाल आकार का उपयोग किया गया है। वर्तमान विश्लेषण के लिए निर्मित जाल संरचना में 409920 नोड्स शामिल हैं। ग्रिड स्वतंत्रता परीक्षण को रेनॉल्ड्स संख्या (Re) = 20,000 के लिए 317188 से 409920 नोड्स को छह चरणों में बदलकर किया गया। 409920 से अधिक जाल नोड्स की वृद्धि पर औसत नुसल्ट संख्या में 1% से भी कम का परिवर्तन पाया गया, जैसा कि तालिका 3 में दर्शाया गया है। इसलिए, 409920 नोड्स वाली जाल संरचना को ग्रिड स्वतंत्रता मानदंड के रूप में चुना गया है और इस शोध पत्र में जांचे गए मामलों के संख्यात्मक विश्लेषण के लिए उपयोग किया गया है।

तालिका 3

स. क्र.	नोड्स की संख्या	औसत नुसल्ट संख्या	त्रुटि %
1	317188	126.16	-
2	333882	134.60	6.27
3	351455	140.74	4.36
4	369952	144.86	2.84
5	389424	146.73	1.27
6	409920	147.51	0.53

4. परिणाम एवं चर्चा

4.1 एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह में आयतन अंश का नुसल्ट संख्या पर प्रभाव

औसत नुसल्ट संख्या का मान प्रवाही तरल के वेग और उसकी तापभौतिकीय गुणधर्मिता पर निर्भर करता है। नैनोकणों की कम मात्रा 0.5% और 1% के लिए, औसत नुसल्ट संख्या में समान रुझान देखने को मिलता है और एकल प्रावस्था नैनोद्रव, अध्ययन में अधिक औसत नुसल्ट संख्या प्रदान करता है, जैसा कि चित्र (5) और चित्र (6) में दिखाया गया है।

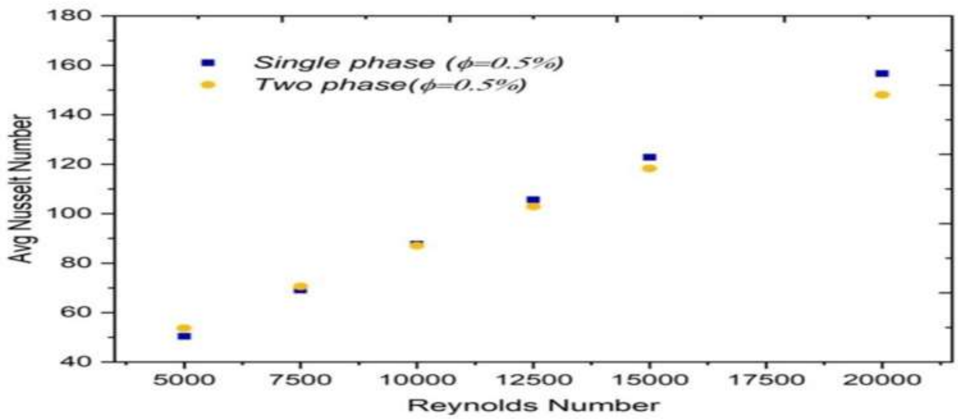

चित्र 5. 0.5% आयतन अंश के साथ एकल-प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह

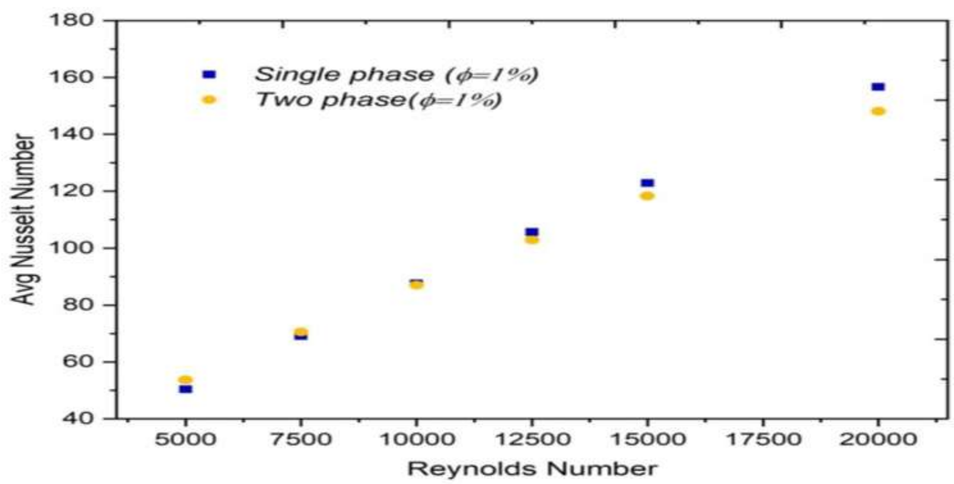

चित्र 6. 1% आयतन अंश के साथ एकल-प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह

आयतन अंश को 2% से 4% तक बढ़ाने पर, औसत नुसल्ट संख्या द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह की तुलना में बढ़ती पाई गई, इसे चित्र क्रमांक 7 और 8 में दर्शाया गया है।

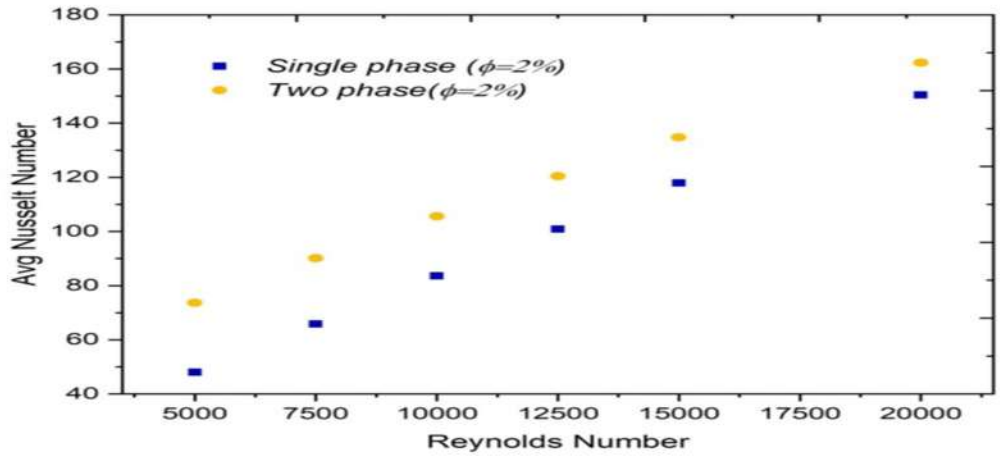

चित्र 7. 2% आयतन अंश के साथ एकल-प्रावस्थाऔर द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह

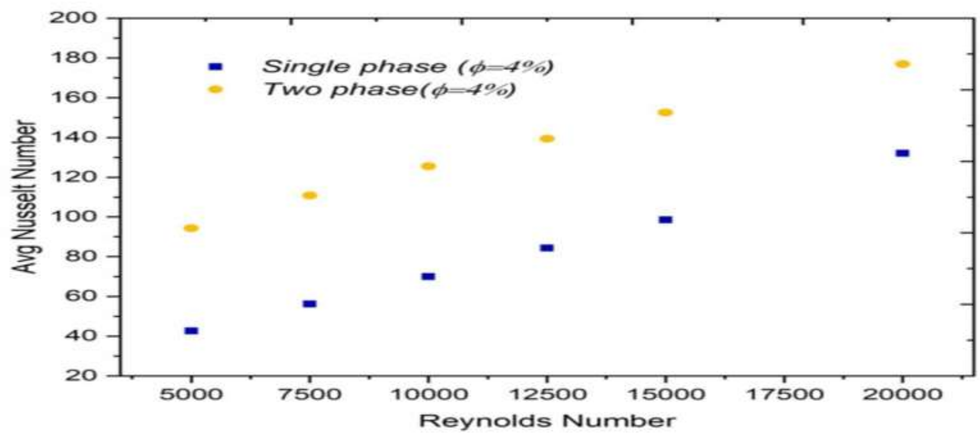

चित्र 8. 4% आयतनअंश के साथ एकल-प्रावस्थाऔर द्वि-प्रावस्था नैनोद्रव प्रवाह

4.2 एकल प्रावस्थीय नैनोद्रव प्रवाह में आयतन अंश का नुसल्ट संख्या पर प्रभाव

स्पष्ट है कि नैनोकणों के योग से आधार तरल की ताप-भौतिकीय गुणधर्मिता में सुधार होता है और इसलिए ऊष्मीय प्रसारण क्षमता में भी सुधार होता है। इस सुधार का कारण अपवाही तापसंचार और संवहनीय तापसंचार के साथ-साथ नैनोकणों के योग की उपस्थिति भी हैं। जब नैनोकणों को एकल प्रावस्था का मान कर विश्लेषण करने पर जो परिणाम प्राप्त होते है उसे चित्र 9 में देखा जा सकता है। यह स्पष्ट है कि नैनोकणों के निम्न आयतन अंश अर्थात

0.5% से 2% तक बढ़ाने पर औसत नुसल्ट संख्या का मान रेनॉल्ड्स संख्या के सापेक्ष बढ़ता है। इसके पश्चात् नैनोकणों के आयतन अंश को बढ़ाने पर औसत नुसल्ट संख्या में तुलनात्मक कमी आती है।

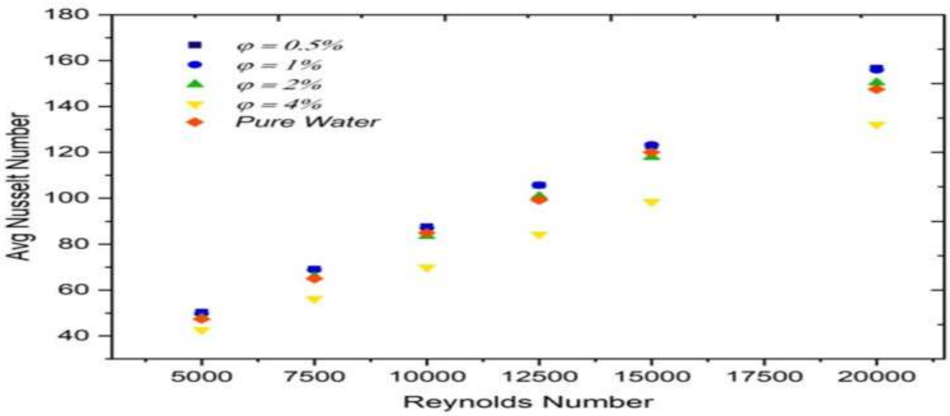

चित्र 9. 0.5%, 1%, 2% और 4% आयतनअंश वाले नैनोद्रव की एकल-प्रावस्था में तुलना

4.3 द्वि-प्रवस्थीय नैनोद्रव प्रवाह में आयतन अंश का नुसल्ट संख्या पर प्रभाव

नैनोकणों के योग से ताप संचार के दोनों संवहनीय तथा अपवाही ताप संचार में सुधार होता है। इस प्रभाव को और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए नैनोद्रव का द्वि-प्रावस्था स्तर पर विश्लेषण किया गय। इस विश्लेषण में पाया कि नुसल्ट संख्या का मान नैनोकणों के सभी आयतन अंश 0.5-4% के लिए रेनॉल्ड्स संख्या के सापेक्ष बढ़ता है। अधिकतम नुसल्ट संख्या नैनोकणों के 4% आयतन अंश के लिए प्राप्त होती है। इस प्रभाव को और अधिक स्पष्टता से चित्र (10) में देखा जा सकता है। 4% आयतन अंश वाले नैनोद्रव में अधिकतम औसत नुसल्ट संख्या प्राप्त की जाती है।

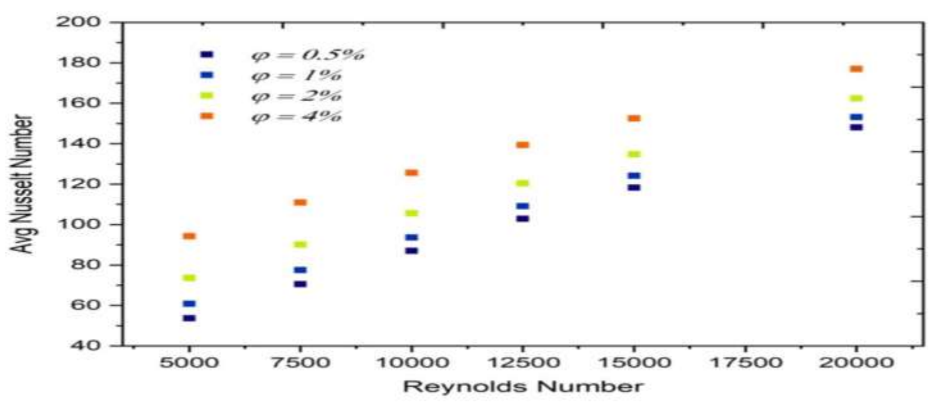

चित्र 10. 0.5%, 1%, 2% और 4% आयतन अंश वाले नैनोद्रव की द्वि-प्रावस्था में तुलना

5. निष्कर्ष

तापीय-भौतिक गुणों के साथ निकटता को समझना महत्वपूर्ण है। एकल प्रावस्था और द्वि-प्रावस्था में नैनोद्रव का संख्यात्मक विश्लेषण, औसत नुसल्ट संख्या के संदर्भ में इसके व्यवहार की व्यापक जानकारी प्रदान करता है। विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष निम्नलिखित हैं:

1. नैनोकणों के निम्न आयतन अंश 0.5% और 1% के लिए समरूपी मॉडल और मिश्रण मॉडल पर विचार करने से लगभग समान औसत नुसल्ट संख्या प्राप्त होती है। लेकिन उच्च आयतन अंश 2% और 4% के लिए, द्वि-प्रावस्था प्रवाह में मिश्रण मॉडल, एकल प्रावस्था समरूपी अध्ययन की तुलना में औसत नुसल्ट संख्या में वृद्धि दर्शाता है।
2. यह स्पष्ट है कि नैनोकणों के निम्न आयतन अंश के लिए नैनोद्रव की औसत नुसल्ट संख्या में वृद्धि पाई जाती है, जबकि उच्च आयतन अंश के लिए यह घटती है। आधार तरल की तुलना में निम्न आयतन अंश के लिए यह वृद्धि 9% तक देखी जाती है।
3. नैनोद्रव प्रवाह में रेनॉल्ड्स संख्या की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कम रेनॉल्ड्स संख्या के लिए, आयतन अंश को स्थिर रखते हुए, औसत नुसल्ट संख्या के उच्च मान प्राप्त होते हैं। जैसे-जैसे रेनॉल्ड्स संख्या बढ़ती है, समान आयतन अंश के लिए औसत नुसल्ट संख्या की वृद्धि की दर घटती जाती है।

प्रतीक सूची

a	दीवार सतह क्षेत्र	h	ऊष्मा अंतरण गुणांक
Ø	नैनोकणों का आयतन अंश	Λ	ऊष्मीय चालकता
C_p	विशिष्ट ऊष्मा	L	नली की लंबाई
μ	गतिक श्यानता	N	पावर-लॉ घातांक
d_f	आधार तरल के अणुओं का औसत व्यास	Pr	आधार तरल की प्रांट्ल संख्या
ρ	नैनोद्रव का द्रव्यमान	q_w	समान ऊष्मा प्रवाह
d_s	नैनोकणों का औसत व्यास	Re	रेनॉल्ड्स संख्या
λ_f	आणविक मुक्त पथ	ΔT_m	लॉग-मीन तापमान अंतर

उप-सूचक	
L	नली की लंबाई
f	आधार तरल
n	प्रवाह व्यवहार सूचक
in	प्रवेश
k	चरण संख्या
m	मिश्रण
q_w	समान ऊष्मा प्रवाह
nf	नैनोद्रव

[1]यांत्रिकी अभियंत्रण विभाग, विश्वविद्यालय शिक्षण विभाग, छत्तीसगढ़ स्वामी विवेकानंद तकनीकी विश्वविद्यालय, भिलाई, छत्तीसगढ़, भारत - 491001

[2]ऊर्जा यांत्रिकी अभियंत्रण विभाग, भिलाई इंस्टिट्यूट ऑफ़ टेक्नोलॉजी, दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत – 491001

संदर्भ

1. R. L. Hamilton, "Thermal conductivity of heterogeneous two-component systems," Ind. Eng. Chem. Fundam., vol. 1, no. 3, pp. 187–191, 1962, doi: 10.1021/i160003a005.
2. S. Choi, "Nanofluid technology: current status and future research.," Energy, p. 26, 1998, [Online]. Available: http://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/11048%5Cnhttp://www.osti.gov/energycitations/product.biblio.jsp?osti_id=11048
3. G. Ranakoti, S. Dewangan, S. Kosti, and R. Nemade, "Heat Transfer Enhancement by Nano Fluids," Convect. Heat Mass Transf., no. April, pp. 1–9, 2012.
4. M. K. Rawat and N. K. Gupta, "A Experimental and Numerical Approach to Evaluate Thermal characteristics a of Heat Pipe," IOP Conf. Ser. Mater. Sci. Eng., vol. 1116, no. 1, p. 012150, 2021, doi: 10.1088/1757-899x/1116/1/012150.
5. H. Chen, Y. Ding, and C. Tan, "Rheological behaviour of nanofluids," New J. Phys., vol. 9, 2007, doi: 10.1088/1367-2630/9/10/367.
6. M. Hojjat, S. G. Etemad, R. Bagheri, and J. Thibault, "Rheological characteristics of non-Newtonian nanofluids: Experimental investigation," Int. Commun. Heat Mass Transf., vol. 38, no. 2, pp. 144–148, 2011, doi: 10.1016/j.icheatmasstransfer.2010.11.019.

7. M. K. Moraveji and R. M. Ardehali, "CFD modeling (comparing single and two-phase approaches) on thermal performance of Al2o3/water nanofluid in mini-channel heat sink," Int. Commun. Heat Mass Transf., vol. 44, pp. 157–164, 2013, doi: 10.1016/j.icheatmasstransfer.2013.02.012.

8. M. Mahdavi, M. Sharifpur, and J. P. Meyer, "CFD modelling of heat transfer and pressure drops for nanofluids through vertical tubes in laminar flow by Lagrangian and Eulerian approaches," Int. J. Heat Mass Transf., vol. 88, pp. 803–813, 2015, doi: 10.1016/j.ijheatmasstransfer.2015.04.112.

9. M. Akbari, N. Galanis, and A. Behzadmehr, "Comparative analysis of single and two-phase models for CFD studies of nanofluid heat transfer," Int. J. Therm. Sci., vol. 50, no. 8, pp. 1343–1354, 2011, doi: 10.1016/j.ijthermalsci.2011.03.008.

10. M. Hejazian, M. K. Moraveji, and A. Beheshti, "Comparative study of Euler and mixture models for turbulent flow of Al2O3 nanofluid inside a horizontal tube," Int. Commun. Heat Mass Transf., vol. 52, pp. 152–158, 2014, doi: 10.1016/j.icheatmasstransfer.2014.01.022.

11. B. Sahin, G. G. Gültekin, E. Manay, and S. Karagoz, "Experimental investigation of heat transfer and pressure drop characteristics of Al2O3-water nanofluid," Exp. Therm. Fluid Sci., vol. 50, pp. 21–28, 2013, doi: 10.1016/j.expthermflusci.2013.04.020.

शब्दावली आयोग

4. विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न वाले अवशोषक प्लेट के साथ सौर वायु तापक में ऊष्मा अंतरण सुधार की संख्यात्मक जांच

[1,*]अमृत शेन्डे, [1]अमृता त्रिपुरे, [2]संतोष कुमार मिश्रा, [1]हरीश कुमार घृतलहरे

सार: यह अध्ययन सौर वायु तापक के प्रदर्शन पर रिब पैटर्न के प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए अभिकलनी तरल गतिकी (कम्प्यूटेशनल फ़्लूड डायनामिक्स) विधि का उपयोग करता है। इस अध्ययन में सौर वायु तापक की ऊष्मा अंतरण क्षमता में सुधार के लिए अवशोषक प्लेट पर कृत्रिम रुक्षता की महत्वपूर्ण भूमिका स्थापित की गई है। इस अनुसंधान में विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न वाले कृत्रिम रुक्षता का गहन अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन में विकृत उल्टा L-कोण आकार रिब पैटर्न के सापेक्ष रुक्षता पिच (P/e) के तीन भिन्न मान 8, 10 तथा 12 को लिया गया और वायु प्रवाह को 4000 से 18000 रेनॉल्ड्स संख्या तक सीमित रखा गया है। अभिकलनी तरल गतिकी अनुकार के माध्यम से यह पाया गया कि विकृत उल्टा L-कोण आकार रिब पैटर्न, ऊष्मा अंतरण को बढ़ाते है और साथ-साथ दाब ह्रास को भी संतुलित रखते हैं। परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि यह विशेष रिब डिज़ाइन सौर वायु तापक की उष्मीय दक्षता में उल्लेखनीय सुधार करता है, जिससे सौर ऊर्जा प्रणालियाँ अधिक प्रभावी और व्यावहारिक अनुप्रयोगों के लिए अधिक उपयुक्त बन सकती हैं।

मुख्य शब्द: अभिकलनी तरल गतिकी, रिब पैटर्न, सौर वायु तापक

1. प्रस्तावना

सौर वायु तापक एक उपकरण है जिसका उपयोग सूर्य से आने वाली सौर ऊर्जा को अवशोषित करने और इसे वाहिनी के माध्यम से बहती हवा में स्थानांतरित करने के लिए किया जाता है। इस उपकरण की वाहिनी से प्राप्त गर्म हवा का उपयोग संवृत तापन, कृषि उत्पाद को सूखने तथा औद्योगिक प्रक्रियाओं में किया जाता है। सौर वायु तापक हवा को गर्म करने का एक प्रभावी उपकरण है, लेकिन इसकी दक्षता अपेक्षाकृत कम होती है। इसलिए, इसकी दक्षता बढ़ाने के लिए अनुसंधान की आवश्यकता है। पूर्व शोध कार्यों से पता चलता है कि सौर वायु तापक की दक्षता मुख्य रूप से इसके अवशोषक प्लेट पर बनाए गए कृत्रिम रुक्षता पर निर्भर करती है। उपयुक्त रूप से डिज़ाइन किए गए कृत्रिम रुक्षता का उपयोग करके सौर वायु तापक की दक्षता में उल्लेखनीय वृद्धि की जा सकती है।

(Verma & Prasad, 2000) ने पहली बार यह दर्शाया कि कृत्रिम रुक्षता वाले अवशोषक प्लेट के उपयोग से चिकने अवशोषक प्लेट सौर वायु तापकों की तुलना में 71% की महत्वपूर्ण वृद्धि ताप-द्रवचालित प्रदर्शन दक्षता (THPE) में देखी गई, जिससे इस तकनीक की संभावनाओं को दर्शाया गया। इसके बाद, (Bhagoria et al., 2002) और (Saini & Saini, 2008) ने क्रमशः अनुप्रस्थ फान-आकार और चाप-आकार की रिब रुक्षता वाले सौर वायु तापक के लिए ऊष्मा अंतरण और घर्षण कारकों के लिए महत्वपूर्ण सहसंबंध विकसित किए। (Hans et al., 2010) ने इस कार्य को आगे बढ़ाते हुए विभिन्न वी-रिब रुक्षता ज्यामितियों और उनके तापीय प्रदर्शन पर प्रभाव का अध्ययन किया। हाल के शोधों में ताप-द्रवचालित प्रदर्शन दक्षता को अनुकूलित करने के लिए नवीन रिब पैटर्नों की खोज की गई है। (Pawar et al., 2015) ने असंयुक्त खंडित वी-रिब का अध्ययन किया, जबकि (Deo et al., 2016) ने बहु-रिक्त वी-डाउन रिब्स को सांतरित अभिविन्यास में अध्ययन किया, दोनों ने प्रदर्शन में महत्वपूर्ण सुधार की सूचना दी। (Gawande et al., 2016a)(Gawande et al., 2016b) ने चेम्फर्ड, स्क्वायर रिब और रिवर्स L -आकार की रिब्स का अध्ययन किया, जिससे प्रयोगात्मक और अभिकलनी तरल गतिकी अध्ययनों के माध्यम से ऊष्मा अंतरण और घर्षण विशेषताओं में महत्वपूर्ण सुधार पाए गए। उन्नत अनुकार तकनीकों और व्यावहारिक प्रयोगों ने रिब डिज़ाइनों को लगातार परिष्कृत किया है। (Yadav & Bhagoria, 2014) ने अभिकलनी तरल गतिकी का उपयोग करके बहु-कोणीय रिब रुक्षता का विश्लेषण किया और इसे ऊष्मा अंतरण बढ़ाने में प्रभावी पाया। (Baissi et al., 2020) ने डेल्टा-आकार के वायुगतिकीय जनित्रों का अध्ययन किया, जबकि (Arya et al., 2023) ने डिंपल-आकार की रुक्षता का विश्लेषण किया, दोनों ने नवीन रिब ज्यामितियों के साथ उत्साहजनक परिणाम दिखाए। प्रायोगिक और संख्यात्मक अध्ययन लगातार यह दर्शाते हैं कि सौर वायु तापक की ताप-द्रवचालित दक्षता और नुसल्ट संख्या में सुधार करने में रिब पैटर्न की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उदाहरण के लिए, (Ghritlahre et al., 2020) और (Ghritlahre, 2022) ने चाप-आकार की रिब्स के उपयोग से ऊष्मा अंतरण और घर्षण कारकों में महत्वपूर्ण सुधार की सूचना दी। (Dong et al., 2023) ने दिखाया कि सतत खांचेदार सौर वायु तापक ने नुसल्ट संख्या और समग्र प्रदर्शन को काफी हद तक बढ़ाया। ऊष्मा अंतरण वृद्धि के अलावा, रिब पैटर्न अनुकूलन का उद्देश्य दाब ह्रास को प्रबंधनीय बनाए रखना भी है, जो व्यावहारिक अनुप्रयोगों के लिए आवश्यक है। (Hans et al., 2017) और (Kumar & Kim, 2015) के अध्ययनों से पता चला कि अच्छी तरह से डिज़ाइन किए गए रिब पैटर्न ऊष्मा अंतरण को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकते हैं, जबकि घर्षण कारक में वृद्धि को न्यूनतम कर सकते हैं। शोधकर्ताओं ने कृत्रिम रुक्षता के लिए आयताकार और अर्ध-गोलाकार रिब्स का संयोजन स्थापित किया है। इसमें दो प्रकार के विन्यासों का विश्लेषण किया गया है: टाइप A, जिसमें रिब्स अवशोषक के ऊपर स्थित हैं, और टाइप B, जिसमें रिब्स अवशोषक के नीचे हैं। अध्ययन से यह पता चलता है कि टाइप A ने अधिकतम 4.24 नुसल्ट संख्या प्राप्त की और 1000 W/m^2 की ऊष्मा अभिवाह पर तापीय संवृद्धि कारक 1.32 से 1.79 के बीच पाया गया, जो कि चिकने अवशोषक की तुलना में बेहतर तापीय प्रदर्शन

दर्शाता है। विभिन्न अध्ययनों में सौर वायु तापक की ताप-द्रवचालित प्रदर्शन क्षमता का विश्लेषण किया गया, जिसमें कृत्रिम रुक्षता तत्व के रूप में अर्ध-गोलाकार नलिकाओं का उपयोग किया गया है। इसमें डिज़ाइन प्राचल जैसे रेनॉल्ड्स संख्या (Re) 3000 से 19,000 तक, नलिका पिच अनुपात (P/H) 1 से 4 तक, और रुक्षता ऊंचाई अनुपात (e_a/H) 0.2 से 0.5 तक का परीक्षण किया गया है। निष्कर्षों से पता चला कि अधिकतम नुसल्ट संख्या 112.64 Re 19,000 पर प्राप्त हुई, जबकि अधिकतम तापीय प्रदर्शन मान 1.45 Re 3000, e_a/H 0.2, और P/H 4 पर दर्ज किया गया। कृत्रिम रुक्षता वाले सौर वायु तापक अवशोषक प्लेट पर रिब्स या रुक्षता पैदा करके ऊष्मा अंतरण को बढ़ाते हैं, जिससे बहाव में अशांति उत्पन्न होती है। यह अशांति संवाहक ऊष्मा अंतरण गुणांक में महत्वपूर्ण सुधार करती है, जिससे अवशोषक प्लेट पर कम ऊष्मा अंतरण के कारण होने वाली अक्षमताओं को दूर किया जा सकता है और ऊष्मा ह्रास को कम किया जा सकता है। इस अध्ययन में विभिन्न रिब विन्यासों और मानकों का मूल्यांकन किया गया है, जिनका प्रदर्शन मानदंड जैसे नुसल्ट संख्या अनुपात, तापीय वृद्धि कारक और तापीय दक्षता पर प्रभाव का विश्लेषण किया गया है ताकि SAH डिज़ाइन को अनुकूलित किया जा सके।

सौर वायु तापक अवशोषक प्लेटों पर रिब पैटर्न के विकास और अनुकूलन से ताप-द्रवचालित प्रदर्शन और नुसल्ट संख्या में सुधार किया जा सकता है। विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न पर किए गए शोध सौर वायु तापक दक्षता को बढ़ाने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हैं, जिससे विभिन्न अनुप्रयोगों के लिए कुशल सौर तापीय प्रणालियों के विकास का मार्ग प्रशस्त होता है।

2. कार्यप्रणाली

इस अध्ययन में सौर वायु तापक के प्रदर्शन पर विभिन्न रिब पैटर्न के प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए अभिकलनी तरल गतिकी का उपयोग किया गया। इस कार्यप्रणाली में निम्नलिखित चरण शामिल हैं:

2.1 परिणाम और चर्चा

अभिकलनी तरल गतिकी विश्लेषण के लिए एनसिस डिज़ाइन मॉडलर सॉफ्टवेयर का उपयोग करके सौर वायु तापक के रिब पैटर्नों की द्वि-आयामी (2D) ज्यामिति का निर्माण किया गया है (चित्र 1)। इनमें विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न शामिल है। इन ज्यामितियों का सटीक मॉडल तैयार किया गया जो की (Gawande et al., 2016b)(Standard, 1977) के प्रायोगिक व्यवस्था के आयामों के आधार पर विकसित किया गया है।

अद्वितीय आयाम CSIR

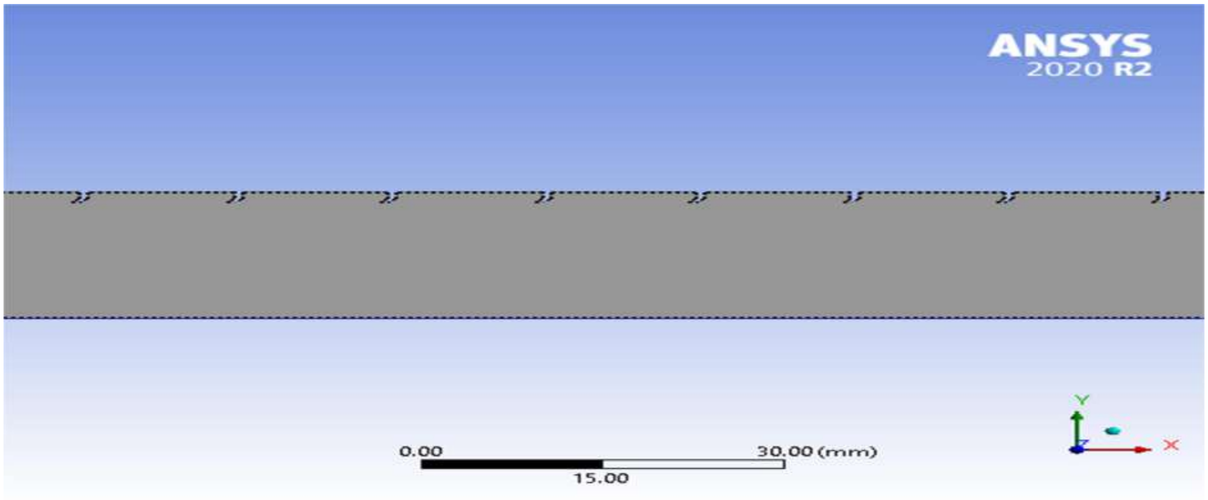

चित्र 1: उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न

2.2 जालनिर्माण (Meshing)

ज्यामितीय मॉडल का जाल निर्माण (चित्र 2) किया गया ताकि तरल बहाव और ऊष्मा अंतरण के विस्तृत विश्लेषण के लिए आवश्यक ग्रिड संरचना प्राप्त की जा सके। उच्च- गुणवत्ता वाले जाल निर्माण तकनीकों का उपयोग किया गया, जिससे सूक्ष्म विवरणों का सही-सही प्रतिनिधित्व हो सके।

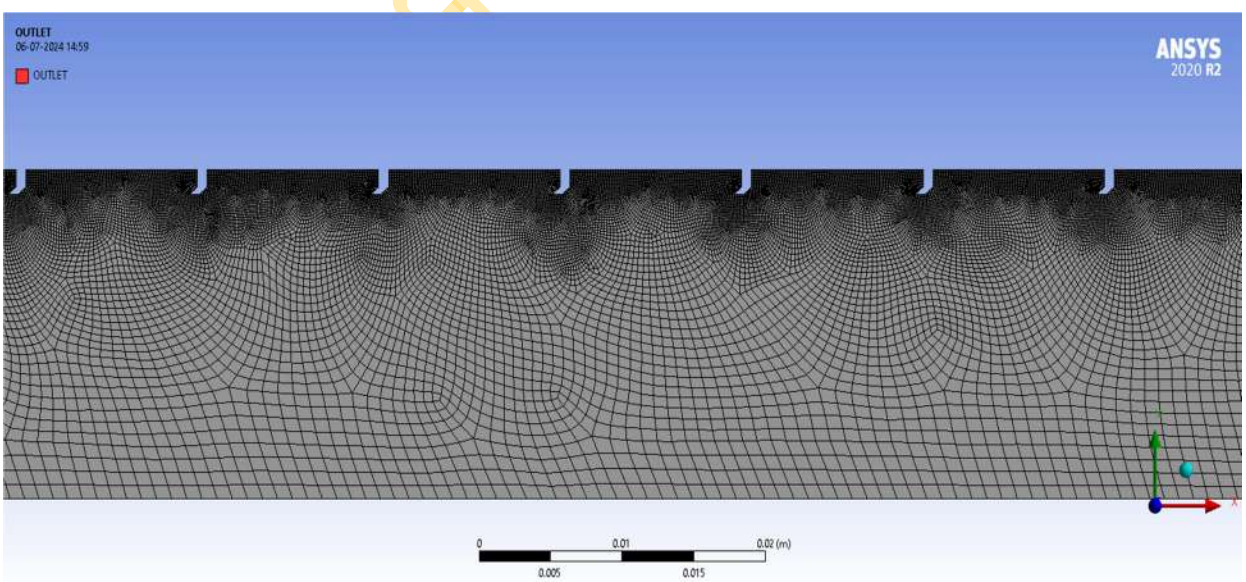

चित्र 2: ज्यामितीय मॉडल का जाल निर्माण

2.3 सीमांतशर्तें (Boundary Conditions)

तालिका 1

सीमा	**शर्तें**
प्रवेश	प्रवाह वेग
निकास	वायुमंडलीय–दाब
अवशोषक प्लेट	हीट फ्लक्स
दीवार	रूद्धोष्म दीवार

2.4 गवर्निंग समीकरण

अभिकलनी तरल गतिकी अनुकार में ऊर्जा समीकरण, सातत्य समीकरण और संवेग समीकरण का उपयोग किया गया है। इन समीकरणों का उपयोग करते हुए, तरल बहाव और ऊष्मा अंतरण में होने वाले बदलावों का अनुमान लगाया गया।

- **ऊर्जा समीकरण**

$$\frac{\partial}{\partial x_j}[\rho u_i T] = \frac{\partial}{\partial x_j}\left[\left(\frac{\mu}{Pr} + \frac{\mu_t}{\sigma_t}\right)\frac{\partial T}{\partial x_j}\right] \quad (1)$$

- **सातत्य समीकरण**

$$\frac{\partial}{\partial x_i}(\rho u_i) = 0 \quad (2)$$

- **संवेग समीकरण**

$$\frac{\partial}{\partial x_j}(\rho u_i u_j) = -\frac{\partial p}{\partial x_i} + \frac{\partial}{\partial x_j}\left[\mu\left(\frac{\partial u_i}{\partial x_j} + \frac{\partial u_j}{\partial x_i}\right)\right] - \left(\rho \overline{u_i' u_j'}\right) \quad (3)$$

2.5 अनुकार का संचालन

अभिकलनी तरल गतिकी सॉफ्टवेयर एनसिस फ़्लूएंट आर-2020 का उपयोग करके अनुकार का संचालन किया गया। प्रत्येक सापेक्ष रुक्षता पिच (P/e) 8, 10 और 12 के लिए अलग-अलग अनुकार किए गए और विभिन्न मापदंडों, जैसे ऊष्मा अंतरण क्षमता और दाब ह्रास, का मूल्यांकन किया गया।

शब्दावली आयोग CSTT

3. सत्यापन

अभिकलनी तरल गतिकी अनुकार से प्राप्त परिणामो को अनुभवजन्य सम्बन्ध के साथ सत्यपित किया गया है ताकि सुनिश्चित लिया जा सके की अभिकलनी तरल गतिकी मॉडलिंग सही और विश्वसनीय है। अभिकलनी तरल गतिकी अनुकार के प्राप्त नुसल्ट संख्या का सत्यापन डिट्टस-बोएल्टर द्वारा दिए गए अनुभवजन्य सम्बन्ध (समीकरण 4) से किया गया और पाया की अनुकार का परिणाम बहुत कम त्रुटि के साथ अनुभवजन्य संबंध का अनुसरण करता है (चित्र-3) ।

$$Nu_s = 0.023Re^{0.8}\,Pr^{0.4}(\text{Wilson, 2000}) \quad (4)$$

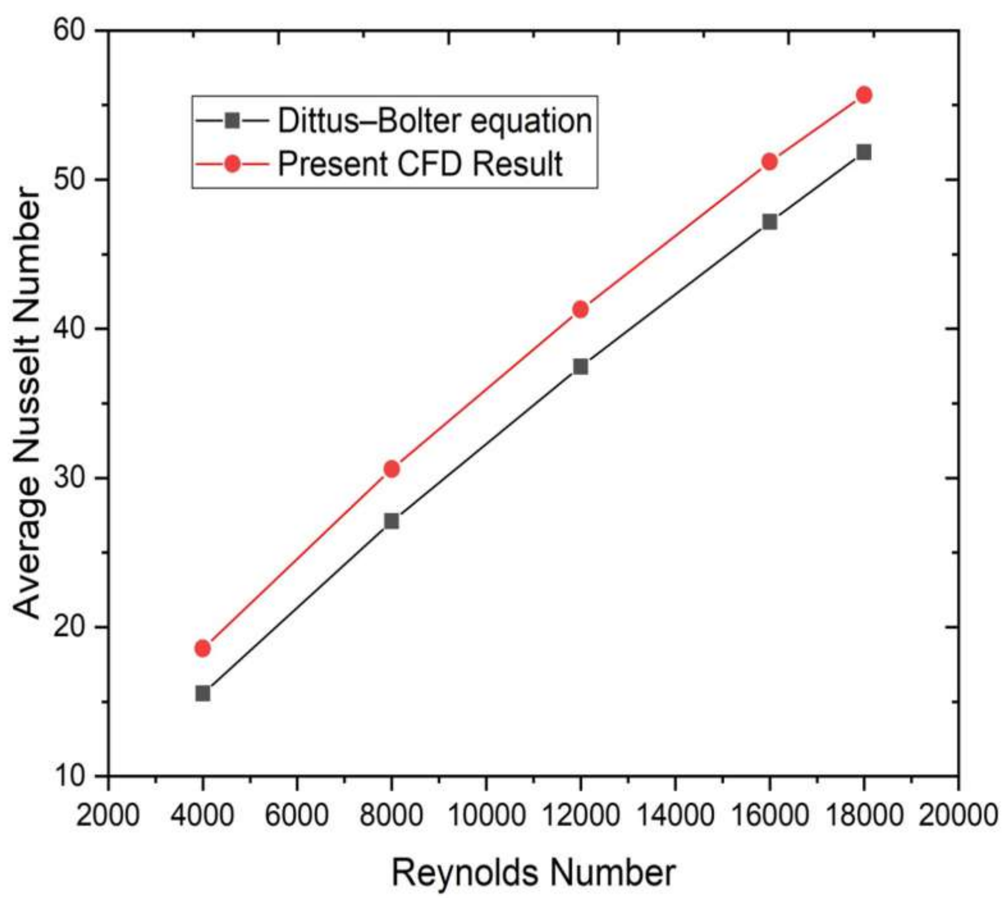

चित्र 3: विभिन्न रेनॉल्ड्स संख्या पर नुसेल्ट संख्या के लिए सत्यापन वक्र

तालिका 2

भौतिक गुण (एस. आई. इकाई)	300K पर वायु	अवशोषक प्लेट
घनत्व	1.225	2719
श्यानता	$1.846x10^{-5}$	
विशिष्ट ऊष्मा	1006.43	871
ऊष्मीय चालकता	$2.42x10^{-2}$	202.4

4. ग्रिड स्वतंत्रता परीक्षण

एनसिस आर-2020 के जालक्रम मॉड्यूल का उपयोग सौर वायु तापक के संगणनात्मक डोमेन पर असमान जाल संरचना बनाने के लिए किया गया है, जैसा कि चित्र 2 में दर्शाया गया है। पटलीय उपपरत (laminar sublayer) को सटीक रूप से हल करने के लिए, सौर वायु तापक वाहिनी के अवशोषक प्लेट के पास बहुत ही सूक्ष्म जाल आकार का उपयोग किया गया है। वर्तमान विश्लेषण के लिए निर्मित जाल संरचना में 101251 अवयव शामिल हैं। ग्रिड स्वतंत्रता परीक्षण को रेनॉल्ड्स संख्या (Re) = 18,000 और P/e = 8 के लिए 85201 से 101251 अवयव को पाँच चरणों में बदलकर किया गया। 101251 से अधिक जाल अवयव की वृद्धि पर औसत निकासी तापमान 1% से भी कम का परिवर्तन पाया गया, जैसा कि तालिका 3 में दर्शाया गया है। इसलिए, 101251 अवयव वाली जाल संरचना को ग्रिड स्वतंत्रता मानदंड के रूप में चुना गया है और इस शोध पत्र में जांचे गए मामलों के संख्यात्मक विश्लेषण के लिए उपयोग किया गया है।

तालिका 3

स. क्र.	एलिमेंट्स की संख्या	औसत निकासी तापमान (केल्विन)	त्रुटि %
1	85201	303.11	-
2	89808	309.27	1.99
3	91689	310.83	0.50
4	97283	311.43	0.19
5	101251	311.87	0.14

शब्दावली आयोग CSTT

5. परिणाम

5.1 ऊष्मा अंतरण पर रिब पैटर्न का प्रभाव

अध्ययन में यह पाया गया कि विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न को अवशोषक प्लेट पर लगाने से ऊष्मा अंतरण में सुधार आता है (चित्र 5)। इस रिब पैटर्न का गहन अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हुआ कि यह विभिन्न सापेक्ष रुक्षता पिच (P/e) के लिए अलग-अलग प्रभाव डालता है, जिससे हवा के प्रवाह में परिवर्तन होता है (चित्र 7)। इस अध्ययन में सापेक्ष रुक्षता पिच (P/e) को 8 से 12 तक बढ़ाया गया और इसके प्रभावों का विश्लेषण किया गया। सबसे अधिक ऊष्मा अंतरण सापेक्ष रुक्षता पिच 8 के लिए पाया गया, जो इससे पहले विकसित किसी भी अन्य रिब पैटर्न की तुलना में अधिक था। सौर वायु तापक से निकलने वाली हवा के तापमान में सबसे अधिक वृद्धि सापेक्ष रुक्षता पिच 8 पर देखी गई। अधिकतम तापमान 311.87K दर्ज किया गया, जो बिना किसी रिब पैटर्न वाली अवशोषक प्लेट की तुलना में 1.8 गुना अधिक है (चित्र 4a)। इसके अतिरिक्त, अवशोषक प्लेट का न्यूनतम तापमान लगभग 313K पाया गया, जो सापेक्ष रुक्षता पिच 10 के लिए दर्ज किया गया (चित्र 4b)। चित्र 6 में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि दो रिब के बीच में बनने वाले एड़ी के प्रभाव से सौर वायु तापक के भीतर वायु का बेहतर मिश्रण हो रहा है और ऊष्मा अंतरण में वृद्धि हो रही है।

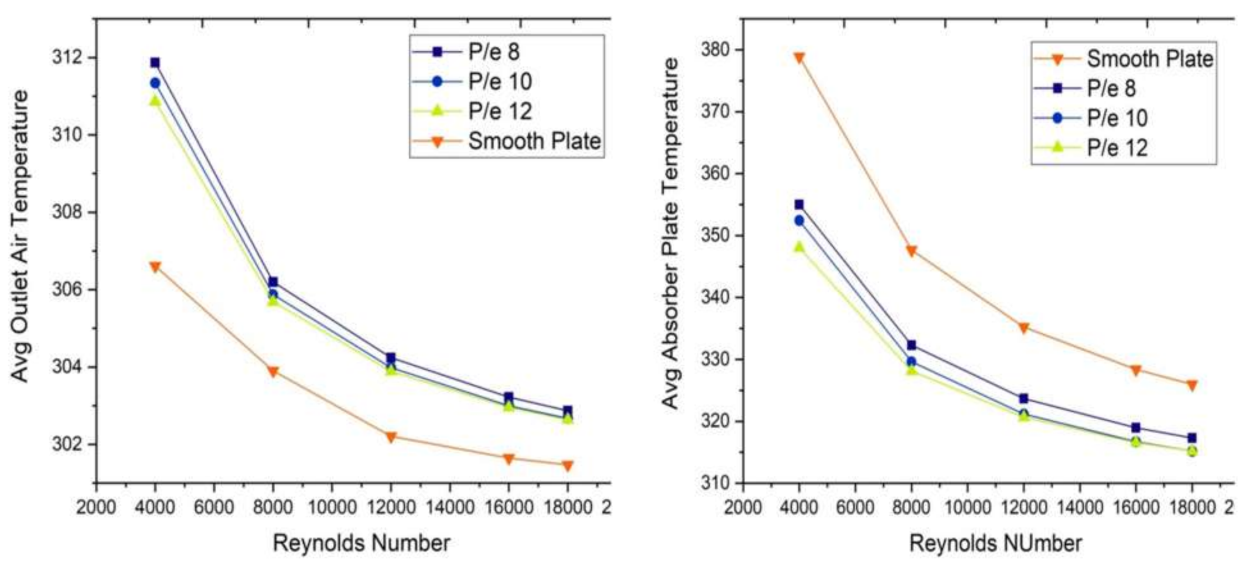

(a) (b)

चित्र 4: अलग-अलग सापेक्ष रुक्षता पिच पर (a) रेनॉल्ड्स संख्या के सापेक्ष में हवा के निकासी तापमान में परिवर्तन, (b) रेनॉल्ड्स संख्या के सापेक्ष में अवशोषक प्लेट के तापमान में परिवर्तन

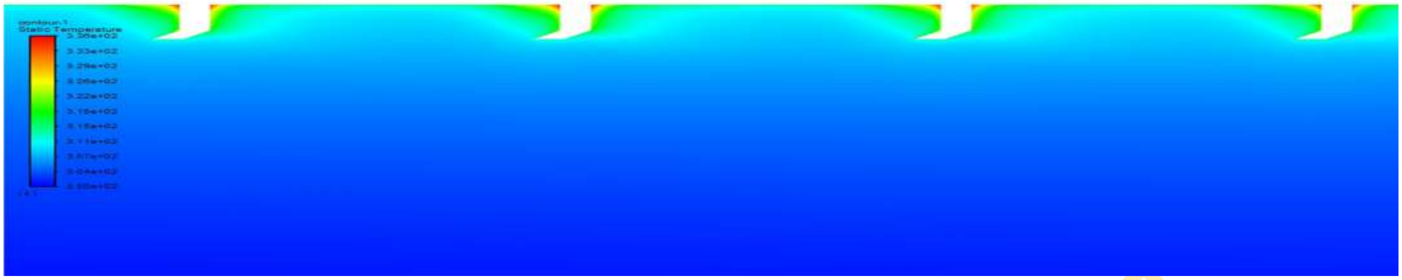

चित्र 5: सौर वायु तापक का तापमान समोच्च

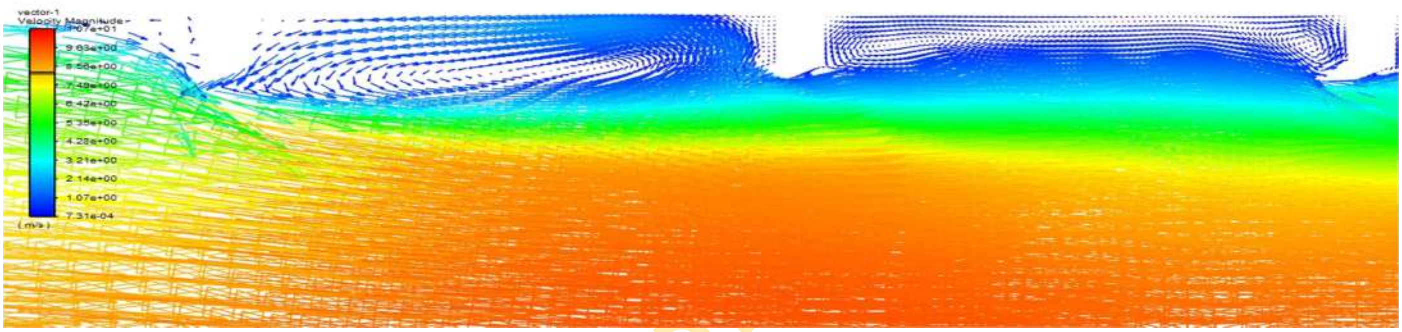

चित्र 6: रिब्स के पास एड़ी

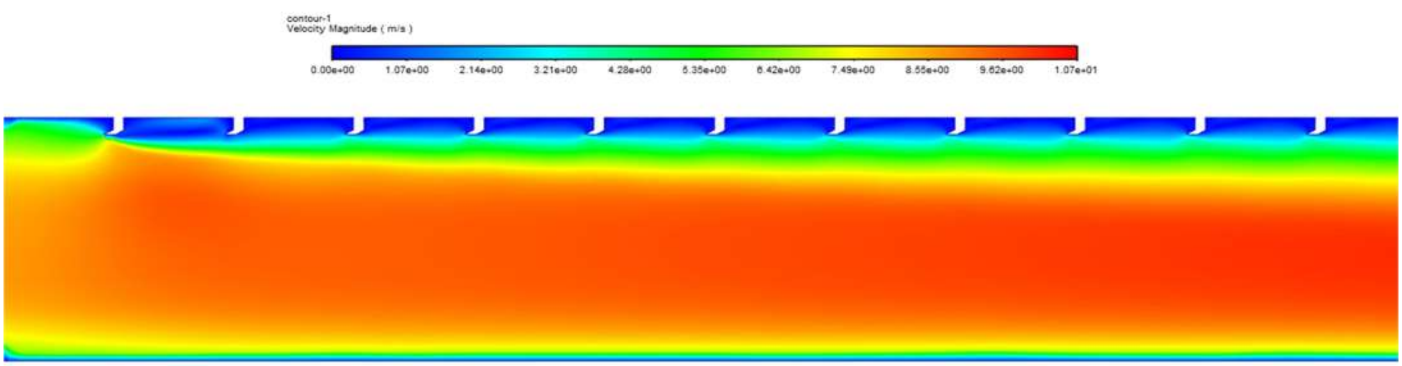

चित्र 7: रेनॉल्ड्स संख्या 18000 और सापेक्ष रुक्षता पिच 8 पर वेग समोच्च

5.2 दाब ह्रास पर रिब पैटर्न का प्रभाव

अवशोषक प्लेट पर लगाया गया कृत्रिम रुक्षता वायु प्रवाह में बाधक की तरह कार्य करता है, जिससे सौर वायु तापक के भीतर दबाव ह्रास होता है (चित्र 9)। वर्तमान अध्ययन में उपयोग किए गए विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न से भी दबाव ह्रास देखा गया, परंतु यह ह्रास बढ़े हुए ऊष्मा अंतरण की तुलना में कम था, जो इन रिब पैटर्न की प्रभावशीलता को दर्शाता है। अध्ययन में पाया गया कि सबसे अधिक दबाव ह्रास सापेक्ष रुक्षता पिच 10 पर हुआ, जो दर्शाता है कि इस पिच पर वायु प्रवाह में अधिक प्रतिरोध उत्पन्न हो रहा है(चित्र 8)।

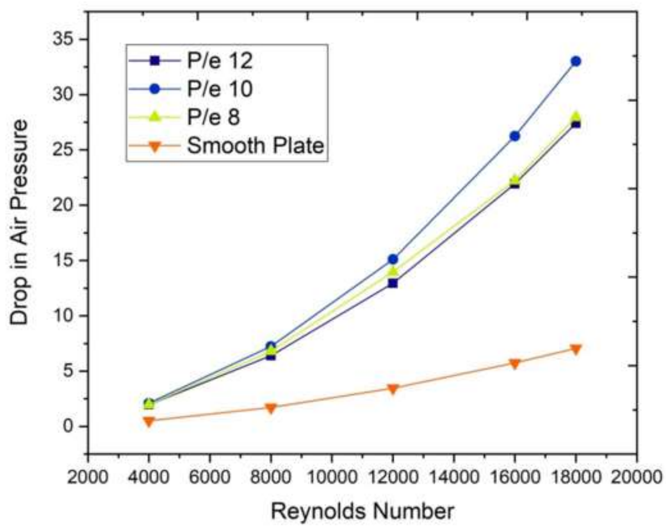

चित्र 8: विभिन्न सापेक्ष रुक्षता पिच P/e पर, रेनॉल्ड्स संख्या के सापेक्ष हवा के दाब में परिवर्तन

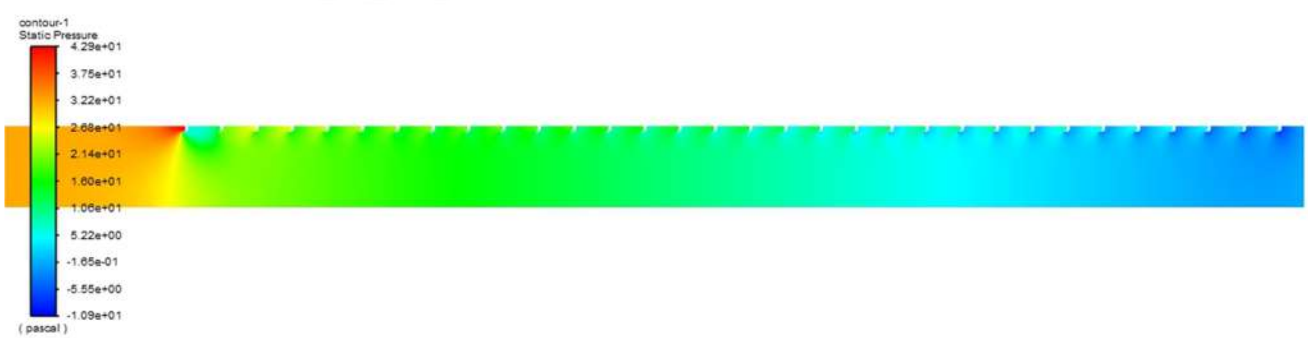

चित्र 9: रेनॉल्ड्स संख्या 18000 और सापेक्ष रुक्षता पिच 8 पर दाब समोच्च

6. निष्कर्ष

इस अध्ययन में, अभिकलनी तरल गतिकी विधि का उपयोग करके विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न का सौर वायु तापक के प्रदर्शन पर प्रभाव का विश्लेषण किया गया। इस अध्ययन में उपयोग किया गया विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न वाला कृत्रिम रुक्षता, सौर वायु तापक की ऊष्मा अंतरण क्षमता को अत्यधिक बढ़ाता है। वर्तमान अध्ययन में यह भी विश्लेषण किया गया कि किस सापेक्ष रुक्षता पिच पर ऊष्मा अंतरण दर अधिकतम होती है। यह जानकारी सौर वायु तापक की डिज़ाइन और अनुकूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अभिकलनीय विश्लेषण के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष निम्नलिखित हैं:

6.1 सापेक्ष रुक्षता पिच का प्रभाव

वर्तमान अध्ययन में सापेक्ष रुक्षता पिच (P/e) के तीन मानो 8, 10 और 12 का विश्लेषण किया गया, जिससे यह पाया गया कि सापेक्ष रुक्षता पिच 8 पर विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न सबसे अधिक प्रभावी है। इस पिच पर सौर वायु तापक से निकलने वाली हवा का तापमान उच्चतम पाया गया और दबाव में गिरावट भी संतुलित रही।

6.2 निर्गम तापमान पर प्रभाव

अभिकलनी तरल गतिकी अनुकार से यह स्पष्ट हुआ कि विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न के उपयोग से ऊष्मा अंतरण दर में सुधार होता है। इन रिब पैटर्नों का उपयोग ऊष्मा अंतरण को अधिकतम करने के लिए अत्यधिक लाभकारी साबित हुआ।

6.3 अवशोषक प्लेट के तापमान में प्रभाव

विकृत उल्टा L-कोण आकार रिब पैटर्न वाली अवशोषक प्लेट के तापमान में होने वाली गिरावट, चिकनी प्लेट की तुलना में काफी अधिक है, जो यह दर्शाता है कि अवशोषक प्लेट और सौर वायु तापक में प्रवाहित होने वाली वायु के बीच ऊष्मा अंतरण अधिक प्रभावी तरीके से हुआ है।

6.4 दाब ह्रास पर प्रभाव

रिब पैटर्न के उपयोग से दाब ह्रास में वृद्धि होती है, लेकिन विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न ने सापेक्ष रुक्षता पिच 8 पर, दाब ह्रास और ऊष्मा अंतरण के बीच सर्वोत्तम संतुलन प्रदान किया। इससे यह निष्कर्ष निकला कि यह रिब पैटर्न ऐसे अनुप्रयुक्त अनुप्रयोगों के लिए अधिक उपयोगी हो सकता है, जहां दाब न्यूनता को न्यूनतम रखना आवश्यक है।

शब्दावली आयोग CSTT

6.5 ऊष्मा अंतरण क्षमता

अध्ययन के परिणामों से यह भी स्पष्ट हुआ कि बेहतर रिब डिज़ाइन सौर वायु तापक की थर्मल दक्षता को काफी हद तक बढ़ा सकते हैं। विशेष रूप से, विकृत उत्क्रम L-कोण आकार रिब पैटर्न ने ऊष्मा अंतरण क्षमता में सबसे अधिक सुधार दिखाया।

प्रतीक सूची

T_i	प्रवाह वायु का तापमान, K
T_o	निकास वायु का तापमान, K
T_p	अवशोषक प्लेट का तापमान, K
T_f	तरल का औसत तापमान, K
v	वायु धारा गति, m/s
k	वायु की तापीय चालकता, W/mK
P/e	सापेक्ष रुक्षता पिच
e	रिब की ऊंचाई, mm
Pr	प्रांड्टल संख्या
Re	रेनोल्ड्स संख्या
c_p	विशिष्टऊष्मा, kJ/kgK
ρ	घनत्व, kg/m^3
ΔP	दाब ह्रास, Pa
μ	श्यानता, Ns/m^2

[1]यांत्रिकी अभियंत्रण विभाग, विश्वविद्यालय शिक्षण विभाग, छत्तीसगढ़ स्वामी विवेकानंद तकनीकी विश्वविद्यालय, भिलाई, छत्तीसगढ़, भारत - 491001
[2]यांत्रिकी अभियंत्रण विभाग, भिलाई इंस्टिट्यूट ऑफ़ टेक्नोलॉजी, दुर्ग, छत्तीसगढ़, भारत – 491001
Email -shende.amrit@gmail.com

शब्दावली आयोग CSTT

संदर्भ

1. Arya, N., Goel, V., & Sunden, B. (2023). Solar air heater performance enhancement with differently shaped miniature combined with dimple shaped roughness: CFD and experimental analysis. Solar Energy, 250(August 2022), 33–50. https://doi.org/10.1016/j.solener.2022.12.024

2. Baissi, M. T., Brima, A., Aoues, K., Khanniche, R., & Moummi, N. (2020). Thermal behavior in a solar air heater channel roughened with delta-shaped vortex generators. Applied Thermal Engineering, 165. https://doi.org/10.1016/j.applthermaleng.2019.03.134

3. Bhagoria, J. L., Saini, J. S., & Solanki, S. C. (2002). Heat transfer coefficient and friction factor correlations for rectangular solar air heater duct having transverse wedge shaped rib roughness on the absorber plate. Renewable Energy, 25(3), 341–369. https://doi.org/10.1016/S0960-1481(01)00057-X

4. Deo, N. S., Chander, S., & Saini, J. S. (2016). Performance analysis of solar air heater duct roughened with multigap V-down ribs combined with staggered ribs. Renewable Energy, 91, 484–500. https://doi.org/10.1016/j.renene.2016.01.067

5. Dong, Z., Du, Q., Liu, P., Liu, Z., & Liu, W. (2023). A numerical investigation and irreversibility optimization of constantly grooved solar air heaters. Renewable Energy, 207(51736004), 629–646. https://doi.org/10.1016/j.renene.2023.03.055

6. Gawande, V. B., Dhoble, A. S., Zodpe, D. B., & Chamoli, S. (2016a). Experimental and CFD-based thermal performance prediction of solar air heater provided with chamfered square rib as artificial roughness. Journal of the Brazilian Society of Mechanical Sciences and Engineering, 38(2), 643–663. https://doi.org/10.1007/s40430-015-0402-9

7. Gawande, V. B., Dhoble, A. S., Zodpe, D. B., & Chamoli, S. (2016b). Experimental and CFD investigation of convection heat transfer in solar air heater with reverse L-shaped ribs. Solar Energy, 131, 275–295. https://doi.org/10.1016/j.solener.2016.02.040

8. Ghritlahre, H. K. (2022). Heat transfer and friction factor characteristic investigation of roughened solar air heater using arc-shaped wire rib roughness. International Journal of Ambient Energy, 43(1), 5085–5099. https://doi.org/10.1080/01430750.2021.1934115

9. Ghritlahre, H. K., Sahu, P. K., & Chand, S. (2020). Thermal performance and heat transfer analysis of arc shaped roughened solar air heater – An experimental study. Solar Energy, 199(January), 173–182. https://doi.org/10.1016/j.solener.2020.01.068

शुभावली आर्या CST

10. Hans, V. S., Gill, R. S., & Singh, S. (2017). Heat transfer and friction factor correlations for a solar air heater duct roughened artificially with broken arc ribs. Experimental Thermal and Fluid Science, 80, 77–89. https://doi.org/10.1016/j.expthermflusci.2016.07.022

11. Hans, V. S., Saini, R. P., & Saini, J. S. (2010). Heat transfer and friction factor correlations for a solar air heater duct roughened artificially with multiple v-ribs. Solar Energy, 84(6), 898–911. https://doi.org/10.1016/j.solener.2010.02.004

12. Kumar, A., & Kim, M. H. (2015). Effect of roughness width ratios in discrete multi V-rib with staggered rib roughness on overall thermal performance of solar air channel. Solar Energy, 119, 399–414. https://doi.org/10.1016/j.solener.2015.06.030

13. Saini, S. K., & Saini, R. P. (2008). Development of correlations for Nusselt number and friction factor for solar air heater with roughened duct having arc-shaped wire as artificial roughness. Solar Energy, 82(12), 1118–1130. https://doi.org/10.1016/j.solener.2008.05.010

14. Standard, A. (1977). 93-77,"Methods of testing to determine the thermal performance of solar collectors,." New York.

15. Verma, S. K., & Prasad, B. N. (2000). Investigation for the optimal thermohydraulic performance of artificially roughened solar air heaters. Renewable Energy, 20(1), 19–36. https://doi.org/10.1016/S0960-1481(99)00081-6

16. Wilson, E. E. (2000). Heat transmission from con- densing steam to "water in surface condensers and f e e d w a t e r heaters. 2033, 1233–1258.

17. Yadav, A. S., & Bhagoria, J. L. (2014). A CFD based thermo-hydraulic performance analysis of an artificially roughened solar air heater having equilateral triangular sectioned rib roughness on the absorber plate. International Journal of Heat and Mass Transfer, 70, 1016–1039. https://doi.org/10.1016/j.ijheatmasstransfer.2013.11.074

शब्दावली आयोग CSTT

5. सिरमौर जनपद (हि०प्र०) में सेवा केंद्र का पदानुक्रम

राम चन्द्र शर्मा

सार : सेवा केन्द्र वह स्थानीय इकाईयों हैं जिनके द्वारा अधिकांश सेवाएँ एवं सुविधाएँ प्रमुखतः एक निश्चित क्षेत्र के लोगों को प्रदान की जाती है।। सेवा केन्द्र अपने पदानुक्रमिक आकार के अनुमार ही ग्रामीण क्षेत्रों में सुविधाओं एवं सेवाओं को प्रदान करके ग्रामीण विकास का आधारीय ढांचा तैयार करते हैं। सेवा केन्द्र ऐसे केन्द्रीय स्थान के रूप में होते हैं, जो अपने सीमावर्ती क्षेत्र के लिए व्यापारिक एवं सामाजिक केन्द्र के रूप में कार्य करते है। शोध पत्र हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जनपद के सेवा केन्द्र पदानुक्रमको की स्थिति पर प्रस्तुत हैं। किसी भी क्षेत्र के विकास में सेवा केन्द्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। अध्ययन क्षेत्र के सेवा केंद्र को कार्य के आधार पर तीन श्रेणियों में विभाजित करते हैं।

मुख्य शब्द: सेवाकेंद्र, पदानुक्रम, क्षेत्रीय विकास, सामाजिक केन्द्र

1. प्रस्तावना

सेवा केन्द्र वह स्थानीय इकाईयां है, जिनके द्वारा अधिकांश सेवाएँ एवं सुविधाएँ प्रमुखतः एक निश्चित क्षेत्र के लोगों को प्रदान की जाती है। यह सेवा केन्द्र अपने इस निश्चित क्षेत्र में केन्द्रीय सुविधाजनक स्थिति में होते है तथा उससे परिवहन मार्गों द्वारा जुड़े होते है। यह केन्द्र वास्तव में अपने चारों और फैले निर्भर सीमावर्ती क्षेत्र के लिए आकर्षण केन्द्र रूप में होते है। यह सीमावर्ती क्षेत्र की सेवा करने के लिए ही बनाये जाते है। इसलिये इन केन्द्रों को ग्रामीण सेवा केन्द्र भी कहा जाता है। वे ग्रामीण भूमि पर नगरीय द्वीप के रूप में दिखाई देते हैं और अपने पड़ोसी क्षेत्रों को सुविधाएँ प्रदान करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं तथा उसके बदले में अनेक प्राथमिक वस्तुएँ अपने निवासियों के उपभोग व दूरवर्ती क्षेत्रों को भेजने के लिए प्राप्त करते हैं। यह केन्द्र इन प्राथमिक उत्पादनों को तैयार माल में बदलते हैं तथा दूरस्थ स्थानों पर भेजते हैं । सेवा केन्द्र अपने समीवर्ती जितनी दूर तक के क्षेत्र पर प्रभाव डाल पाता है, यह उसके कार्यिक स्तर व आकार पर निर्भर करता है। यदि सेवा केन्द्र छोटा है। व कम सुविधाएँ रखता है, तो उसका प्रभाव क्षेत्र भी कम विस्तृत होता है। तथा वह अनेक उच्च सुविधाओं के लिए बड़े सेवा केन्द्रों पर निर्भर करने वाला होता है। इस प्रकार सेवा केन्द्रों का भी एक पदानुक्रम पाया जाता है। यह सेवा केन्द्र खुदरा विक्रय, मनोरंजन, सांस्कृतिक, व्यावसायिक और इसी प्रकार की अन्य सेवाएँ प्रदान करते है, यह सेवाएँ समीपवर्ती चारों और फैले क्षेत्र के लागों द्वारा प्राप्त की जाती है।

शब्दावली आयोग

एस० जे० ए० जाफरी ने सेवा केन्द्रों की पहचान सेवाओं व कार्यों को उनके प्रकार व गुण के अनुसार मान प्रदान करके की है। उन्होनें उत्तर प्रदेश के चार पहाडी जिलों बस्तियों का पदानुक्रम निर्धारित करते हुये बताया है, कि वहाँ कार्यों का औसत मान 8.3 है। अतः जो गांव इस औसत से अधिक मान प्राप्त करता है। उसे सेवा केन्द्र का नाम दिया जा सकता है। इससे स्पष्ट होता है। कि जो बस्ती आकृषित कार्यों की प्रमुखता रखती है। वही सेवा केन्द्र का पद प्राप्त करती है।

के० वी० सुन्दरम का विचार है, कि सेवा केन्द्र ग्रामीण समुदाय के आकर्षण बिन्दु होते है। यह केन्द्र विविध प्रकार के कार्य व सेवाएँ इस क्षेत्र को प्रदान करते है। तथा इससे पारस्परिक निर्भरता का सम्बन्ध रखते है। इनकी पहचान द्वारा एक प्रदेश में सेवा व सुविधाओं के वितरण के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। जो सुविधाओं की दृष्टि से कम या अधिक विकसित है। इस प्रकार यह अध्ययन समन्वित क्षेत्रीय नियोजन की और ध्यान देता है।

2. निर्धारण की विधियाँ (Methods of Determination)

सेवा केन्द्रों के पदानुक्रम निर्धारण करने के लिये अब तक जितनी भी विधियाँ अपनायी गयी है, उन सभी विधियों के पांच समूहों में रखा जा सकता है-

1. कार्यों की संख्या तथा विविधता के आधार पर सेवा केन्द्रों का पदानुक्रम
2. कार्यों की केन्द्रीयता के आधार पर सेवा केन्द्रों का पदानुक्रम
3. कार्यों के संख्यात्मक मान (**Numerical value**) से प्राप्त केन्द्रीयता सूचकांक के आधार पर सेवा केन्द्रों का पदानुक्रम
4. जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना के आधार पर सेवा केन्द्रों का पदानुक्रम
5. सिरमौर जनपद के ग्रामीण सेवा केन्द्रों की पहचान एवं पदानुक्रम

शोधकर्ता ने जनपद के लिये उपर्युक्त अध्ययनों के आधार पर एक ऐसी विधि का प्रयोग किया है। जो ग्रामीण सेवा केन्द्रों, सेवा केन्द्रों या केन्द्रीय स्थानों, नगरीय बस्तियों को अन्य बस्तियों से अलग करती है। तथा साथ-साथ उनका पदानुक्रम भी निर्धारित करती है। इस विधि अनुसार यह पता लगाया जा सकता है कि प्रदेश में कहाँ केन्द्रीय कार्यों का जमाव अधिक है। तथा कहाँ पर कार्यों का अभाव है। इस विधि के अन्तर्गत प्रदेश में स्थित सभी बस्तियों में कार्यों व सेवाओं के आधार एवं उनका स्तर ज्ञात करना पड़ता है। कि किस-किस बस्ती में व कौन-कौन से कार्य पाये जाते है। इसके बाद इन कार्यों को सूचीबद्ध किया जाता है। तथा उन्हें स्तर व विशेषता के आधार पर दान सेवा केन्द्रों का विभाजन करते है, यह किसी भी सेवा केन्द्र का निर्धारण करने के लिए उस स्थान पर स्थित केन्द्रीय कार्यों के स्तर व प्रकार को आधार माना गया है, ये केन्द्रीय कार्य कुछ ही बस्तियों में स्थित होते है। परन्तु इनमें से कुछ कार्य कुछ

विशेष केन्द्रों में स्थित होते है, जैसे प्रशासनिक कार्य, शिक्षा, स्वास्थ्य, संचार, यातायात, व्यापार तथा वित्त, इनको मुख्य केन्द्रीय कार्य के रूप में मान्यता प्रदान की जाती है, तथा गौण कार्य जो स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार केन्द्रीय स्थलों पर स्वयं विकसित हो जाते है। जैसे राशन की दुकान, टेलर्स, पान की दुकान, नाई, कोहाकीमा आदि इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन में मुख्य कार्यों को सम्मिलित किया जाता है, जिसके आधार पर केन्द्रीय स्थलों का निर्धारण किया जाता है, इन कार्यों को तीन स्तरों में विभक्त किया गया है, जो निम्नवत है।

तालिका-1 कार्यों के आधार पर सेवा केन्द्र का पदानुक्रम निर्धारण

प्रथम व उच्च स्तर पर के कार्य	**द्वितीय व मध्यम स्तर के कार्य**	**तृतीय निम्न स्तर के कार्य**
1. इन्टरमीडिस्ट कालेज	1. हाई स्कूल	1. अनोपचारिक स्कूल
2. डिग्री कालेज	2. मातृ शिशू कल्याण केन्द्र	2. प्राइमरी स्कूल
3. अस्पताल	3. औपद्यालय केन्द्र	3. जूनियर हाई स्कूल
4. पोस्ट व टेलीग्राफ बूथ	4. प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	4. शाखा डाकघर
5. पब्लिक टेलीफन बूथ	5. उप डाकघर	5. फुटकर किराना स्टोर
6. पुलिस थाना	6. पटवारी चैकी	6. कारपेंटर
7. राष्ट्रीयकृत बैंक	7. मीट की दुकान	7. टेलर
8. प्राइवेट कलीनिक	8. स्टॉक मैंन सेन्टर	8. पान, बीड़ी, सिगरेट की दुकान
9. गाडी बुकिंग केन्द्र	9. सरकारी खाद बीज वि0 केन्द्र	9. चाय की दुकान
10. पेट्रोल पम्प	10. बस स्टेन्ड	10. सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान
11. रेडियो, टी0वी0	11. साइकिल रिपेयर, किराये पर	11. लोहार की दुकान
12. बिक्री केन्द्र	12. जनरल प्रोविजन स्टोर	12. विद्युत आपूर्ति
13. प्रिंटिंग प्रेस	13. दैनिक खुदरा स्टोर	
14. होल सेल बाजार	14. नाई की दुकान	

शब्दावली आयोग CSTT

15. केमिस्ट की दुकान	15. रेस्टोरेंट	
16. ऑटो मोबाइल मोटर	16. फल सब्जी की दुकान	
17. वर्कशॉप	17. लेब्रोटी की दूकान	
18. डाईक्लीनर्स की दुकान	18. सरकारी बैंक	
19. हार्डवेयर की दुकान	19. कंगन चूड़ी की दुकान	
20. फर्नीचर की दुकान	20. पुस्तक की दुकान	
21. मनोरंजन केन्द्र	21. कपड़े की दुकान	
22. फोटोग्राफर की दुकान	22. लाज	
23. मदिरा की दुकान	23. सोने के जेवर विक्रेता	
24. गिप्ट सेन्टर	24. मिठाई की दुकान	
25. होटल	25. विद्युत आपूर्ति	
26. रेडीमेंट गारमेंट	26. मोटर मार्ग	
27. बेकरी		
28. जूते की दुकान		
29. कम्प्यूटर वर्कस		
30. स्वयं सेवी सस्थाएं		
31. टेलीफोन		
32. आलू मण्डी		

स्रोत- प्राथमिक आंकडों के आधार पर

शब्दावली आयोग CSTT

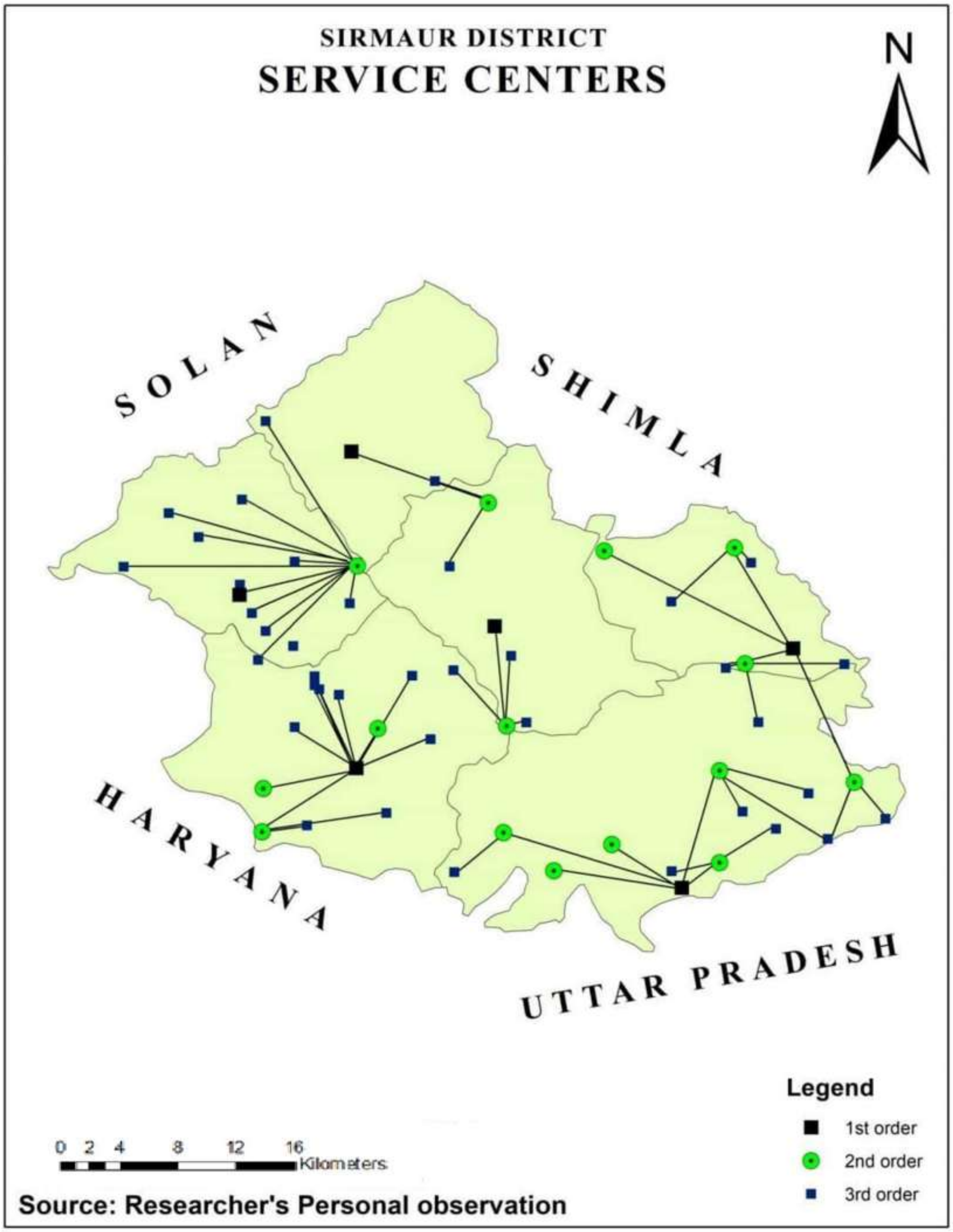
SIRMAUR DISTRICT
SERVICE CENTERS
N
SOLAN
SHIMLA
HARYANA
UTTAR PRADESH
Legend
1st order
2nd order
3rd order
0 2 4 8 12 16
Kilometers
Source: Researcher's Personal observation

तालिका -2 सिरमौर जनपद में सेवा केन्द्रों का पदानुक्रम		
I उच्च स्तर के	**II द्वितीय या मध्यम स्तर के**	**III प्रथम/निम्न स्तर के**
1- शलाई	1- काफोटा	1- रेणुका जी
2- पांवटा साहिब	2- रोनहट	2- जाखाना
3- नाहन	3- सतोन	3- टिम्बी
4- संगड़ाह	4- त्रिलोकपुर	4- नैनीधार
5- राजगढ़	5- दादहु	5- कमराहु
6- सराहन	6- नौराधार	6- परवाला
	7- माजरा	7- बाली कोटी
	8- काले आम	8- भंगायणी
	9- धौला कुआं	9- आंबुआ
	10- नंगेता	10- खोधरी
	11- निहालगढ़	11- राजवन
	12- कोलार	12- जमीनी वाला
	13- बरु साहिब	13- रजाना
	14- जमता	14- बोगधार
		15- गिरी पुल
		16- दीडग
		17- टीकर
		18- पानवा

शब्दावली आयोग CST

		19- बोहल
		20- नियोग
		21- Nihog
		22- धीरेन
		23- सुकेती
		24- खलोग
		25- चलोग
		26- जुआन
		27- बना की सेर
		28- नारंग
		29- मानगढ़
		30- नैना टिकर
		31- बनेटी
		32- हरिपुर खोल
		33- चकली
		34- पंजाल
		35- कोटला मोलर

3. निष्कर्ष

किसी भी क्षेत्र का सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए सेवा केंद्र होना अति आवश्यक है क्योंकि सेवा केन्द्रों के कारण ही उन क्षेत्र में विकास कार्य को बढ़ावा मिलता है यह केन्द्र वास्तव में अपने चारों और फैले निर्भर सीमवर्ती क्षेत्र के लिए आकर्षण केन्द्र रूप में होते हैं। वे ग्रामीण भूमि पर नगरीय द्वीप के रूप में दिखाई देते है और अपने पड़ोसी क्षेत्रों को सुविधाएँ प्रदान करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। सेवा केन्द्रों का भी एक पदानुक्रम पाया जाता है।

शब्दावली आयोग CSTT

यह सेवा केन्द्र खुदरा, विक्रय, मनोरंजन, सांस्कृतिक, व्यावसायिक सेवाएँ समीपवर्ती चारों और फैले क्षेत्र के लागों द्वारा प्राप्त की जाती हैं।

सहायक- आचार्य
केंद्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
वेद व्यास परिसर बलाहर काँगड़ा (हि० प्र०)

संदर्भः

1. कौशिक, अनुभ, 2005,''पर्यावरण अध्ययन'' न्यू एज पब्लिशर्स, पेज नं0-157 एवं कौशिक, सी0पी0
2. Tiwari, P.C. 1998, "Natural Resources and Sustainable Development in Himalaya. P.P. No. 170.
3. De, A.K. & 2005, "Environmental Studies", New Age De, A.K., Publishers, P.P. 63.
4. Tiwari, P.C. 1998, Natural Resources and Sustainable Development in Himalaya. P.P. No. 176.
5. Tiwari, P.C. 1998, Natural Resources and Sustainable Development in Himalaya. P.P. No.177.
6. Mathani, B.P. 1982, Social Forestry its planning and management" Himalayan Man and Nature, Vol. 5 New Delhi P.P. No. 21.
7. नेगी, पी0एस0 2007, '' पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण भूगोल'' रस्तोगी पब्लिकेशन्स, पेज नं0- 38
8. Rana, K.S. 1984 "Resource Analysis and Area Development in song basin" Unpublished D.Phil. P.P. 227.
9. Rana, K.S. 1984 "Resources Analysis and Area Development in Song Basin" unpublished D.phill thesis, P.P. 235.
10. Rana, K.S. 1984 "Resource Analysis and Area Development in song Basin" Unpublished D.phill thesis, P.P. 236.
11. Balokhra J.M. 1995 "The Wonderland Himachal Pradesh" An Encyclopedia, H.G. Publications [India], New Delhi, P.P. No. 941
12. Kayastha, S.L. 1968, "Trend of Population Growth in U.P. No.-45.

शब्दावली आयोग CSTT

6. सूचक के रूप में मिट्टी के प्रकिण्व का उपयोग करके हिमाचल प्रदेश की कृष्ट और अकृष्ट मिट्टी के स्वास्थ्य का तुलनात्मक अध्ययन

[1*]शिवानी त्यागी, [1]ममतेश सिंह, [2]गजेंद्र प्रताप सिंह

सार: इस अध्ययन में उपयोग किए जाने वाले कृष्ट क्षेत्र (Cultivated Area) और अकृष्ट क्षेत्र क्रमश: हिमालय के पर्वतीय घाटी क्षेत्र में स्थित हैं। यहाँ कृषि कार्यों में खाद का उपयोग इसलिए नहीं किया जाता है, क्योंकि मुख्य रूप से यहाँ जैविक खेती होती है। वर्तमान अध्ययन में, हिमाचल प्रदेश के कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र और प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र में मृदा स्वास्थ्य की तुलना की गई है। मिट्टी के प्रकिण्व (soil enzymes) गतिविधि की माप, मिट्टी की गुणवत्ता का उल्लेख करने की अनुमति देती है। यह मानवजनित गड़बड़ी के कारण मिट्टी के गुणों में बदलाव के एक अच्छे संकेतक के रूप में कार्य करती है। वर्तमान अध्ययन में यह देखा गया है कि अकृष्ट (uncultivated) मिट्टी की तुलना में खेती की गई मिट्टी में डिहाइड्रोजनेज और नाइट्रेट-रिडक्टेस गतिविधि अधिक पाई गई है, जबकि यूरेस की गतिविधि अकृष्ट मिट्टी में खेती की गई मिट्टी की तुलना में अधिक थी।

मुख्य शब्द (Key Words): सूचक, हिमाचल प्रदेश, मिट्टी

1. प्रस्तावना

यह लेख मिट्टी के भौतिक- रासायनिक मापदंडों तथा मिट्टी की उर्वरता की स्थिति की जानकारी हेतु अहम् भूमिका का उल्लेख करता है। मृदा के भौतिक और रासायनिक गुण एक विशेष मिट्टी में पाए जाने वाले सूक्ष्म वनस्पतियों और सूक्ष्म जीवों के प्रकार और गुणों को नियंत्रित करते हैं। वर्तमान जांच से पता चलता है कि मिट्टी की उर्वरता का सुझाव देने के लिए मिट्टी के भौतिक-रासायनिक मापदंडों का अत्यधिक महत्व है। यद्यपि खेती, मृदा की उर्वरता में एक क्षतिकारक हस्तक्षेप है, परन्तु उचित खेती और बेहतर फसल प्रबंधन के साथ, मृदा की उर्वरता को नुकसान होने से बचाया जा सकता है। पारिस्थितिकी तंत्र (ecological system) के संदर्भ में, मिट्टी के प्रकिण्व की भूमिका का अध्ययन काफ़ी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मिट्टी के प्रकिण्व और उनकी गतिविधियों को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय कारकों के बीच संबंधों का वर्णन करता है [2]।

2. सामग्री और शोध विधि

चम्बा, हिमाचल प्रदेश, भारत के करिया गाँव से अकृष्ट और कृष्ट मिट्टी के लिए गए सभी नमूनों को प्रयोगों के लिए उपयोग किया गया है। पौधों की सामग्री, पत्थर और अन्य सामग्री को इन नमूनों (sample) से हाथ से उठाकर हटा दिया गया। नमूने प्रयोगशाला में लाए गए, और विश्लेषण करने तक -4 °C में संग्रहीत किए गए। एक 4 मिमी जाल छलनी के माध्यम से छाने गये नमूने में से कुछ को पीएच, सूक्ष्मजीवी गतिविधि और % C, H, N, S, O विश्लेषण के लिए 40 °C पर संग्रहीत किया, और मिट्टी को आणविक विश्लेषण के लिए -200 °C में संग्रहीत किया गया।

2.1 विश्लेषणात्मक विधि

मिट्टी में डिहाइड्रोजनेज गतिविधि का निर्धारण मानक विश्लेषणात्मक विधि के द्वारा किया गया [7],[13]। यह विधि ट्राइफिनाइल फॉर्मेज़ान (टीपीएफ) में 2,3,5-ट्राइफेनिलट्राजोलियम क्लोराइड (टीटीसी) की कमी पर आधारित है। 2,3,5-ट्राइफेनिलट्राजोलियम क्लोराइड पानी में घुलनशील है, और इसकी रेडॉक्स क्षमता लगभग 0.08 v है। यह कई डिहाइड्रोजनेज के लिए इलेक्ट्रॉन ग्राह्य के रूप में कार्य करता है [16]। लगभग सभी सूक्ष्मजीव 2,3,5-ट्राइफेनिलट्राजोलियम क्लोराइड को ट्राइफिनाइल फॉर्मेज़ान में परिवर्तित कर देते हैं। पांच ग्राम खेत (field) की नम मिट्टी (ट्रिप्लिकेट्स) को परखनली में 1 मिलीलीटर (मि.ली.) ग्लूकोज विलयन (30 मि.ग्रा. l-1) के साथ और 4.5 मि.ली. का 0.1 मि.ली. ट्राइबफर (पी.एच. 7.6- 7.8) में 2,3,5-ट्राइफेनिलट्राजोलियम क्लोराइड के 0.1% घोल में मिलाया गया। इसे 30° C पर 24 घंटे के लिए ऊष्मायन (incubation) के बाद; ट्राइफिनाइल फॉर्मेज़ान के गठन के लिए 25 मिलीलीटर एसीटोन के साथ निकाला गया। ट्राइफिनाइल फॉर्मेज़ान के लाल रंग की तीव्रता का अनुमान Labomed स्पेक्ट्रमी प्रकाशमापी (UVD-3500) का उपयोग करके 485 एन.एम. पर रिक्त (बिना क्रियाजार नियंत्रण प्रयोग) के तुलना मे लगाया गया। ट्राइफिनाइल फॉर्मेज़ान की सांद्रता (ग्रा. प्रति शुष्क भार में), मिट्टी अंशांकन वक्र (soil calibration curve) द्वारा निर्धारित की गई [3]।

नाइट्रेट रिडक्टेस गतिविधि मानक वर्णमिति तकनीक(standard colorimetry technique) का उपयोग करके निर्धारित की गई थी [9]। ट्रिप्लिकेट्स में पांच ग्राम मिट्टी को 4 मि.ली. 2, 4 डिनिट्रोफेनोल (0.9 mM) क्रियाजार विलयन, 1 मि.ली. (पोटेशियम नाइट्रैट, 25 mm) और 5 मि.ली. आसुत जल (distilled water) के साथ मिश्रित किया गया। इसके उपरांत पेंच कैप के साथ बंद करके 24 घंटो के लिए 25 °C पर लगाया गया और समान घटकों को नियंत्रण शीशियों के साथ जोड़ा गया जो -20 °C पर थे। ऊष्मायन के बाद इन्हें 10 मि.ली 4 M पोटैशियम क्लोराइड समाधान हेतु दोनों नमूनों और नियंत्रण में जोड़ा गया और संक्षिप्त मिश्रण के तुरंत बाद निस्यंदन (filtration) किया गया। निस्यांदित विलयन (filtered solution) से पांच मि.ली का उपयोग करके 3 मि.ली.

भारतवाणी आयोग CSTT

अमोनियम क्लोराइड बफर (0.19M) और 2 मि.ली. रंग अभिकर्मक के साथ रंग विकास के लिए परिक्षण किया गया। उत्पादित NO_2 - µg N g, 1 DM की सांद्रता 520 एनएम पर एक Labomed स्पेक्ट्रमी प्रकाशमापी (UVD-3500) के माध्यम से रंग की तीव्रता निर्धारित की गई थी।

कैंडेलर (1995 B) असंबद्ध विधि के अनुसार यूरिएस गतिविधि का विश्लेषण किया गया [10]। 5 ग्रा. मिट्टी के नमूनों के ट्रिप्लिकेट्स को 2.5 मि.ली. क्रियाजार (यूरिया, 79.9 मिमी) के साथ मिलाया गया; जबकि समान रूप से आसुत जल की मात्रा नियंत्रण नमूनों में जोड़ी गई, और दोनों को 2 घंटे के लिए 37 °C पर ऊष्मायन किया गया। ऊष्मायन के बाद, मिश्रित की गई क्रियाजार समाधान के तहत 2.5 मिलीलीटर को भी नियंत्रित नमुने में मिलाया गया और अब नमूनों में समान मात्रा को बनाने के लिए आसुत जल की समान मात्रा मिलाई गई। उत्पन्न अमोनिया को 50 मि.ली. पोटेशियम क्लोराइड (2 M) के साथ निस्भेदन (infilteration) किया गया। एक मिलीलीटर निस्भेदन रंग विकास के लिए इस्तेमाल किया गया । इस प्रकार 1 मि.ली. निस्भेदन 9 मि.ली. आसुत जल, 5 मि.ली. अभिकर्मक A (100 मि.ली. सोडियम हाइड्रॉक्साइड (0.3 M) + 100 मि.ली. सोडियम सैलिसिलेट (1.06 M) + 120 ग्रा. सोडियम नाइट्रोप्रेसाइड) और 2 मि.ली. डाइक्लोरोसायनोसाईट (39.1 mM) के साथ मिलाया गया था। कुल सामग्री को हिलाया गया और रंग विकास के लिए कमरे के तापमान पर 30 मिनट तक रखा गया। प्रकाशिक घनत्व 690 nm पर विलयन स्पेक्ट्रमी प्रकाशमापी का उपयोग करके दर्ज किया गया। प्रकिण्व गतिविधि की गणना एक मानक वक्र का उपयोग करके की गई थी।

3. परिणाम और परिचर्चा

चित्र 1: कृष्ट मिट्टी दिखा रहा है

चित्र 2: अकृष्ट मिट्टी दिखा रहा है

भौतिक-रासायनिक विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि मिट्टी रेतीली दोमट प्रकार की थी, मिट्टी का पी.एच. 7.56 ± .01% था, और कृष्ट भूमि की मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ/जैव द्रव्य 2.11 ± .17 और अकृष्ट भूमि की मिट्टी में 1.115 ± 0.09 था। शुष्क भार, असिंचित और कृष्ट भूमि की मिट्टी में क्रमशः 92 ± 0.40 और 73.92 ±0.18 था। मिट्टी में जलांश (moisture content), कृष्ट भूमि और असिंचित मिट्टी में क्रमशः 6.75 ± 0.40 और 26.08 ± 0.18 था। मिट्टी में विनिमयशील पोटेशियम और सोडियम की सांद्रता, कृष्ट भूमि मिट्टी में क्रमशः 300 ± 2.02 और 9.40 ± 0.06 और अकृष्ट भूमि मिट्टी में क्रमशः 156.72 ± 1.34 और 10.43 ± 0.19 पाई गयी। कृष्ट भूमि की मिट्टी का पी. एच. प्राकृतिक मिट्टी से कुछ अधिक देखा गया,जो कि एक ही फ़सल को कई बार उगाने के कारण हो सकता है। कृष्ट भूमि की मिट्टी की तुलना में प्राकृतिक मिट्टी में जैव द्रव्य (कार्बनिक पदार्थ) अधिक पाए गये।

धनायन विनिमय क्षमता (Cataion Exchange Capacity) मिट्टी के खनिजों को अवशोषित करने और विनिमय करने की क्षमता को दर्शाता है। मृदा कणों और कार्बनिक पदार्थों की सतहों पर ऋण आवेश होता है। खनिज धनायन अकार्बनिक और कार्बनिक मिट्टी के कणों की सतह के ऋण आवेशों का अधिशोषण कर सकते हैं। आमतौर पर, मिट्टी में चिकनी मिट्टी और कार्बनिक पदार्थ जितने अधिक होते हैं, धनायन विनिमय क्षमता उतनी अधिक होती है। विनिमयशील सोडियम, सोडियम की संयोजकता के सापेक्ष, धनायन विनिमय संकुल में सोडियम आयनों द्वारा कब्जा की गयी धनायन विनिमय साइटों की मात्रा होती है। साथ ही, हम जानते हैं कि सोडियम की मात्रा अप्रत्यक्ष रूप से पौधों को उपलब्ध पोटेशियम की मात्रा के आनुपातिक होती है।

वर्तमान अध्ययन में, यह देखा गया कि प्राकृतिक या अकृष्ट भूमि की मिट्टी की तुलना में कृष्ट भूमि की मिट्टी में विनिमयशील सोडियम की मात्रा अधिक थी, जिसका संभावित कारण मानवजनित गतिविधियाँ हो सकती हैं। इस अध्ययन में, यह पाया गया कि कृष्ट भूमि की तुलना में प्राकृतिक मिट्टी में उच्च श्वसन दर दिखाई दी। हालाँकि, मिट्टी के विविध कार्यों को दर्शाने का उद्देश्य, मिट्टी की गुणवत्ता के आंकलन के लिए विभिन्न भौतिक, रासायनिक और सूक्ष्म जीवविज्ञानी मापन के एकीकरण की आवश्यकता होती है।

शब्दावली आयोग CSTT

तालिका 1: कृष्ट एवं अकृष्ट भूमि की मिट्टी के भौतिक गुण

स्थान	पी. एच.	धनायन विनिमय क्षमता Na+	धनायन विनिमय क्षमता K+	शुष्क भार प्रतिशतता	जलांश प्रतिशतता	जैव द्रव्य प्रतिशतता	कण आमाप वितरण			मिट्टी का प्रकार
							% बालू	% सिल्ट	% चिकनी मिट्टी	
हिमाचल कृष्ट भूमि	7.56 ± 0.01	9.40 ± 0.06	300.27 ± 2.02	92.15 ± 0.40	6.75 ± 0.40	2.11 ± 0.17	61	25	14	रेतीले चिकनी बलुई मिट्टी
हिमाचल अकृष्ट भूमि	7.37± 0.03	10.43 ± 0.19	156.72 ± 1.34	73.92 ± 0.18	26.08 ± 0.18	1.15 ± 0.09	56.5	30	14.5	रेतीले चिकनी बलुई मिट्टी

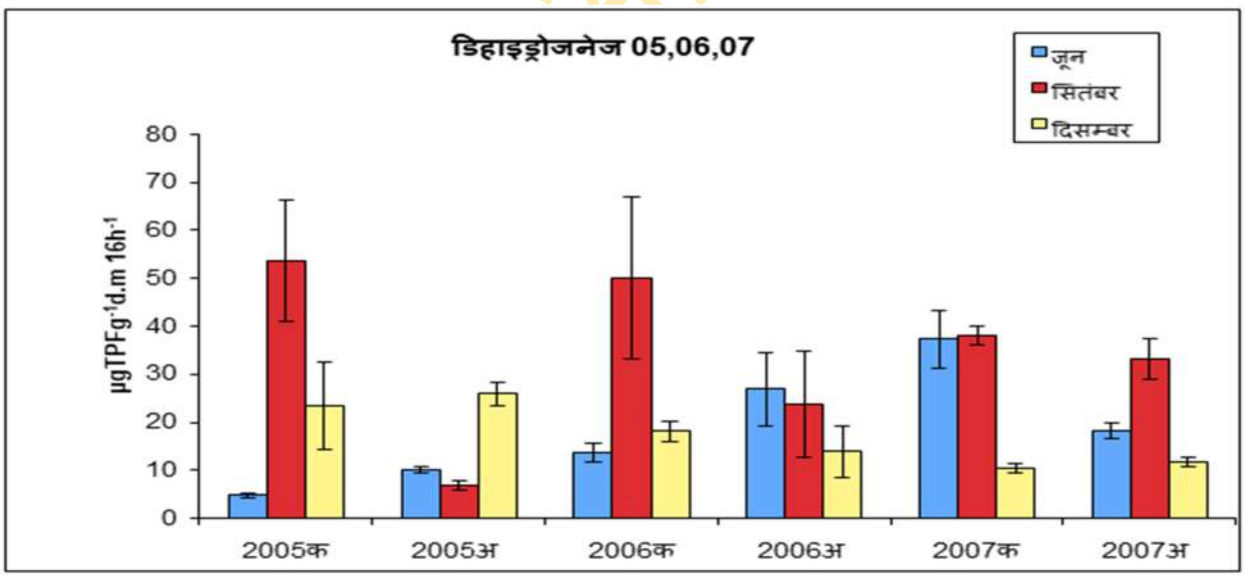

चित्र 2: वर्ष 2005, 2006 और 2007 में डीहाइड्रोजनेज गतिविधि क: कृष्ट भूमि ; अ: अकृष्ट भूमि

पारिस्थितिकी तंत्र के कार्य घटक, पारिस्थितिकी प्रणालियों के बीच गुणवत्ता और अंतः क्रियाओं का वर्णन करने और उनके बारे में अनुमान लगाने में बहुत उपयोगी होते हैं। मृदा प्रकिण्वों (soil enzymes) का सबसे महत्वपूर्ण उपयोग

मृदा स्वास्थ्य पर विभिन्न आदानों के प्रतिकूल प्रभावों का आकलन करना है।अतः, मृदा प्रकिण्वों के व्यवहार पर अम्लीय वर्षा, भारी धातुओं, कीटनाशकों और अन्य औद्योगिक और कृषि रसायनों की गतिविधियों के प्रभाव की जांच के लिए कई समांनांतर अध्ययन किए गए। डिहाइड्रोजनेज (dehydrogenase) प्रकिण्व सूक्ष्मजीवी ऑक्सीडो-रिडक्टेस चयापचय (metabolism) में शामिल है। इस प्रकिण्व की गतिविधि मूल रूप से मिट्टी के जीवजात समूह (biota) की चयापचय स्थिति पर निर्भर करती है। इसलिए, यह सूक्ष्मजीवी आबादी के साथ-साथ मिट्टी की क्षमता में भी बदलाव को दर्शाता है। वर्तमान अध्ययन में, तीनों वर्षों में प्राकृतिक मिट्टी की तुलना में खेती की गई मिट्टी में डिहाइड्रोजनेज (dehydrogenase) गतिविधि अधिक पाई गई। सितंबर में अपेक्षाकृत उच्च गतिविधि देखी गई, जिसका कारण इस महीने में जीवाणुओं के विकास के लिए इष्टतम तापमान (optimal temperature) की स्थिति हो सकती है। उपरोक्त परिणाम एक अध्ययन के अनुसार हैं, जिसमें बताया गया है कि रासायनिक उर्वरक के साथ आपूर्ति की गई मिट्टी की तुलना में खाद के साथ आपूर्ति की गई मिट्टी में अधिक सूक्ष्मजीवी गतिविधि थी [12]। उसी प्रकार एक अन्य अध्ययन में, लोज़ और ओगार्ड 1997 ने भी जैविक खेतों में एंजाइम गतिविधि को बढ़ा हुआ पाया था [11]।

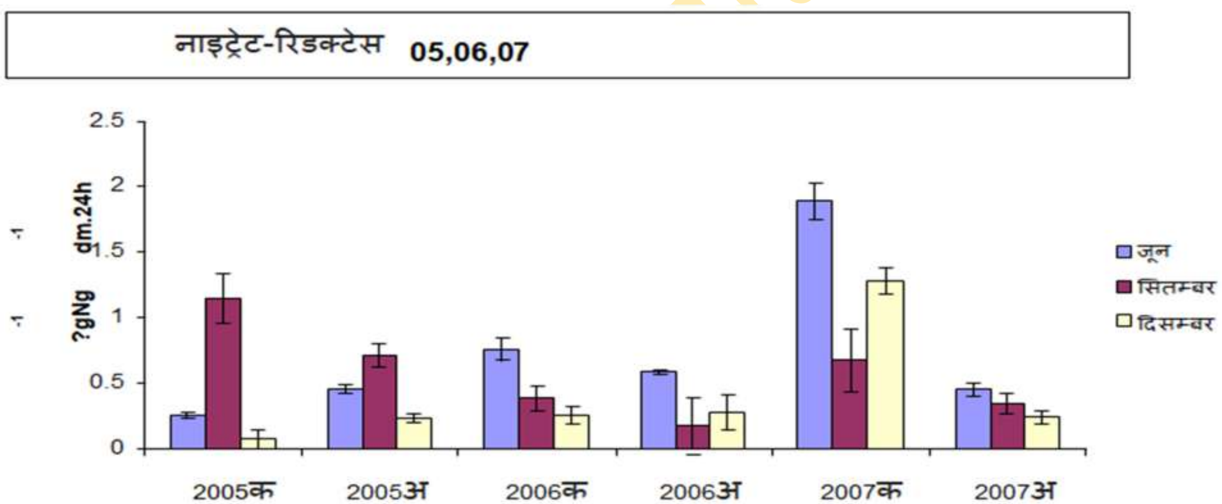

चित्र 3: कृष्ट एवं अकृष्ट भूमि में नाइट्रेट-रिडक्टेस (Nitrate reductase) प्रकिण्व गतिविधि (2005-2007) – क : कृष्ट; अ : अकृष्ट

नाइट्रेट-रिडक्टेस (Nitrate reductase) गतिविधि को पोटैशियम क्लोराइड विलयन के साथ निकले नाइट्रेट द्वारा निष्कर्षण के दौरान 520 nm पर मापा गया। नाइट्रेट-रिडक्टेस फसलों में नाइट्रेट आत्मसात्करण (assimilation) में

शामिल एक महत्वपूर्ण प्रकिण्व है। वर्तमान जांच में, यह देखा गया है कि, प्राकृतिक मिट्टी की तुलना में कृष्ट भूमि मिट्टी में नाइट्रेट-रिडक्टेस गतिविधि अधिक थी।

उर्वरक के रूप में यूरिया के उपयोग में वृद्धि का कारण मृदा में यूरिएस (urease) गतिविधि ने काफी ध्यान आकर्षित किया है।वर्तमान जांच अध्ययन में यह देखा गया है कि, कृष्ट भूमि मिट्टी की तुलना में प्राकृतिक मिट्टी में यूरिएस (urease) की गतिविधि अधिक थी। वर्ष 2005 में सितंबर महीने में उच्चतम यूरिएस (urease) गतिविधि देखी गई, जो संभवतः सूक्ष्मजीवों की उच्च गतिविधि को इंगित करता है। सिंह और कुमार के द्वारा यह खोज 2008 में की गई थी जिसके अनुसार, एसिटामिप्रिड (acetamiprid) के प्रयोग से मिट्टी में उर्वरा गतिविधि प्रभावित होती है [17]। जून 2006 में उच्चतम यूरिएस (urease) गतिविधि पाई गई थी जबकि 2007 में सभी तीन महीनों में प्राकृतिक और कृष्ट भूमि क्षेत्र में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं देखा गया था। 1989 के एक शोध में पाया गया था, कि गेहूं और मक्का के भूसे के प्रयोग से मिट्टी की उर्वरा गतिविधि को बढ़ावा मिला है [5]। 5 वर्ष पुराने एक अन्य अध्ययन में, घास और फली संगठन में यूरिया की स्थानिक परिवर्तनशीलता का मूल्यांकन किया गया और यह पाया गया कि यूरिएस गतिविधि अत्यधिक परिवर्तनशील थी [1]। जबकि, गुप्ता और भारद्वाज, 1990 [6] ने यह पाया कि अकृष्ट मिट्टी की तुलना में घास के मैदानों और जंगलों में यूरिएस की गतिविधि अधिक थी। यूरिएस, वह प्रकिण्व है, जो यूरिया के हाइड्रोलिसिस को उत्प्रेरित करता है। इसका उपयोग मृदा प्रबंधन में मिट्टी की गुणवत्ता में परिवर्तन के मूल्यांकन में भी व्यापक रूप से किया गया है।[15; 16]

जैविक उर्वरकों के प्रयोग के कारण और मवेशियों के मल के घोल को मिट्टी में मिलाने के पश्चात इसकी गतिविधि बढ़ जाती है [4; 8; 14]। इस अध्ययन में, सूक्ष्मजीवी गतिविधि को स्वस्थ मिट्टी के संकेत के रूप में पाया गया, तथा साथ ही यह देखा गया कि प्रकिण्व गतिविधियां, अकृष्ट भूमि मिट्टी की तुलना में जैविक प्रबंधित मिट्टी में काफी अधिक थीं।

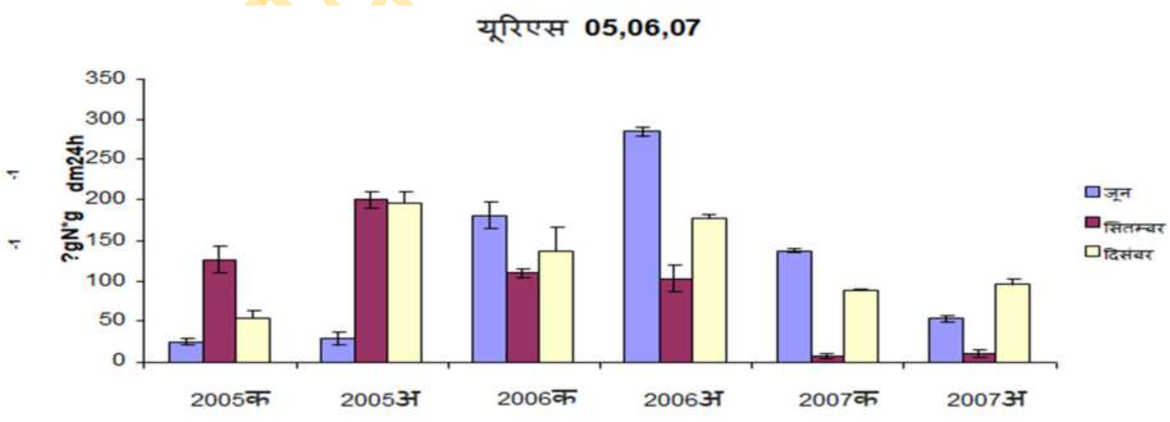

चित्र 4: कृष्ट एवं अकृष्ट भूमि में यूरिएस प्रकिण्व गतिविधि (2005-2007) क -कृष्ट; अ : अकृष्ट

3. निष्कर्ष

कृष्ट भूमि की तुलना में, अकृष्ट भूमि वाली मिट्टी में प्रकिण्व सक्रियता का मूल्य बहुत कम था । कृष्ट भूमि में उच्च डिहाइड्रोजनेज प्रकिण्व गतिविधि, सूक्ष्म जीवों की गतिविधि को बढ़ाने में जैविक खाद की भूमिका को दर्शाती है। जैविक रूप से प्रबंधित मिट्टी में नाइट्रेट रिडक्टेस गतिविधि भी काफी अधिक थी, जबकि अकृष्ट भूमि में यूरिया गतिविधि अधिक देखी गई जिससे अकृष्ट भूमि मिट्टी में उच्च सूक्ष्म जीवों की गतिविधि का संकेत मिलता है। इसलिए अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जैविक खाद सूक्ष्म जीवों की गतिविधि को बढ़ा रही है और मिट्टी के एंजाइम इसे इंगित कर रहे हैं।

[1]गार्गी महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय), नई दिल्ली- 110049
[2]संगणकीय एवं समेकित विज्ञान संस्थान,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली 110067
सम्पर्क- shivanityagi80@gmail.com

आभार

लेखक प्राचार्या, गार्गी महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय) और प्रोफेसर दिलीप कुमार सिंह को उनके मार्गदर्शन, समर्थन, धन और वित्त पोषण सहायता के लिए धन्यवाद प्रस्तुत करते हैं।

संदर्भ

1. Bonmati, M., Ceccanti, B., & Nanniperi, P. J. S. B. (1991). Spatial variability of phosphatase, urease, protease, organic carbon and total nitrogen in soil. Soil Biology and Biochemistry, 23(4), 391-396.
2. Burns, R. G. (1982). Enzyme activity in soil: location and a possible role in microbial ecology. Soil biology and biochemistry, 14(5), 423-427.
3. Casida Jr, L. E., Klein, D. A., & Santoro, T. (1964). Soil dehydrogenase activity. Soil science, 98(6), 371-376.
4. Chakrabarti, K., Sarkar, B., Chakraborty, A., Banik, P., & Bagchi, D. K. (2000). Organic recycling for soil quality conservation in a sub-tropical plateau region. Journal of Agronomy and crop Science, 184(2), 137-142.

5. Guan, S. Y. (1989). Studies on the factors influencing soil enzyme activities: I. Effects of organic manures on soil enzyme activities and N and P transformations. Acta Pedologica Sinica, 26,72-78.
6. Gupta, R. D., & Bhardwaj, K. K. R. (1990). Phosphatase and urease enzymic activities in some soil profiles of north west Himalayas. Journal Indian Society of soil Sciences 38, 756-759.
7. Öhlinger, R. (1996). Soil sampling and sample preparation. In Methods in soil biology (pp. 7-11). Berlin, Heidelberg:
8. Kandeler, E., & Eder, G. (1993). Effect of cattle slurry in grassland on microbial biomass and on activities of various enzymes. Biology and Fertility of Soils, 16, 249-254.
9. Kandeler, E., 1995a. In: Schinner, F.; Öhlinger, R.; Margesin, R. (eds.), Methods in Soil Biology Chapter XI. Springer-Verlag, Heidelberg, New York, pp. 176-179.
10. Kandeler, E., 1995b. In: Schinner, F.; Öhlinger, R.; Margesin, R. (eds.), Methods in Soil Biology Chapter XI. Springer-Verlag, Heidelberg, New York, pp. 171-174.
11. Loes, A. K., & Ogaard, A. F. (1997). Changes in the nutrient content of agricultural soil on conversion to organic farming in relation to farm-level nutrient balances and soil contents of clay and organic matter. Acta Agriculturae Scandinavica B—Plant Soil Sciences, 47(4), 201-214.
12. Marinari, S., Masciandaro, G., Ceccanti, B., & Grego, S. (2000). Influence of organic and mineral fertilisers on soil biological and physical properties. Bioresource technology, 72(1), 9-17.
13. Öhlinger, R. (1996) In: Schinner, F.; Öhlinger, R.; Margesin, R. (Eds.), Methods in Soil Biology Chapter, XV. Springer-Verleg, Heidelberg, New York. pp. 241-243.
14. Pascual, J. A., García, C., & Hernandez, T. (1999). Lasting microbiological and biochemical effects of the addition of municipal solid waste to an arid soil. Biology and fertility of soils, 30, 1-6.

शब्दावली आयोग CSTT

15. Roscoe, R., Vasconcellos, C. A., Furtini-Neto, A. E., Guedes, G. A., & Fernandes, L. A. (2000). Urease activity and its relation to soil organic matter, microbial biomass nitrogen and urea-nitrogen assimilation by maize in a Brazilian Oxisol under no-tillage and tillage systems. Biology and fertility of soils, 32, 52-59.
16. Salam A. K., Katayama, A., & Kimura, M. (2000). Activities of some soil enzymes in different land use system after deforestation in hilly areas of west Lampung, South Sumatra, Indonesia. Soil Science, 80, 91-97.
17. Singh, D. K., & Kumar, S. (2008). Nitrate reductase, arginine deaminase, urease and dehydrogenase activities in natural soil (ridges with forest) and in cotton soil after acetamiprid treatments. Chemosphere, 71(3), 412-418.

शब्दावली आयोग CSTT

7. दिल्ली की किशोर बालिकाओं में स्क्रीन समय और सोशल मीडिया का उपयोग

संजीव कुमार

सार: COVID-19 के पश्चात साइबरस्पेस का उपयोग और साइबर अपराधों में वृद्धि देखने को मिली है। राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW) के अनुसार वर्ष 2019-2021 के दौरान महिलाओं के खिलाफ साइबर उत्पीड़न में 25% की वृद्धि हुई है, जिससे कि महिलाओं के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार का उल्लंघन होने वाले मामले भी तेजी से बढ़े हैं। NCW और गृह मंत्रालय द्वारा विभिन्न साइबर क्राइम रिपोर्टिंग पोर्टल, कानूनी उपाय, और साइबर अपराध निवारण योजनाओं के बावजूद, महिलाओं के खिलाफ करीब 90% साइबर उत्पीड़न के मामले रिपोर्ट नहीं हो पाते हैं। इस सन्दर्भ में महिला आयोग द्वारा प्रायोजित (F. NO. 13 (02)/2020-21/NCW (RS) दिल्ली और एनसीआर क्षेत्र में 1600 महिलाओं (मुख्यतः शिक्षा संस्थानों में शिक्षा ग्रहण करने वाली किशोर छात्राओं) का सर्वेक्षण कर यह जानने का प्रयास किया गया कि वे कितने घंटे स्क्रीन पर बिताती हैं, उनका सोशल मीडिया पर संलग्नता का स्तर और इसकी वजह से उत्पीड़न का खतरा कितना ज्यादा है। इसके साथ ही यह भी अध्ययन किया गया कि माता-पिता की उपस्थिति और उनके शिक्षा स्तर और व्यवसाय का बच्चों के स्क्रीन समय पर क्या प्रभाव पड़ता है।

मुख्य शब्द(Key Words): जियोपॉलिमर मसाला; फ्लाई ऐश; काँच तंतु; जीजीबीएस; फ्लो मान; यांत्रिक शक्ति।

1. प्रस्तावना

COVID-19 के पश्चात एक तरफ तो लोगों की साइबर और इन्टरनेट पर निर्भरता बढ़ी है, वहीँ दूसरी तरफ साइबर सम्बंधित अपराध विशेषकर महिला उत्पीडन की समस्यायों में भी बहुत वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW) ने 2019-2021 के बीच महिलाओं की शिकायतों में 25% की वृद्धि दर्ज की थी। विशेष रूप से, 2020-21 में, NCW द्वारा **26,513** शिकायतें दर्ज की गई, जो कि पिछले वर्ष दर्ज **20,309** शिकायतों से अधिक थीं तथा इसमें से **8,688** मामलों में महिलाओं के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार का उल्लंघन होना शामिल था।

भारत में साइबर अपराधों का सामना करने के लिए भारतीय दंड संहिता (IPC), सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम और महिलाओं के अभद्र प्रतिनिधित्व अधिनियम जैसे कई कानूनों को लागू किया गया है। वर्ष 2019 में शुरू किए गए राष्ट्रीय साइबर क्राइम रिपोर्टिंग पोर्टल के माध्यम से पीड़ित महिलाएं ऑनलाइन शिकायत दर्ज करा सकती हैं। इसके अतिरिक्त, गृह मंत्रालय ने साइबर अपराध निवारण योजना (CCPWC) की शुरुआत की है, जो पुलिस और साइबर सेल को सहायता प्रदान करती है और साइबर अपराध जागरूकता, फोरेंसिक लैब, प्रशिक्षण कार्यक्रमों और अनुसंधान में निवेश करती है।

इन सभी उपायों के बावजूद, महिलाओं के खिलाफ लगभग 90% साइबर उत्पीड़न के मामले रिपोर्ट नहीं किए जाते हैं, और जो मामले दर्ज भी होते हैं, उनमें अक्सर अपर्याप्त जांच और कम सजा दर जो मात्र 0.5% है। इसके कई कारण हैं, जैसे कि सामाजिक कलंक, नौकरशाही की जटिलताएँ और जांच एजेंसियों में अविश्वास का होना। इसके अलावा, साइबर अपराधों जैसे कि सेक्सटॉर्शन के बारे में जागरूकता की कमी का होना भी रिपोर्टिंग को रोकता है, जबकि मीडिया अक्सर साइबर उत्पीड़न के प्रभाव को सामान्य या अस्पष्ट कर देती है। ये चुनौतियाँ यह दर्शाती हैं कि महिलाओं को डिजिटल क्षेत्र में प्रभावी सुरक्षा प्रदान करने के लिए साइबर अपराध शिक्षा में वृद्धि, अधिक सरल रिपोर्टिंग प्रक्रियाओं और सख्त कानून प्रवर्तन (strict law enforcement) की आवश्यकता है।

इस सन्दर्भ में साइबरस्पेस में महिलाओं के खिलाफ साइबर अपराधों की स्थिति पर एक व्यवस्थित और वैज्ञानिक जांच की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए NCW के निर्देशानुसार एक शोध कार्य किया गया। इस शोध अध्ययन में दिल्ली और एनसीआर में महिलाओं के खिलाफ साइबर अपराध से जुड़े विभिन्न पहलुओं को समझने का प्रयास किया गया है। अध्ययन में दिल्ली के 11 राजस्व जिलों और एनसीआर के निकटवर्ती चार जिलों (नोएडा, गाजियाबाद, गुरुग्राम, और फरीदाबाद) को शामिल किया गया और कुल 1600 किशोर युवतियों का सर्वे किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य मुख्यतः साइबरस्पेस में महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली चुनौतियाँ, उनके रिपोर्ट करने के कारण व आवृत्ति का विश्लेषण करना तथा इसके साथ-साथ महिलाओं, पुलिस, और जांच एजेंसियों के द्वारा इन चुनौतियों का सामना करने में सहायता और बाधा उत्पन्न करने वाले कारकों को समझना, राज्य और गैर-राज्य संस्थानों द्वारा इन घटनाओं से कैसे निपटान होता है को प्रस्तुत करना शामिल है। अतः प्रस्तुत लेख में किशोर बालिकाओं द्वारा स्क्रीन पर समय देने और उनके द्वारा सोशल मीडिया में संलग्नता के विभिन्न पहलुओं पर विश्लेषण किया गया है।

2. स्क्रीन-टाइम और सोशल मीडिया

प्रस्तुत शोध में 1600 किशोर छात्राओं का अध्ययन किया गया और यह पता लगाया गया कि उनके द्वारा वर्त्तमान समय में कितना समय सोशल मीडिया पर व्यतीत किया जाता है। कुल छात्राओं में 35.9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वह कक्षाओं व आधिकारिक कार्यों के अलावा मोबाइल या अन्य स्क्रीन उपकरणों का उपयोग प्रतिदिन 0-2 घंटे तक करती हैं। इसी प्रकार, 31.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं का स्क्रीन-टाइम 2-4 घंटे प्रतिदिन है, एवं 21.1 प्रतिशत का 4-6 घंटे, 7.1 प्रतिशत का 6-8 घंटे और 4.3 प्रतिशत का 8 घंटे से अधिक है। इसके अलावा, आयु वर्ग के अनुसार स्क्रीन समय का विश्लेषण निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किया गया है।इस तथ्य को और गहरे ढंग से

समझने के लिए निम्नलिखित तालिका संख्या 1 यह दर्शाता है कि किस आयु वर्ग के बच्चों में कितना समय स्क्रीन पर व्यतीत किया जाता है।

तालिका 1: आयु वर्ग और स्क्रीन-टाइम

स्क्रीन समय / आयु	**0-2** घंटे	**2-4** घंटे	**4-6** घंटे	**6-8** घंटे	**8** घंटे से ज्यादा	कुल
16-21	423 (36.6%)	355 (30.7%)	234 (20.2%)	93 (8.0%)	51 (4.4%)	1156 (100.0%)
22-27	83 (29.5%)	99 (35.2%)	77 (27.4%)	14 (5.0%)	8 (2.8%)	281 (100.0%)
28-33	13 (50.0%)	12 (46.2%)	1 (3.8%)	0 (0.0%)	0 (0.0%)	26 (100.0%)
34-39	11 (84.6%)	2 (15.4%)	0 (0.0%)	0 (0.0%)	0 (0.0%)	13 (100.0%)
40 से ऊपर	11 (33.3%)	9 (27.3%)	7 (21.2%)	0 (0.0%)	6 (18.2%)	33 (100.0%)
कुल	541 (35.9%)	477 (31.6%)	319 (21.1%)	107 (7.1%)	65 (4.3%)	1509 (100%)

(स्रोत: अप्रैल से अक्टूबर 2021 के बीच फील्डवर्क से एकत्रित आंकड़ों का विश्लेषण)

तालिका-1, विभिन्न आयु वर्गों के बालिकाओं के स्क्रीन-टाइम (यानी कि मोबाइल या अन्य डिजिटल उपकरणों के उपयोग) का विवरण देती है। इस तालिका में 0-2 घंटे, 2-4 घंटे, 4-6 घंटे, 6-8 घंटे और 8 घंटे से अधिक की स्क्रीन-टाइम श्रेणियाँ शामिल हैं, जो प्रत्येक आयु समूह की महिलाओं के स्क्रीन-टाइम के वितरण को दर्शाती है।

उपर्युक्त तालिका संख्या 1. से यह प्रदर्शित होता है कि 16-21 वर्ष की आयु वर्ग में कुल **1156 छात्राओं** में से 36.6% **(423 छात्राओं)** का स्क्रीन-टाइम 0-2 घंटे है। 30.7% **(355 छात्राओं)** का स्क्रीन-टाइम 2-4 घंटे है, जबकि 20.2% **(234 छात्राओं)** का 4-6 घंटे, 8.0% **(93 छात्राओं)** का 6-8 घंटे, और 4.4% **(51 छात्राओं)** का 8 घंटे से अधिक का स्क्रीन-टाइम है। 22-27 वर्ष की आयु वर्ग की 281 छात्राओं में से 29.5% **(83 छात्राओं**) का स्क्रीन-टाइम 0-2 घंटे है, जबकि क्रमशः 35.2% **(99 छात्राओं)** का 2-4 घंटे, 27.4% **(77 छात्राओं)** का 4-6 घंटे, 5.0% **(14 छात्राओं)** का 6-8 घंटे, और 2.8% **(8 छात्राओं)** का 8 घंटे से अधिक है। 28-33 वर्ष के आयु वर्ग में 26 छात्रों में 50.0% **(13 छात्राओं)** का स्क्रीन-टाइम 0-2 घंटे और 46.2% **(12 छात्राओं)** का 2-4 घंटे है, जबकि केवल 3.8% **(1 छात्रा)** का 4-6 घंटे का स्क्रीन-टाइम है; इस आयु वर्ग में 6-8 घंटे या 8 घंटे से अधिक घंटे स्क्रीन-टाइम वाली कोई भी छात्रा शामिल नहीं है। 34-39 वर्ष के 13 छात्राओं में से अधिकांश (84.6%) का स्क्रीन-टाइम 0-2 घंटे है और 15.4% **(2 छात्राओं)** का स्क्रीन-टाइम 2-4 घंटे है, जबकि इस आयु वर्ग में 4 घंटे से अधिक छात्राओं का

स्क्रीन-टाइम रखने वाला कोई भी छात्रा शामिल नहीं है। 40 वर्ष से अधिक के आयु वर्ग की 33 छात्राओं में से 33.3% **(11 छात्राओं)** का स्क्रीन-टाइम 0-2 घंटे है, 27.3% **(9 छात्राओं)** का 2-4 घंटे, 21.2% (**7 छात्राओं)** का 4-6 घंटे और 18.2**% (6 छात्राओं)** का 8 घंटे से अधिक स्क्रीन-टाइम देखा गया है।

कुल मिलाकर, 1509 छात्राओं में से 35.9% **(541 छात्राओं)** का स्क्रीन-टाइम 0-2 घंटे है, 31.6% **(477 छात्राओं)** का 2-4 घंटे, 21.1% **(319 छात्राओं)** का 4-6 घंटे, 7.1% **(107 छात्राओं)** का 6-8 घंटे और 4.3% **(65 छात्राओं)** का स्क्रीन-टाइम 8 घंटे से अधिक है। इस तालिका से यह स्पष्ट है की कम आयु के किशोरों में स्क्रीन-टाइम जयादा है. इसी सन्दर्भ में यह समझना आवश्यक है की दिल्ली और NCR में स्क्रीन -टाइम कितना व्यय किया जाता है.

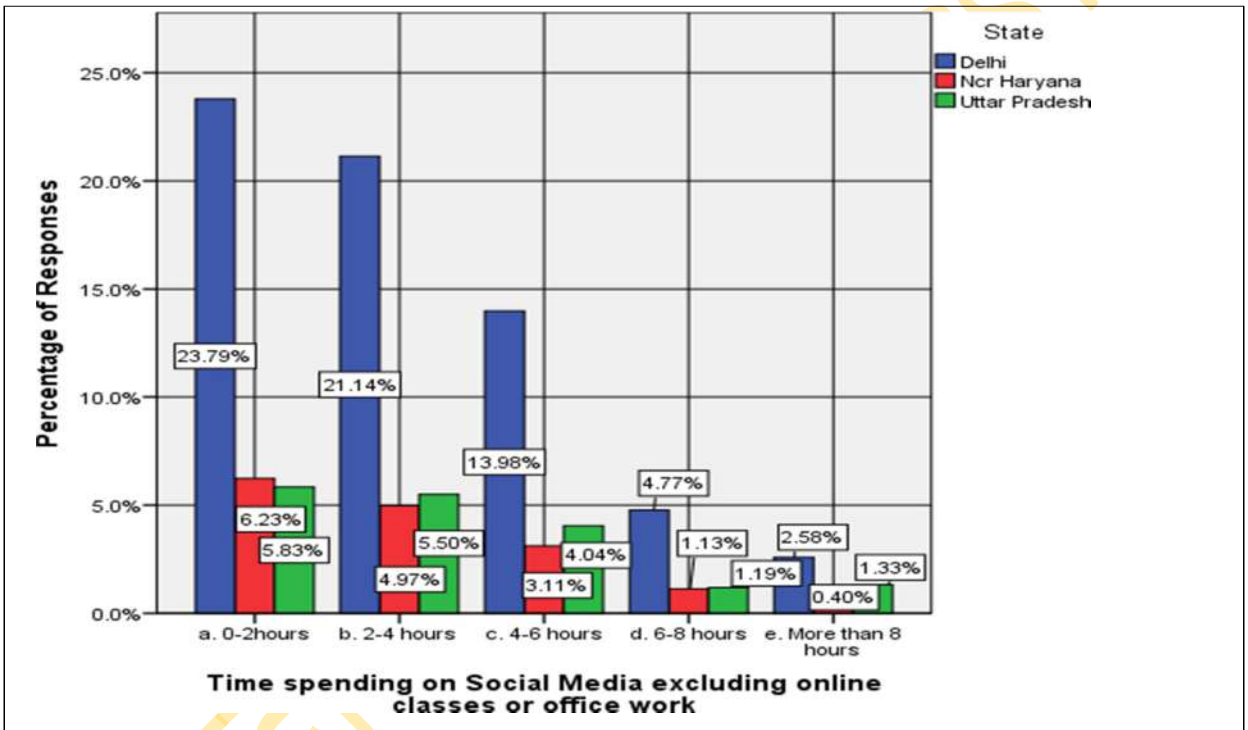

चित्र 1: दिल्ली और NCR में किशोर युवतियों का स्क्रीन टाइम (स्रोत: अप्रैल से अक्टूबर 2021 **के बीच फील्डवर्क से एकत्रित आंकड़ों का विश्लेषण)**

चित्र **1:** विभिन्न राज्यों के उत्तरदाताओं के द्वारा सोशल मीडिया पर बिताए गए समय को दर्शाता है**,** जिसमें डेटा को अप्रैल से अक्टूबर **2021** के बीच क्षेत्रीय अध्ययन (field work) के माध्यम से संकलित किया गया है।उपरोक्त ग्राफ.1 में दिल्ली**,** हरियाणा (एनसीआर)**,** और उत्तर प्रदेश (एनसीआर) के उत्तरदाताओं का स्क्रीन समय **0-2** घंटे**, 2-4** घंटे**, 4-6** घंटे**, 6-8** घंटे**,** और **8** घंटे से अधिक की श्रेणियों में विभाजित किया गया है।

0-2 घंटे की श्रेणी में, कुल **541** उत्तरदाताओं में से **66.4%** दिल्ली से, **17.4%** हरियाणा एनसीआर से, और **16.3%** उत्तर प्रदेश एनसीआर से हैं। **2-4** घंटे की श्रेणी में, **477** उत्तरदाताओं में से **66.4%** दिल्ली, **15.7%** हरियाणा एनसीआर, और **17.4%** उत्तर प्रदेश एनसीआर से हैं। **4-6** घंटे की श्रेणी में **319** उत्तरदाताओं का साक्षात्कार लिया गया, जिसमें **66.1%** दिल्ली, **14.7%** हरियाणा एनसीआर, और **19.1%** उत्तर प्रदेश एनसीआर से हैं। इसी प्रकार, **6-8** घंटे की श्रेणी में **107** उत्तरदाताओं का साक्षात्कार लिया गया, जिसमें **67.3%** दिल्ली, **15.9%** हरियाणा के एनसीआर, और **16.8%** उत्तर प्रदेश एनसीआर से हैं। **8** घंटे से अधिक की श्रेणी में, **65** उत्तरदाताओं का साक्षात्कार हुआ, जिसमें **60.0%** दिल्ली, **9.2%** हरियाणा एनसीआर, और **30.8%** उत्तर प्रदेश एनसीआर से हैं।

इस चित्र से स्पष्ट होता है कि अधिकांश श्रेणियों में सोशल मीडिया पर सबसे अधिक समय बिताने वाली छात्राएं राजधानी दिल्ली से हैं। हालांकि, जैसे-जैसे स्क्रीन समय बढ़ता है, उत्तर प्रदेश एनसीआर के उत्तरदाताओं का प्रतिशत भी बढ़ता हुआ दिखाई देता है, विशेषकर **8** घंटे से अधिक की श्रेणी में उत्तर प्रदेश एनसीआर के उत्तरदाताओं का प्रतिशत **30.8%** है। निष्कर्षतः, दिल्ली के उत्तरदाताओं का सोशल मीडिया पर बिताया गया समय सभी श्रेणियों में सबसे अधिक है, जबकि लंबे स्क्रीन समय वाली श्रेणियों में उत्तर प्रदेश एनसीआर की छात्राओं का प्रतिशत अधिक पाया गया है।

अतः इस तालिका से यह बहुत स्पष्ट है की कम आयु के छात्राओं में स्क्रीन पर समय देने की बहुलता देखी गई है, वहीं अधिक आयु की युवतियां स्क्रीन पर कम समय देती हैं। नीचे दी गई तालिका में युवतियों के स्क्रीन पर समय देने और उनकी शिक्षा के बीच क्या सम्बन्ध है से बहुत महतवपूर्ण बातें स्पष्ट होती हैं।

3. शिक्षा स्तर और स्क्रीन-टाइम

कुल **541** उत्तरदाताओं ने बताया कि वह **0-2** घंटे का स्क्रीन समय उपयोग करती हैं, जिसमें प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक कर रहे, स्नातक पूर्ण, स्नातकोत्तर और स्नातकोत्तर से ऊपर की शैक्षिक पृष्ठभूमि की छात्राओं का प्रतिशत क्रमशः **1.3** प्रतिशत, **2.6** प्रतिशत, **6.1** प्रतिशत, **62.8** प्रतिशत, **17.6** प्रतिशत, **7.6** प्रतिशत और **2.0** है।

शब्दावली आयोग CSTT

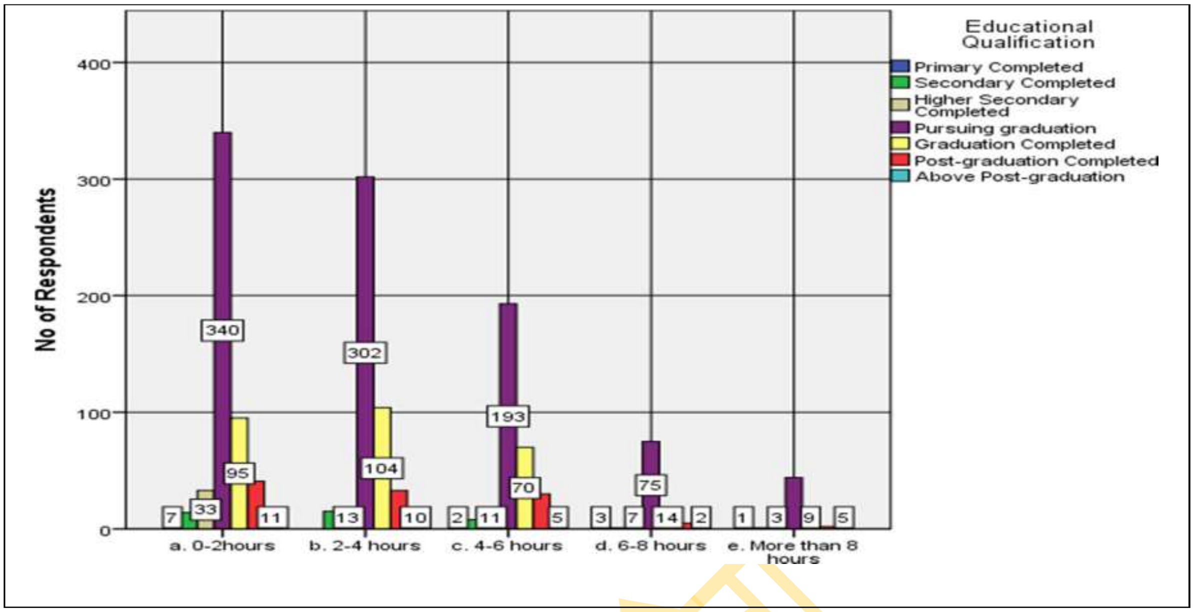

चित्र 2: शैक्षिक पृष्ठभूमि और स्क्रीन समय का उपयोग

(स्रोत: अप्रैल से अक्टूबर 2021 के बीच फील्डवर्क से एकत्रित आंकड़ों का विश्लेषण)

477 छात्राओं ने बताया कि वह **2-4** घंटे का स्क्रीन समय उपयोग करती हैं, जिसमें **3.1** प्रतिशत, **2.7** प्रतिशत, **63.3** प्रतिशत, **21.8** प्रतिशत, **6.9** प्रतिशत और **2.1** प्रतिशत माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक कर रहे, स्नातक, स्नातकोत्तर और स्नातकोत्तर से ऊपर की शैक्षिक पृष्ठभूमि से संबंधित हैं। **319** छात्राओं ने **4-6** घंटे का स्क्रीन समय उपयोग करने की बात कही है, जिसमें से **0.6** प्रतिशत, **2.5** प्रतिशत, **3.4** प्रतिशत, **60.5** प्रतिशत, **21.9** प्रतिशत, **9.4** प्रतिशत और **1.6** प्रतिशत छात्राएं प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक कर रहे, स्नातक, स्नातकोत्तर और स्नातकोत्तर से ऊपर की शैक्षिक पृष्ठभूमि से हैं।

107 छात्राओं ने बताया कि वह **6-8** घंटे का स्क्रीन समय उपयोग करती हैं, जिनमें से **2.8** प्रतिशत, **0.9** प्रतिशत, **6.5** प्रतिशत, **70.1** प्रतिशत, **13.1** प्रतिशत, **4.7** प्रतिशत और **1.9** प्रतिशत छात्राएं प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक कर रहे, स्नातक, स्नातकोत्तर और स्नातकोत्तर से ऊपर की शैक्षिक पृष्ठभूमि से हैं। **65** छात्राओं ने बताया कि वह **8** घंटे से अधिक का स्क्रीन समय उपयोग करती हैं, जिसमें से **1.5** प्रतिशत, **1.5** प्रतिशत, **4.6** प्रतिशत, **67.7** प्रतिशत, **13.8** प्रतिशत, **3.1** प्रतिशत और **7.7** प्रतिशत छात्राएं `प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, स्नातक कर रहे, स्नातक, स्नातकोत्तर और स्नातकोत्तर से ऊपर की शैक्षिक पृष्ठभूमि से संबंधित हैं।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि स्क्रीन समय का अधिकतम उपयोग स्नातक कर रही छात्राओं द्वारा किया गया है। इससे निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उच्च स्क्रीन समय का उपयोग युवा आयु वर्ग**,** यानी कि **16-21** वर्ष की छात्राओं में अधिक होता है। स्नातक कर रही छात्राओं के द्वारा शैक्षणिक कक्षाओं और उद्देश्यों के अलावा अतिरिक्त स्क्रीन समय का अधिक उपयोग किया जाता है। यह भी देखा गया है कि शिक्षा और आयु के बढ़ने के साथ अतिरिक्त स्क्रीन समय कम हो जाता है। इस प्रकार**,** किशोरियों में स्क्रीन समय उपयोग की प्रवृत्ति अधिक होती है**,** जो उन्हें साइबर अपराध के जाल में फंसने की अधिक संभावनाएं पैदा करती है।

4. पिता का शिक्षा स्तर और किशोरों का स्क्रीन-टाइम

चित्र **3**. यह दर्शाता है कि किशोरियों के स्क्रीन समय पर उनके पिता के व्यवसाय का क्या प्रभाव पड़ता है। इस चित्र में यह दिखाया गया है कि जिन किशोरियों के पिता अलग-अलग व्यवसायों में कार्यरत हैं**,** उनका स्क्रीन समय कैसे विशेष रूप से उनके ऑनलाइन कक्षाओं और ऑफिस के काम के अलावा सोशल मीडिया पर बिताए गए समय के संदर्भ में भिन्न होता है।

चित्र के अनुसार**,** सबसे अधिक स्क्रीन समय (**8** घंटे से अधिक) उन किशोरियों के द्वारा व्यतीत किया गया है, जिनके पिता स्वयं-नियोजित (सेल्फ-एम्प्लॉयड) हैं। ऐसी किशोरियों में से **53.19** प्रतिशत किशोरियां **8** घंटे से अधिक का स्क्रीन समय बिताती हैं। इसके विपरीत**,** सरकारी और निजी क्षेत्र में काम करने वाले लोगों की बच्चियों में यह प्रतिशत कम है। सरकारी और निजी क्षेत्र के कामकाजी पिता की बच्चियों में से केवल **21.8** प्रतिशत बच्चियां ही केवल **8** घंटे से अधिक का स्क्रीन समय उपयोग करती हैं।

इसके अलावा**,** यह भी देखा गया है कि निजी क्षेत्र में कार्यरत लोगों की बच्चियों का स्क्रीन समय सरकारी क्षेत्र में कार्यरत लोगों की बच्चियों की तुलना में अधिक है। यह इंगित करता है कि जिन परिवारों में पिता का जीवन नियमित होता है और वे घर पर अधिक समय बिताते हैं**,** वहां की बच्चियों में स्क्रीन समय का उपयोग अपेक्षाकृत कम होता है। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इन किशोरियों का स्क्रीन समय और साइबरस्पेस में उत्पीड़न के जोखिम को कम करने में परिवार के सदस्यों की दिनचर्या और घर पर बिताये गये समय की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है ।

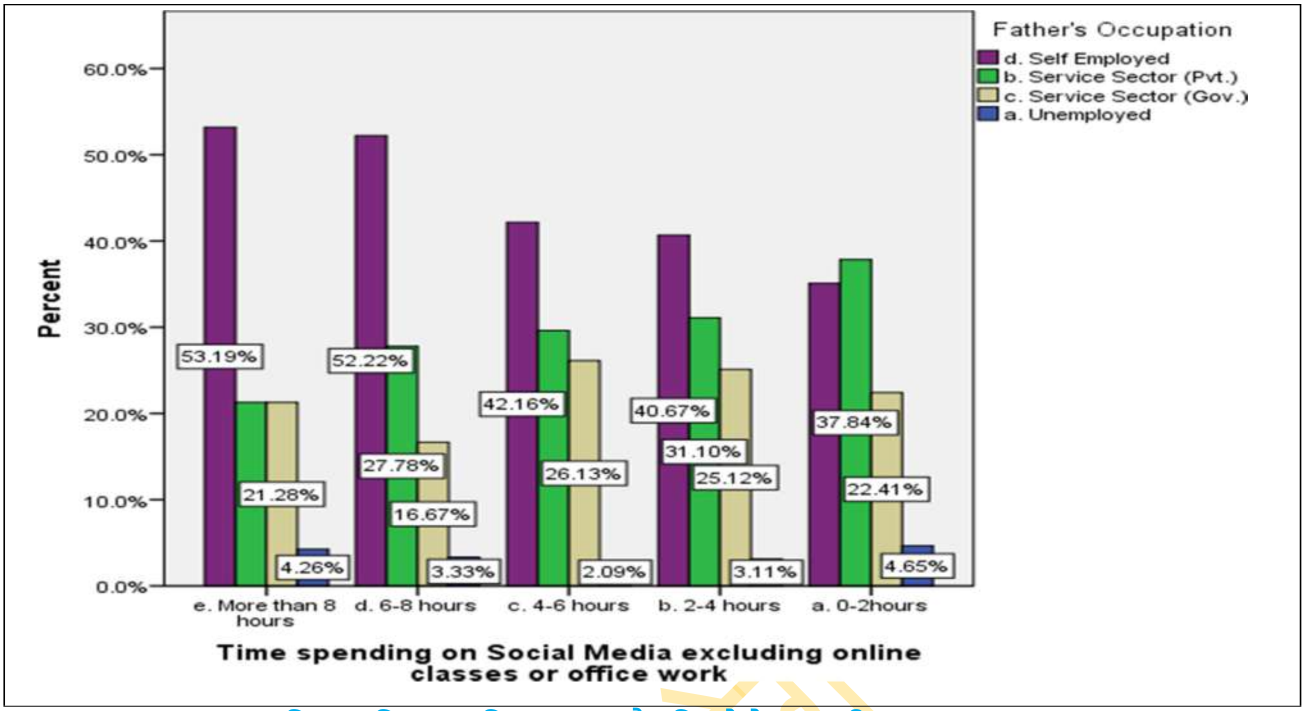

चित्र 3: पिता का शिक्षा स्तर और किशोरों का स्क्रीनटाइम-

(स्रोत: अप्रैल से अक्टूबर **2021** के बीच फील्डवर्क से एकत्रित आंकड़ों का विश्लेषण)

5. माता की शिक्षा का स्तर और किशोरियों का स्क्रीन-टाइम

चित्र **4** यह दर्शाता है कि किशारियों द्वारा सोशल मीडिया पर बिताए गए समय पर उनकी माताओं के व्यवसाय का क्या प्रभाव पड़ता है। इस ग्राफ का डेटा अप्रैल से अक्टूबर **2021** के बीच क्षेत्र अध्ययन से एकत्रित किया गया है।

चित्र 4. से यह स्पष्ट होता है कि किशारियों का स्क्रीन समय उनकी माताओं के कार्यस्थल अथवा व्यवसाय से प्रभावित हो सकता है। उन किशारियों का स्क्रीन समय अधिक पाया गया है जिनकी माताएं निजी क्षेत्र अथवा सरकारी क्षेत्र में कार्यरत हैं, या स्वरोजगार में हैं। इसके विपरीत, जिन किशारियों की माताएं गृहिणी हैं, उनका स्क्रीन समय अपेक्षाकृत कम पाया गया है।

यह इंगित करता है कि वह किशोरियां जिनकी माताएं नौकरी में व्यस्त रहती हैं के घर से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह अधिक समय सोशल मीडिया पर बिताती हैं। यदि माता-पिता विशेषकर माताएं यदि घर पर रहती हैं और किशोरियों के साथ नियमित संपर्क में रहती हैं तो किशोरियों का स्क्रीन समय सीमित रह सकता है। इस प्रकार माता का व्यवसाय किशोरियों के सोशल मीडिया उपयोग और स्क्रीन समय में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं जो साइबर स्पेस में उत्पीडन के जोखिम को भी प्रभावित कर सकता है। कुल मिलाकर, यह ग्राफ किशोरियों के

स्क्रीन समय पर माताओं के कार्यक्षेत्र के प्रभाव को दर्शाता है और यह सुझाव देता है कि घर पर माता की उपस्थिति स्क्रीन समय और साइबरस्पेस में संभावित खतरों को कम कर सकती है।

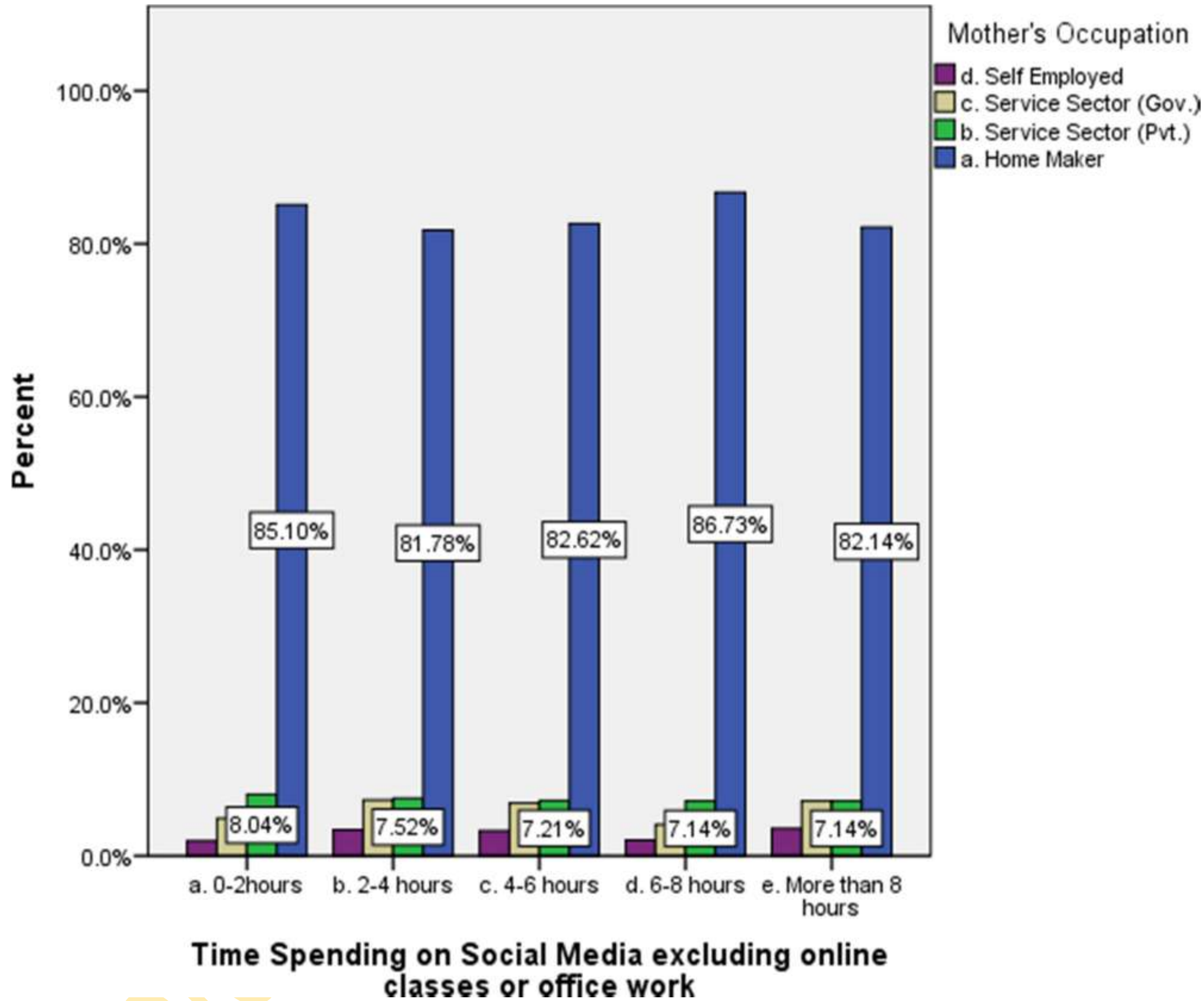

चित्र 4 : माता का शिक्षा स्तर और किशोरों का स्क्रीनटाइम-

6. निष्कर्ष

कुल **1509** उत्तरदाताओं में से **35.9%** छात्राओं का स्क्रीन समय **0-2** घंटे था, जबकि **4.3%** ने **8** घंटे से अधिक समय बिताया। मुख्यतः युवा आयु वर्ग (**16-21** वर्ष) की छात्राओं का सोशल मीडिया पर अधिक समय व्यतीत करना पाया गया, जो उनके साइबर उत्पीड़न की चपेट में आने की संभावनाओं को बढ़ाता है।

जिन छात्राओं (**53.19%**) के पिता स्वरोजगार में हैं, उनका स्क्रीन समय **8** घंटे से अधिक पाया गया। इसके विपरीत, सरकारी क्षेत्र में काम करने वाले पिता की बच्चियों का स्क्रीन समय अपेक्षाकृत कम था। इससे स्पष्ट होता है कि यदि पिता नियमित रूप से घर पर समय बिताते हैं तो बच्चियों के स्क्रीन समय में भी कमी आती है और साइबरस्पेस में उत्पीड़न का खतरा घट जाता है।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि जिन बच्चों की माताएँ कार्यरत हैं, उनका स्क्रीन समय उन बच्चों की तुलना में अधिक है जिनकी माताएँ गृहिणी हैं। यह संकेत देता है कि माताओं की उपस्थिति बच्चियों के स्क्रीन समय को सीमित कर सकती है, जिससे साइबर उत्पीड़न का खतरा कम होता है।

विभिन्न आयु वर्गों के आधार पर यह पाया गया कि किशोर बालिकाओं (**16-21** वर्ष) का सोशल मीडिया पर अधिक समय बिताने का रुझान है, जबकि आयु और शिक्षा के साथ यह समय कम होता है।

अंततः यह अध्ययन दर्शाता है कि स्क्रीन समय और सोशल मीडिया पर बिताए गए समय का किशोरियों के मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। माता-पिता की उपस्थिति और उनका व्यवसाय भी इस व्यवहार को नियंत्रित कर सकता है। इसके आधार पर यह सुझाव दिया गया है कि माता-पिता को किशोरियों के स्क्रीन समय पर निगरानी रखनी चाहिए और एक नियमित दिनचर्या के माध्यम से किशोरियों के मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बना सकते हैं। इस अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि साइबरस्पेस में उत्पीड़न के खतरे से बचाव के लिए स्क्रीन समय की नियमितता और माता-पिता की भागीदारी महत्वपूर्ण है। साइबर सुरक्षा को सुदृढ़ करने के लिए बच्चों के लिए साइबर अपराध शिक्षा और परिवारों के लिए जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता है, जिससे एक सुरक्षित डिजिटल वातावरण का निर्माण किया जा सके।

प्रतुत शोध के अधर पर यह अनुशंसा की जाती है कि साइबर क्राइम के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए विद्यालयों और समुदाय स्तर पर जागरूकता कार्यक्रम संचालित किए जाएं। साथ ही, साइबर अपराध कानूनों में सुधार और साइबर स्पेस में महिलाओं की सुरक्षा के लिए विशेष नीति बनाई जाए ताकि किशोर बालिकाओं को ऑनलाइन उत्पीड़न से बचाया जा सके।

श्यामा प्रसाद मुखेर्जी कॉलेज फॉर वीमेन, दिल्ली विश्वविद्यालय
sanjeev.spmcollege@gmail.com

शब्दावली आयोग CSTT

संदर्भ

1. राष्ट्रीय महिला आयोग। एनसीडब्ल्यू आधिकारिक वेबसाइट। प्राप्त किया गया **http://ncw.nic.in/commission/about-us/brief-history** से (प्रवेश तिथि: **4** सितंबर**, 2021)**

2. राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग। एनसीपीसीआर आधिकारिक वेबसाइट। प्राप्त किया गया **https://ncpcr.gov.in/** से (प्रवेश तिथि: **4** सितंबर**, 2021)**

3. भारतीय साइबर अपराध समन्वय केंद्र। विकिपीडिया से प्राप्त किया गया **https://en.wikipedia.org/wiki/Indian_Cyber_Crime_Coordination_Centre** से (प्रवेश तिथि: **4** सितंबर**, 2021)**

4. सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, **2000**। विकिपीडिया से प्राप्त किया गया **https://en.wikipedia.org/wiki/Information_Technology_Act,_2000** से (प्रवेश तिथि: **26** जून**, 2021)**

5. साइबर अपराध रिपोर्टिंग पोर्टल। विकसपीडिया से प्राप्त किया गया **https://vikaspedia.in/e-governance/online-citizen-services/government-to-citizen-services-g2c/cybercrime-reporting-portal** से (प्रवेश तिथि: **3** सितंबर**, 2021)**

6. भारत में साइबर कानून। **CYBERLAWSINIDA.net** से प्राप्त किया गया **http://www.cyberlawsindia.net/cyber-india.html** से (प्रवेश तिथि: **26** जून**, 2021**

शब्दावली आयोग CSTT

8. फलों मे एकान्तर फलन की समस्या एवं निवारण

[1]मुकेश शिवरान, [1]निमिषा शर्मा, [2]ज्योति

सार: फलों में विभिन्न पोषक तत्व पाये जाते है, जो स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। जलवायु परिवर्तन, कुशल मूलवृन्त की कमी, कीटों एवं रोगों का प्रकोप, अनियमित फलन आदि फल उत्पादन की गिरावट के लिए जिम्मेदार कारक हैं। बारहमासी फलों में प्रजनन सफलता और उत्पादकता मुख्य रूप से नियमित पुष्पन द्वारा नियंत्रित होती है। फलों में पुष्पन बाहरी एवं आंतरिक कारको पर निर्भर करता हैं। बाहरी कारक जैसे तापमान, पानी का तनाव, प्रकाश, सापेक्षिक आर्द्रता, तथा आंतरिक कारक जैसे, कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात, हार्मोन, प्रारुप, परागण, आदि फलों मे पुष्पन को प्रभावित करते है। कुछ फलों में एक वर्ष में भारी फलन (ऑन क्रॉप), और अगले वर्ष कम फलन (ऑफ क्रॉप) की समस्या होती है, जिसे एकान्तर फलन के रूप में जाना जाता है। यह समस्या मुख्यतः सेब, खुबानी, लीची, आम, जैतून, नाशपाती, पिस्ता, आलूबुखारा, मीठा संतरा, अखरोट आदि फलों में पाई जाती है।

मुख्य शब्द: एकान्तर फलन, कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात, पुष्पन, उत्पादन

1. प्रस्तावना

आम (मैंगीफेरा इंडिका एल.) फलों का राजा माना जाने वाला भारत का बहुत महत्वपूर्ण सांस्कृतिक और धार्मिक प्रतीक फल है। ऐतिहासिक अभिलेखों और प्राचीन यात्रियों के लेखों के आधार पर यह माना जाता था कि यह फल उत्तर-पूर्वी भारत में उत्पन्न हुआ और दक्षिण-पूर्व एशिया तक फैल गया। यह सैपिंडेल्स गण और एनाकार्डियासी परिवार से संबंधित है और एनाकार्डियासी परिवार में 73 वंश और लगभग 830 प्रजातियां शामिल हैं, आम की दुनिया भर में एक हजार से अधिक किस्में हैं। एशियाई देशों में आम का पेड़ आर्थिक उद्देश्यों के लिए मूल्यवान है, क्योंकि पेड़ के प्रत्येक भाग का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है। यह बड़ी आबादी के लिए भोजन, ईंधन और चारे का स्रोत है (1). विभिन्न फलों की फसलें मानव जाति के पोषण और स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। हालाँकि, कुल उत्पादन घट रहा है, इस प्रवृत्ति में गिरावट के लिए विभिन्न कारक जिम्मेदार प्रतीत होते हैं अर्थात जलवायु परिवर्तन की गतिशीलता, कीटों और बीमारियों का प्रकोप, कुशल मूलवृन्त की कमी, एकान्तर फलन आदि तथा एकान्तर फलन समस्या के माध्यम से उत्पादकों की स्थायी आजीविका को प्रभावित कर रहे हैं (2).

2. एकान्तर फलन की परिकल्पनाएं

- **पोषण परिकल्पना** - पुष्पन और उपज वृक्ष में पाये जाने वाले कार्बोहाइड्रेट के समानुपाती होते हैं। यह परिकल्पना एक वर्ष के दौरान भारी फलन के परिणामस्वरूप होता है। इसका तात्पर्य यह है कि कम फलन के लिए फूल और फलन कार्बोहाइड्रेट ऊर्जा के बहुत कम भंडार के साथ होता है।
- **हार्मोनल परिकल्पना** - ऑक्सिन जैसे पदार्थों का उच्च स्तर एवं जिबरेलिन हार्मोन के निम्न स्तर फलों में एक पुष्पयुक्त प्ररोह के लिए महत्वपूर्ण हैं। जबकि, अंतर्जात अवरोधकों के स्तर का वानस्पतिक वृद्धि और पुष्पन से सीधा संबंध है।

3. एकान्तर फलन के प्रमुख कारक

वानस्पतिक एवं पुष्प कलियों का निर्माण उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय फलों में भिन्न होते हैं। पुष्पन को प्रेरित करने के लिए मुख्यतः तीन प्रमुख कारक हैं, पर्यावरणीय प्रेरण (दीप्तिकाल और तापमान) के माध्यम से, स्वायत्त पुष्प प्रेरण (टहनी की आयु और परिपक्वता) और जिबरेलिन्स विनियमन द्वारा होता है। सामान्य तौर पर उष्णकटिबंधीय फलों में पर्यावरणीय संकेतों द्वारा पुष्पन को प्रेरित किया जाता है तथा इनके अलावा आंतरिक और बाहरी कारक भी एकान्तर फलन की समस्या के लिए जिम्मेदार है। आंतरिक कारकों में प्रारुप अंतर, पत्तियों की संख्या और परिपक्वता, वानस्पतिक और प्रजनन सिंक के बीच प्रतिस्पर्धा, फसल अधिभार, कार्बोहाइड्रेट भंडार (कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात), वृक्ष की आयु और हार्मोनल असंतुलन (ऑक्सिन, जिबरेलिन्स, साइटोकाइनिन एबीए, और पालीअमिंस), प्राकृतिक कलियों, फूलों और फलों का पृथक्करण, फल उगने से पुष्प अवरोध, पोषक तत्व की स्थिति, परागण आयु और टहनी का आकार, फल गिरना, फलन प्रवृत्ति, मूलवृंत, वृद्धि स्वरूप, शाखा शरीर रचना और अन्य कारक वर्गीकृत किए गये है। बाहरी कारकों में पर्यावरण कारक शामिल है, जैसे तापमान, प्रकाश, सापेक्ष आर्द्रता, बारिश और बर्फ (समशीतोष्ण प्रजातियाँ), वसंत की ठंढ, ओले, जल तनाव, मृदा कारक, जैविक कारक आदि एकान्तर फलन की समस्या के कारक है (4) तथा चित्र संख्या 1 में दर्शाया गया है। कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात फलों के पौधों में नाइट्रोजन और कार्बन भंडार, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन, फूल की कलियों की शुरुआत में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, भले ही ये एकान्तर फलन आने की घटना का प्राथमिक कारण न हों। यह काफी संभव है कि इन यौगिकों का संचय पुष्पन के लिए जिम्मेदार पदार्थों के संश्लेषण और क्रिया के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करता है (तालिका 1) ।

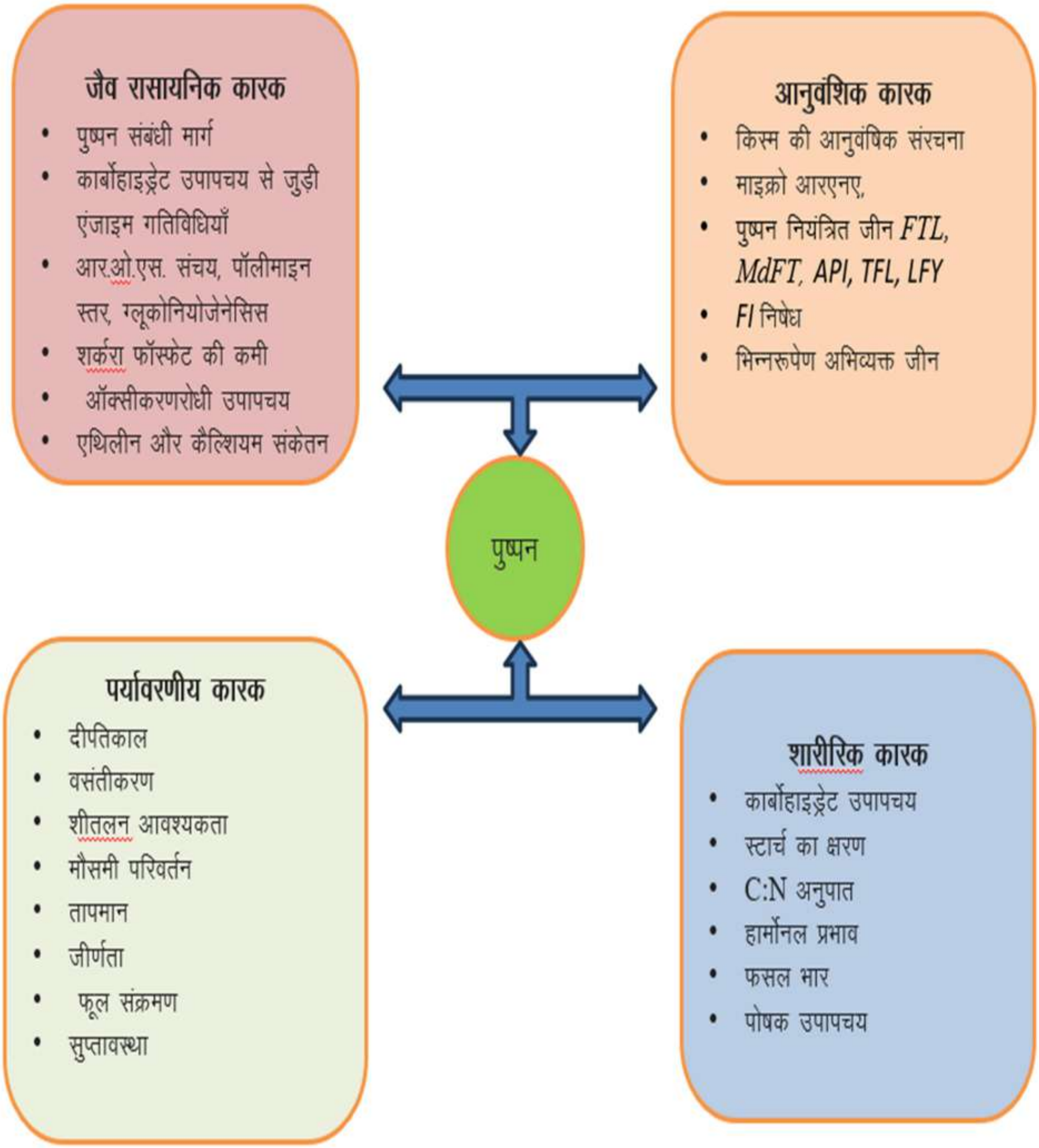

चित्र संख्या 1: बारहमासी फलदार फलों की एकान्तर फलन पर विभिन्न कारकों का प्रभाव

तालिका 1: फलों मे हार्मोन, कार्बोहाइड्रेट उपापचय और आनुवांशिकी कारको का एकान्तर फलन मे प्रभाव

कारक	फसल	प्रभाव
हार्मोन	सेब	सेब में पुष्प निकलना जिबरेलिन द्वारा बाधित होता है। साइटोकाइनिन का उपयोग 'फुल ब्लूम' के समय करने से पुष्पन की शुरुआत होती हैं।
	नींबू वर्गीये फल	पुष्प निकलना जिबरेलिन द्वारा बाधित होते हैं।
	आम	जिबरेलिन आम में फलन एवं पुष्पन नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
	जैतून	मौसमी परिवर्तनों से प्रभावित जैतून के पेड़ों में अनियमित अंतर्जातहार्मोन उत्पादन एकान्तर फलन को प्रभावित करता हैं।
	लीची	लीची में पुष्प उत्प्रेरण फाइटोहोर्मोन द्वारा नियंत्रित होते है।
कार्बोहाइड्रेट उपापचय	सेब	मौसमी परिवर्तन से प्रकाश संश्लेषक दर मे परिवर्तन
	नींबू वर्गीये फल	कार्बोहाइड्रेट संरक्षण, प्रकाश संश्लेषक दर विनियमित
आनुवांशिकी कारक	सेब	सेब के FTL, MdFT जीन, पुष्पन को नियंत्रित करते है।
	नींबू वर्गीये फल	पत्तियों और कलियों में FT, LFY, AP1, TFL और miR156,जीन पुष्पन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं (3)।

4. एकान्तर फलन के निवारण के उपाय

विभिन्न फलों में एकान्तर फलन को नियंत्रित करने या कम करने के लिए निम्नलिखित रणनीतियाँ अपना सकते हैं।

- **उचित बाग प्रबंधन**- विभिन्न बागवानी प्रबंधन जैसे नियमित जुताई, सन्तुलित खाद एवं उर्वरीकरण, खरपतवार प्रबंधन, सिंचाई और शाखाओं की रिंगिंगए गर्डलिंग आदि से विभिन्न फलों में एकान्तर फलन की समस्या को कम किया जा सकता है।
- **पुष्पन और फलों का नियमन**
    - **रसायनों का प्रयोग-** जिबरेलिन 20 पीपीएम (संतरा में एकान्तर फलन को कम करने के लिए), क्लोरोक्लोरिन क्लोरिड (नींबू में पुष्पन को प्रेरित), पोटेशियम नाइट्रेट (आम मे पुष्पन को प्रेरित), ट्राईइओड़ोबेन्जोइक एसिड 50 पीपीएम (आम में अक्टूबर के दौरान छिडकाव करने से बेमोसम फूल आने को बढावा मिलता है).

- ➢ **स्मजिंग (धुवाना)-** आम में पुष्पन प्रेरित करने के लिए स्मजिंग प्रक्रिया की जाती है।
- ➢ **पैक्लोबुट्राजोल-** एक विकासरोधी और जिबरेलिन प्रतिरोधी है। यह नियमित फलन करने में सर्वाधिक प्रभावी रसायन सिद्ध हुआ है।

- **उचित पोषण**- नाइट्रोजन, फास्फोरस, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जिंक, पोटेशियम और बोरोन आदि पोषक तत्वों की उपलब्धता और इनका संतुलित प्रयोग अच्छे फलन और ऊपज प्राप्त करने के लिए बहुत आवश्यक है।
- **फूलो को गिराना -** यह प्रक्रिया पौधों में खाद्य भंडार के संरक्षण के लिए कार्यरत है, जिससे अगले वर्ष नियमित रुप से पौधों पर फूल और फल आते रहे, यह प्रक्रिया आम, सेब, नींबू वर्गीय फलों में मुख्यतः उपयोग की जाती है।
- **चयनात्मक छंटाई-** चयनात्मक छंटाई अधिकांशत शीतोष्ण क्षेत्रों में फलों को नियंत्रित करती है। छंटाई मुख्य रूप से वानस्पतिक और प्रजनन वृद्धि के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए की जाती है।
- **अग्रिम फलों की तुड़ाई -** नींबू वर्गीय फल, एवोकाडो और सेब में कभी-कभी तुड़ाई में देरी होती है, जिससे अगले वर्ष पेड़ो में पुष्पन और फलन प्रभावित होता है।
- **नियमित फलन वाली किस्मों को उगाना-** आम (रुमानी, आम्रपाली, मल्लिका, अर्का अरुणा, अर्का पुनीत, दशहरी-51, पूसा अरुणिमा, पूसा सूर्या, अम्बिका) सेब, (ओरेगन स्पर, गोल्डन स्पर, वेल्स स्पर, रेड चीफ, अर्ली रेड वन, टाइडेमैन्स अर्ली वॉर्सेस्टर), खुबानी, लीची, जैतून, नाशपाती, पिस्ता, आलूबुखारा, मीठा संतरा, अखरोट आदि फलों में नियमित फलन वाली किस्मों का चयन करना चाहिए।
- **बौना मूलवृन्त-** बौना और अर्ध बौना मूलवृन्त फलों में जैसे सेब (एम-9, एम-27) एवं नींबू वर्गीय फल (फलायिंग ड्रैगन, टरोयेर सिटरेंज) जल्दी फलन करने में सहायता करते है।

मुख्यरुप से एकान्तर फलन का आकलन 2 सूत्रों से करते है

सूत्र 1: एकान्तर फलन सूचकांक $(I) = \frac{(\text{वर्ष 1 उपज}) - (\text{वर्ष 2 की उपज})}{(\text{वर्ष 1 की उपज} + \text{वर्ष 2 की उपज})}$

जहां $I = 0$, एकान्तर फलन नहीं है, और $I = 1.0$ पूर्ण एकान्तर फलन है

सूत्र 2: $\frac{\text{एकान्तर फलन (चालू वर्ष की उपज)} - (\text{5 वर्ष की औसत उपज})}{5-\text{वर्षीय औसत उपज}}$

जब वर्तमान उपज 20% से कम हो 5 साल के औसत की तुलना में तो यह एक कम फलन है।

5. निष्कर्ष

एकान्तर फलन उत्पादकों और उद्योग के लिए एक आर्थिक समस्या है, यह फलों का आकार, आर्थिक प्रतिफल और कीमत में उतार-चढाव का कारण बनता है। फल और नई वनस्पति वृद्धि के बीच प्रतियोगिता में कार्बोहाइड्रेट और अन्य पोषक तत्वों विशेष रूप से कार्बन, नाइट्रोजन, एकान्तर फलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

चित्र संख्या 2: भारी फलन और कम फलन का तुलनात्मक अध्ययन

उचित बाग प्रबंधन, रसायनों का प्रयोग, वनस्पति वृद्धि एवं प्रजनन संतुलन, छंटाई, नियमित फलन वाली किस्मों को उगाना, बौना मूलवृन्त, पैक्लोबुट्राजोल और यूनिकोनाजोल आदि का उपयोग करके एकान्तर की समस्या को कम किया जा सकता है। एकान्तर फलन को ठीक करने के लिए विशिष्ट क्षेत्रों में अनुसंधान की आवश्यकता है।

[1]फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग भा. कृ. अनु. परिषद- भा. कृ. अनु. संस्थान, नई दिल्ली 110012
[2]जे. एन. यू. नई दिल्ली 110067
mukeshshivran98@gmail.com

संदर्भ

1. Rajan, S., Srivastav, M., & Rymbai, H. (2021). Genetic resources in mango. (Editor Kole, C.) The Mango Genome, 45-73. Springer International Publishing.

2. Sharma, N., Singh, A. K., Singh, S. K., Mahato, A. K., Srivastav, M., & Singh, N. K. (2020). Comparative RNA sequencing based transcriptome profiling of regular bearing and alternate bearing mango (*Mangifera indica* L.) varieties reveals novel insights into the regulatory mechanisms underlying alternate bearing. Biotechnology letters, 42, 1035-1050.

3. Dündar, E., Suakar, O., Unver, T., & Dagdelen, A. (2013). Isolation and expression analysis of cDNAs that are associated with alternate bearing in *Olea europaea* L. cv. Ayvalık. BMC genomics, 14, 1-14.

4. Dayal, V., Dubey, A. K., Singh, S. K., Sharma, R. M., Dahuja, A., & Kaur, C. (2016). Growth, yield and physiology of mango (*Mangifera indica* L.) cultivars as affected by polyembryonic rootstocks. Scientia Horticulturae, 199, 186-197.

शब्दावली आयोग CSTT

9. सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पाउडर का निर्माण एवं मूल्य संवर्धन द्वारा कम लागत वाले परम्परागत खाद्य पदार्थों का विकास एवं मानकीकरण

आंचल सिंह

सार: प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उदेश्य निर्जलीकरण प्रक्रिया द्वारा सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तों के पाउडर निर्माण और ड्रमस्टिक के पत्तों के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पाद तैयार करना एवं विकसित उत्पादों के संवेदी मूल्यांकन का विश्लेषण करना हैं | सहजन के पत्तों के पाउडर का उपयोग करके तैयार किए गए उत्पादों में छोले, चपाती, मेदू वडा भटूरा, इडली, चिल्ला, आलू भुजिया, केला की भुजिया एवं गोभी की भुजिया शामिल हैं जिसका उपयोग दैनिक आहार में करके शरीर में आवश्यक पोषक तत्व की पूर्ति किया जा सकता है। सहजन में सभी आवश्यक पोषक तत्वों और जैव सक्रिय अणुओं की विविधता के कारण, पेड़ के हिस्सों (फूल, पत्तियाँ, बीज, जड़) का उपयोग कुपोषण के रोकथाम में और जीवनशैली से जुड़ी बीमारियों जैसी स्वास्थ्य समस्याओं को हल करने के लिए किया जा सकता है। मोरिंगा ओलीफेरा के पत्तियो एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होते हैं, इसलिए कुपोषण को कम करने के लिए कई मूल्यवर्धित उत्पाद बनाए जा सकते हैं। अनाज, दालों और सब्जियों की विभिन्न पारंपरिक तैयारियाँ जैसे चपाती, भटूरा, छोले (काबुली चना), मेदु वड़ा, चिल्ला, इडली (सूजी), आलू भुर्जी, गोभी की सब्जी और कच्चे केले की सब्जी को प्रयोगशाला में मानकीकृत किया गया। इन्हें सहजन (मोरिंगा ओलिफेरा) के पत्तों के पूरक के साथ मानकीकृत व्यंजनों का उपयोग करके 5, 10 और 15 प्रतिशत के स्तर पर तैयार किया गया था। जबकि आलू भुर्जी, गोभी भुर्जी और कच्चे केले की भुर्जी को 3, 5 और 7 प्रतिशत के स्तर पर पूरक किया गया था। संवेदी पैनल द्वारा 9 पॉइंट हेडोनिक रेटिंग स्केल के स्कोर कार्ड का उपयोग करके रंग, उपस्थिति, स्वाद, बनावट, स्वाद और समग्र स्वीकार्यता के लिए नमूनों को स्कोर किया गया था। सभी मूल्य वर्धित उत्पादों को T0, T1, T2 और T3 के रूप में नामित किया गया था | संवेदी पैनल द्वारा 5% सहजन (मोरिंगा ओलीफेरा) के पत्तों के पाउडर वाली चपाती, भटूरा सबसे अधिक पसन्द किया गया | जबकि आलू भुर्जी, गोभी भुर्जी और कच्चे केले की भुर्जी में समावेश केवल 3% स्तर पर नियंत्रित की तुलना में पसंद किया गया था| दैनिक आहार में सहजन का उपयोग करके बच्चो एवं महिलायों में कुपोषण का उपचार किया जा सकता है |

मुख्य शब्द: सहजन, मोरिंगा ओलीफेरा, मूल्य समृद्ध, विकास एवं मानकीकरण, संवेदी पैनल, हेडोनिक रेटिंग स्केल

1. प्रस्तावना

सहजन (ड्रमस्ट्रिक) एक तेजी से बढ़ने वाला सुखा प्रतिरोधी पेड़ है जिसका वैज्ञानिक नाम मोरिंगा ओलीफेरा लैम है जो मोरिंगेसी परिवार से संबंधित है। इसके पत्तियों में अधिक मात्रा में पोषण मूल्य पाऐ जाते है | जैसे :प्रोटीन, विटामिन, आयरन, कैल्शियम, खनिज भी पाये जाते है | इसे ड्रमस्टिक एवं हॉर्सरेडिस के नाम से भी जाना जाता है | इसे कम उपयोग किये जाने वाले पोधे में से एक माना जाता है| परंपरागत रूप से सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियाँ, फल, फूल और अपरिपक्व फलियों को बिहार में खाया जाता है। सहजन में उच्च पोषण क्षमता होती है क्योंकि इसकी पत्तियों में पोषक तत्वों और मुख्य रूप से फ्लेवोनोइड्स, फेनोलिक घटकों और फेनोलिक एसिड की उच्च सांद्रता होती है, जो प्राकृतिक एंटीऑक्सिडेंट का एक अच्छा स्रोत है | सहजन कुपोषण से निपटने के लिए हमारे दैनिक आहार में उपयोग करने के लिए एक बेहतर विकल्प भी माना जाता हैं । अध्ययन में सहजन के पत्तों से मूल्य वर्धित उत्पाद विकास करने का एक प्रयास हैं | प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उदेश्य निर्जलिकरण प्रक्रिया द्वारा सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तों के पाउडर निर्माण और ड्रमस्टिक के पत्तों के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पाद तैयार करना एवं विकसित उत्पादों के संवेदी मूल्यांकन का विश्लेषण करना हैं | Alakali (2015) ने सहजन की पत्तियों की पोषण गुणवत्ता पर सुखाने के तापमान के प्रभाव पर अध्ययन किया है। सहजन की पत्तियों के पाउडर की गुणवत्ता में तापमान के प्रभाव की जांच करने के लिए शोध किया गया था। परिणाम बताते हैं कि तापमान पत्ती के पाउडर की पोषक संरचना को प्रभावित करता है। जैसे-जैसे सुखाने का तापमान बढ़ता गया, कच्चे प्रोटीन में उल्लेखनीय कमी आई ($p \leq 0.05$)। 40 और 50 °C पर सुखाई गई सहजन की पत्तियां, 2 सप्ताह तक छाया में सुखाई गई पत्तियों से बेहतर पाई गयी हैं। इसके अलावा, खनिज सामग्री में आम तौर पर तापमान के साथ उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई। Mishra (2012) ने मानव उपभोग के लिए सहजन की पत्तियों का उपयोग किया और पाया कि पत्तियों के पाउडर को फिर शिशु आहार, सूप, सब्जियों में मिलाया जा सकता है, जो पोषण के लिए लाभकारी है। अध्ययन खाद्य क्षेत्र द्वारा सहजन की पत्तियों के परिचय और उपयोग की ओर अधिक रुझान की संभावना की सिफारिश करता है| Boateng (2018) ने शिशुओं और उनके देखभाल करने वालों के बीच *मोरिंगा ओलीफेरा* पत्ती पाउडर को शामिल करने वाले पूरक भोजन की स्वीकार्यता पर अध्ययन किया और पाया कि पूरक खाद्य पदार्थ जिनमें *मोरिंगा* पत्ती पाउडर को अनाज के एक भाग के रूप में शामिल किया जाता है - फलियों के पूरक खाद्य मिश्रण या जब सामान्य शिशु के भोजन में खाद्य पूरक के रूप में जोड़ा जाता है, तो वे अच्छी तरह से स्वीकार किए जाते हैं।

2. शोध विधि

2.1 सहजन के पत्तियो के पाउडर का निर्माण

सहजन के ताजे पत्तों को सामान्य तापमान पर एक सप्ताह हेतु छाया में सुखाया गया और फिर निर्जलित पत्तियो को पीसकर पाउडर बनाया गया | पाउडर के पैकिंग के लिए वायुरोधी ब्लॉक पैकेज का उपयोग लिया गया | *मोरिंगा ओलीफेरा* के ताजी पत्तियो कों तोड़ कर अलग किया गया | जैसे तना, सुखी हुई पत्तियो, मुरझाई हुई पत्तियो से ताजी पत्तियो का पाउडर बनाने हेतु शोधकार्य में ताजे हरी पत्तियो का चयन किया गया | पत्तियो कों चयन करके छटाई करके धुलकण और गंदगी हटाने के लिए साफ ठंडे पानी से धुलकर 80 oC पर दो मिनट के लिए ब्लांचिंग किया गया है | ब्लांचिंग करने के पश्चात् पत्तियो कों में एक सप्ताह के लिए छाया में सुखाया गया | उसके पश्चात् उत्पादों का विकास और संवेदी मुल्याकंन किया गया | जिसके लिए जय प्रकाश महिला कॉलेज छपरा के गृह विज्ञान विभाग के प्रयोगशाला में पैनलों के द्वारा संवेदी मूल्यांकन किया गया |

2.2 मूल्य-वर्धित उत्पादों का विकास

अनाज, दालों और सब्जियों की विभिन्न पारंपरिक तैयारियाँ जैसे चपाती, भटूरा, छोले (काबुली चना), मेदु वड़ा, चिल्ला, इडली (सूजी), आलू भुर्जी, गोभी की सब्जी और कच्चे केले की सब्जी को प्रयोगशाला में मानकीकृत किया गया। इन्हें सहजन (*मोरिंगा ओलिफेरा*) के पत्तों के पूरक के साथ मानकीकृत व्यंजनों का उपयोग करके 5, 10 और 15 प्रतिशत के स्तर पर तैयार किया गया था। जबकि आलू भुर्जी, गोभी की सब्जी और कच्चे केले की सब्जी को 3, 5 और 7 प्रतिशत के स्तर पर पूरक किया गया।

2.3 ऑर्गेनोलेप्टिक मूल्यांकन

विकसित उत्पादों का मूल्यांकन गृह विज्ञान विभाग, जय प्रकाश महिला कॉलेज, छपरा, बिहार के 10 समीक्षाकारों के प्रशिक्षित पैनल द्वारा किया गया। समीक्षाकारों को प्रत्येक तैयारी के साथ एक नियंत्रण और चार परीक्षण नमूने दिए गए। नियंत्रण नमूना सामान्य या सामान्य व्यंजनों में उपयोग की जाने वाली सामग्री से तैयार किया गया था और परीक्षण नमूने निर्जलित पत्तियों को पूरक करके तैयार किए गए थे। किसी भी पूर्वाग्रह से बचने के लिए नमूनों को कोडित किया गया था। प्रत्येक उत्पाद का तीन बार परीक्षण किया गया और औसत स्कोर की गणना की गई। समीक्षाकारों को 9 पॉइंट हेडोनिक रेटिंग स्केल (Rangana 1986) के स्कोर कार्ड का उपयोग करके रंग, उपस्थिति, स्वाद, बनावट, स्वाद और समग्र स्वीकार्यता के लिए नमूनों को स्कोर करने के लिए कहा गया था।

सभी स्वीकृत मूल्य वर्धित उत्पादों को टी 0, टी 1, टी 2 और टी 3 के रूप में नामित किया गया था, जहां

1: ट्रीटमेंट T_0 (नियंत्रण-T0): सहजन (*मोरिंगा ओलीफेरा*) के पत्तों के पाउडर के पूरक के बिना मानकीकृत विधि से पकाए गए उत्पाद।

2: ट्रीटमेंट 1 (T_1): I के समान + सभी पूरक उत्पाद 5 प्रतिशत स्तर पर

3: ट्रीटमेंट 2 (T_2): I के समान + A सभी पूरक उत्पाद 10 प्रतिशत स्तर पर

4: ट्रीटमेंट 3 (T_3): I के समान + सभी पूरक उत्पाद 15 प्रतिशत स्तर पर

सभी सब्जी आधारित व्यंजनों (आलू भुर्जी, गोभी भुर्जी और केले की भुर्जी) को 3, 5 और 7 प्रतिशत के स्तर पर पूरक बनाया गया था।

तालिका 1: निर्जलित सहजन की पत्तियों के पाउडर का उपयोग करके मूल्यवर्धित पारंपरिक व्यंजनों की कीमत प्रति 100 ग्राम

क्रम संख्या	मूल्यवर्धित पारंपरिक व्यंजन का नाम	प्रति 100 ग्राम में सर्विंग की संख्या	लागत प्रति 100 ग्राम में
1	रोटी (गेहूं का आटा)	4	6
2	भटूरा (परिष्कृत गेहूं का आटा)	4	7
3	इडली (सूजी)	3	5
4	मेदू वड़ा (उड़द की दाल)	3	6
5	चिल्ला (चने का बेसन)	3	6
6	छोला (काबुली चना)	3	7
7	गोभी की भुजिया	3	5
8	आलू की भुजिया	3	5
9	केला की भुजिया	3	5

3. परिणाम एवं निष्कर्ष

3.1 विकसित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन

तालिका 2: पारंपरिक व्यंजन चपाती में निर्जलित सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

रोटी का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	7.0 ±0.9	6.9 ±0.8	7.2 ±0.76	8.0 ±0.76	7.9±0.18
T_1 (5%)	8.2 ±0.6	8.5 ± 0.9	8.6 ±0.5	8.6 ±0.3	8.2±0.2
T_2 (10%)	7.1 ±0.5	7.0 ±0.7	7.5 ±0.9	7.5 ±0.9	7.6 ±0.2
T_3 (15%)	6.3 ±0.1	6.1 ±0.6	6.2 ±0.7	6.2 ±0.7	6.6±0.6

पैनल द्वारा 9 बिंदु हेडोनिक स्केल पर चपाती के औसत स्वीकार्यता स्कोर दिए गया है | नियंत्रण प्रतिदर्श के संदर्भ में सभी संवेदी मूल्याकंन में यानी रंग, स्वाद, बनावट, रूप एवं समग्र स्वीकार्यता के औसत स्कोर 6.1-0.9 के बीच है | इस परिणामों ने संकेत दिया गया है कि चपाती पैनल द्वारा अत्यधिक स्वीकार्य थी | जब इसकी तुलना नियंत्रण से की गई तो सहजन पाउडर कों अलग-अलग टी1, टी2 और टी3 स्तर पर आटे युक्त उपयोग की गई | चूँकि बिहार में गेंहू से बने रोटियां मुख्य रूप से खाई जाती है, और इसलिए इन खाध से बने उत्पादों की अपेक्षाकृत अधिक स्वीकार्यता 5% सहजन के पत्तियो के पाउडर का उपयोग के साथ चपाती के स्वाद से संबंधित डेटा ने नियंत्रित नमूने पर सबसे अधिक मान 8.2±0.2 स्कोर किया | जब तीनों उपचारों में सभी संवेदी विशेषताओं के औंसत अंक की तुलना की 5% सहजन के पत्तियो के पाउडर ने सबसे अधिक अंक प्राप्त कि (रंग 8.2 ±0.6, स्वाद 8.5 ± 0.9, बनवाट 8.6 ±0.5) | इसलिए 5% चपाती कों सबसे अत्यधिक पसंद किया गया |

तालिका 3: पारंपरिक व्यंजन भटूरा (परिष्कृत गेहूं का आटा) में निर्जलित सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

भटूरा (परिष्कृत गेहूं का आटा) का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	7.2 ±0.49	7.3 ±0.82	7.5 ±073	7.9 ±0.18	7.2 ±0.12
T_1 (5%)	8.06±0.35	9.5 ±0.72	8.2 ±0.60	8.6 ±0.09	8.9 ±0.09
T_2 (10%)	7.2 ±0.6	7.3 ±0.9	7.7 ±0.56	7.1 ±0.06	6.4 ±0.06
T_3 (15%)	6.2 ±0.2	5.3 ±0.7	6.8 ±0.9	6.3 ±0.02	5.8 ±0.02

संवेदी पैनल द्वारा 9 बिंदु हेडोनिक स्केल पर भटूरा कों औसत स्वीकार्यता स्कोर दिए गया है | जिसमे टी1 कों संवेदी पैनल द्वारा अत्यधिक स्वीकार्य किये गये थे | नियंत्रण की तुलना में स्वाद में टी1 कों उच्चतम स्कोर मिला था | सभी संवेदी विशेषताओं के लिए उच्चतम स्कोर देखा गए और उच्चतम समग्र स्वीकार्यता स्कोर टी1 के लिए दर्ज किया गया | जबकि नियंत्रण के संबंध में टी2 और टी3 कों सबसे कम स्कोर दिया गया थे |

तालिका 4: पारंपरिक व्यंजन इडली (सूजी) में निर्जलित सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

इडली (सूजी) का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	8.3 ±0.84	8.6 ±0.86	7.4 ±0.80	8.5 ±070	8.6 ±0.6
T_1 (5%)	9.1 ±0.46	8.2 ±0.89	8.6 ±0.72	8.8 ±0.17	9.6 ±0.02
T_2 (10%)	8.0 ±0.5	8.1 ±0.07	7.0 ±0.09	7.5 ±0.10	6.9 ±0.03
T_3 (15%)	7.3 ±0.3	6.8 ±0.02	7.3 ±0.03	7.2 ±0.02	5.8 ±0.02

पैनल विशेषज्ञों द्वार नियंत्रण के तुलना में टी1 कों बहुत पसंद किया गया है | उच्चतम मान टी1 के लिए मापा गया है और सबसे कम (5.8 ±0.02) टी3 लिए पाया गया है | इडली के 5% स्तर पर समग्र स्कोर (9.6 ±0.02), 10% और 15% स्तर पर पूरकता स्तर की तुलना में उच्च पाया गया। स्वाद और बनावट में नियंत्रण और टी1 उच्चतम अंक प्राप्त किये | उसके पश्चात् संवेदी मूल्यांकन पैनल द्वारा टी2 और टी3 औसत स्कोर से भिन्न थे | हांलकि अधिकतम स्कोर नियंत्रण नोट किये गये थे | जबकि न्युनतम टी3 के लिए पाया गया है |

तालिका 5: पारंपरिक व्यंजन मेदू वड़ा (उड़द की दाल) में निर्जलित सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

मेदू वड़ा (उड़द की दाल) का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	8.2 ±0.86	8.6 ±0.90	8.4 ±0.86	7.5 ±0.9	8.6 ±0.9
T_1 (5%)	9.06±0.78	9.2±0.89	9.3±0.76	8.6±0.06	9.5±0.7
T_2 (10%)	7.6±0.09	7.3±0.08	7.9±0.68	7.9±0.03	7.8±0.6
T_3 (15%)	7.5±0.03	6.5±0.03	5.3±0.09	5.3±0.02	6.07±0.3

संवेदी मूल्यांकन के स्कोर से यह दर्शाता है कि मेदू वड़ा में *मोरिंगा ओलीफेरा* के पाउडर कों मिला कर तैयार किये गये | मेदु वड़ा में 5% निर्जलित सहजन की पत्तियों के पाउडर के पूरक के स्तर में समग्र स्कोर सबसे अधिक 9.5±0.7 पाया गया। सभी विकसित मेदू वड़ा की उपस्थिति पैनल के सदस्यों द्वारा अत्यधिक स्वीकार्य थी। नियंत्रण नमूने के संबंध में, समग्र स्वीकार्यता को छोड़कर सभी संवेदी विशेषताओं के लिए उच्चतम औसत स्कोर देखे गए और उच्चतम समग्र स्वीकार्यता स्कोर टी1 के लिए दर्ज किया गया। हालांकि, सभी संवेदी पैनल विशेषताओं के द्वारा टी 3 के लिए सबसे कम स्कोर ग्रेड किए गए और मान (6.07-0.3) तक थे।

शब्दावली आयोग

तालिका 6: पारंपरिक व्यंजन चिल्ला (चने का बेसन) में निर्जलित सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

चिल्ला (चने का बेसन) का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	7.05±0.80	7.02±0.82	7.6±0.89	6.3±0.09	7.9±0.09
T_1 (5%)	9.02±0.64	9.3±0.78	8.6±0.82	8.3±0.18	8.08±0.06
T_2 (10%)	7.08±0.36	7.9±0.06	7.06±0.16	7.0±0.06	7.09±0.05
T_3 (15%)	6.5±0.06	7.6±0.05	7.0±0.09	6.5±0.03	6.04±0.02

संवेदी पैनल द्वारा 9 बिंदु हेडोनिक स्केल पर चिल्ला कों औसत स्वीकार्यता स्कोर दिए गया है | तालिका 5 में 5%, 10% और 15% समावेश के साथ तैयार चिल्ला कों संवेदी मूल्यांकन पर डेटा प्रस्तुत किया गया है। इन परिणामों ने संकेत दिया कि चिल्ला (सी, टी1, टी2 और टी3) के संवेदी मूल्यांकन (रंग, , स्वाद, बनावट, उपस्थिति और समग्र स्वीकार्यता) के सभी मापदंडों के स्कोर पैनल के सदस्यों द्वारा थोड़ा पसंद से लेकर बहुत पसंद तक के थे, जो दर्शाता है कि सभी उत्पाद स्वीकार्य पाए गए। हालांकि, T1 के लिए उच्चतम स्कोर 8.08±0.06 प्राप्त हुए और टी 3 के लिए सबसे कम 6.04±0.02 देखा गया। चिल्ला के स्वाद और बनावट मापदंडों के लिए भी इसी तरह के परिणाम पाए गए और औसत स्कोर क्रमशः भिन्न- भिन्न थे। चिल्ला की स्वाद के संबंध में, टी1 के लिए उच्चतम स्कोर देखे गए, जबकि टी3 ने सबसे कम स्कोर प्राप्त किए। सभी परीक्षणों के लिए चिल्ला की समग्र स्वीकार्यता के लिए औसत स्कोर विभिन्न थे |

तालिका 7: पारंपरिक व्यंजन छोला (काबुली चना) में निर्जलित सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

छोला (काबुली चना) का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	8.01±0.86	9.6±0.82	8.5±0.83	7.08±0.17	9.0±0.09
T_1 (5%)	9.02±0.72	8.0±0.63	7.05±0.75	6.09±0.13	9.8±0.07
T_2 (10%)	7.09±0.06	7.5±0.07	7.01±0.60	6.0±0.09	7.5±0.05
T_3 (15%)	6.5±0.002	6.05±0.06	6.09±0.09	6.1±0.02	7.65±0.02

नौ-बिंदु हेडोनिक रेटिंग स्केल का उपयोग करके जजों के विशेषज्ञ पैनल द्वारा छोला (काबुली चना) की स्वीकार्यता परीक्षण के औसत स्कोर तालिका 6 में प्रस्तुत किए गए हैं। निर्जलित सहजन की पत्तियों के पाउडर के पूरक के 5 प्रतिशत स्तर पर काबुली चना द्वारा उच्चतम स्कोर प्राप्त किए गए। संवेदी मूल्यांकन के सभी गुणों के लिए सभी संवेदी मापदंडों को अत्यधिक पसंद और बहुत अधिक के बीच स्कोर किया गया था। इस प्रकार, तालिका 6 से यह देखा गया कि निर्जलित सहजन की पत्तियों के पूरक के 5 प्रतिशत स्तर पर छोला (काबुली चना) हेडोनिक पैमाने पर सभी ऑर्गेनोलेप्टिक मापदंडों के संबंध में सबसे अच्छा था।

तालिका 8: पारंपरिक व्यंजन गोभी की भुजिया में निर्जलित सहजन (ड्रमस्ट्रिक) के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

गोभी की भुजिया का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	8.01±0.07	8.6 ±0.06	7.3 ±0.07	7.6 ±0.17	8.3 ±018
T_1 (5%)	8.03±0.06	9.3±0.78	8.6 ±0.72	8.3±0.18	8.9 ±0.09
T_2 (10%)	7.06±0.72	8.6 ±0.08	6.9±0.68	6.09±0.13	6.9 ±0.03
T_3 (15%)	6.04±002	7.1 ±0.07	7.0±0.09	5.3±0.02	5.8 ±0.02

परिणामों से पता चला कि बिना किसी पूरक के गोभी की भुजिया (नियंत्रण) के लिए रंग, रूप, स्वाद, बनावट और स्वाद के औसत अंक क्रमशः 8.01, 8.6, 7.3, 7.6 और 8.3 थे, जो निर्जलित सहजन के पत्तों के पाउडर के 3 प्रतिशत स्तर पर पूरकता से कम पाया गया। स्वीकार्य स्तर के बाद बिना किसी पूरकता के गोभी की भुजिया (नियंत्रण) को दूसरा स्थान मिला। समावेशन के स्तर में वृद्धि के साथ स्वीकार्यता कम होती पाई गई। गोभी की भुजिया के समग्र स्वीकार्यता स्कोर के आधार पर यह पाया गया कि 3 प्रतिशत स्तर पर पूरकता ने सबसे अधिक स्कोर किया और निर्जलित पत्तों के पाउडर के 7 प्रतिशत पूरकता के स्तर पर सबसे कम स्वीकार्य स्कोर किया। परिणामों से पता चला कि नियंत्रण की तुलना में निर्जलित पत्तों के पाउडर के 3 प्रतिशत पूरक स्तर पर सभी ऑर्गेनोलेप्टिक पैरामीटर के लिए उच्चतम स्कोर प्राप्त हुए इस प्रकार, यह देखा गया कि निर्जलित सहजन के पत्तों के पाउडर के साथ 3 प्रतिशत समावेशन स्तर पर गोभी की सब्जी को सुखात्मक पैमाने पर सभी ऑर्गनोलेप्टिक पैरामीटर के संबंध में सर्वोत्तम माना गया।

तालिका 9: पारंपरिक व्यंजन आलू की भुजिया में निर्जलित सहजन के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

आलू की भुजिया का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	8.01±0.86	8.02±0.82	8.0±0.75	7.5 ±0.06	8.9±0.80
T_1 (5%)	9.02±0.02	9.3±0.70	8.6±0.72	8.0±0.00	9.0±0.30
T_2 (10%)	6.09±0.7	7.9±0.00	7.06±0.6	4.9±0.02	6.09±0.20
T_3 (15%)	5.5±0.03	6.6±0.05	7.0±0.05	3.3±0.03	5.04±0.00

स्कोर के समान रुझान आलू भुर्जी के लिए भी देखे गए। तालिका 8 में स्वाद और समग्र रूप से 3 प्रतिशत स्तर के निर्जलित सहजन के पत्तों के पाउडर के साथ आलू भुर्जी द्वारा प्राप्त उच्चतम स्कोर को दर्शाया गया है। परिणामों से पता चला है कि नियंत्रण की तुलना में निर्जलित पत्तों के पाउडर के 3 प्रतिशत पूरक स्तर पर सभी ऑर्गेनोलेप्टिक पैरामीटर के लिए उच्चतम स्कोर प्राप्त हुए थे। इस प्रकार, यह देखा गया कि निर्जलित सहजन के पत्तों के पाउडर के साथ 3 प्रतिशत स्तर के पूरक पर आलू भुर्जी को हेडोनिक पैमाने पर सभी ऑर्गेनोलेप्टिक पैरामीटर के संबंध में

सर्वश्रेष्ठ माना गया। Nambiar and Parnami (2007) ने निर्जलित सहजन के पत्तों के साथ पोहा पूरकता विकसित की और 5 ग्राम/100 ग्राम स्तर स्वीकार्य पाया गया जबकि वर्तमान अध्ययन में स्वीकार्य स्तर 7.5 प्रतिशत था।

Thippeswamy (2020) ने देखा कि ताजा *मोरिंगा ओलीफेरा* के पत्तों में विभिन्न भंडारण स्थितियों की तुलना में फॉस्फोरबिक एसिड (43.26 मिलीग्राम प्रतिशत) की अच्छी मात्रा दिखाई दी। *मोरिंगा ओलीफेरा* के पत्तों में खनिजों की न्यूनतम मात्रा दिखाई दी। विटामिन और खनिजों की सराहनीय मात्रा के कारण अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आहार में सहजन के पत्तों को शामिल करना।

तालिका 10: पारंपरिक व्यंजन केला की भुजिया में निर्जलित सहजन के पत्तियो के पाउडर का उपयोग करके मूल्य वर्धित उत्पादों का संवेदी मूल्यांकन के विभिन्न मांपदडों के औसत अंक

केला की भुजिया का संवेदी गुण					
उत्पाद	**रंग**	**स्वाद**	**बनावट**	**उपस्थिति**	**कुल मिलाकर**
T_0	8.3 ±0.84	9.6±0.82	7.4 ±0.80	6.8 ±0.17	8.0±0.09
T_1 (5%)	9.1 ±0.46	8.0±0.63	7.6 ±0.72	7.3±0.18	9.08±0.00
T_2 (10%)	8.0 ±0.5	7.5±0.07	7.0 ±0.09	6.09±0.13	7.09±0.03
T_3 (15%)	7.3 ±0.3	5.05±0.06	6.3 ±0.03	5.3±2.02	6.04±0.02

केला की भुजिया के समग्र स्वीकार्यता स्कोर के आधार पर यह पाया गया कि 3 प्रतिशत स्तर पर पूरकता ने सबसे अधिक स्कोर किया और निर्जलित पत्तों के पाउडर के 7 प्रतिशत पूरकता के स्तर पर सबसे कम स्वीकार्य स्कोर किया। परिणामों से पता चला कि नियंत्रण की तुलना में निर्जलित पत्तों के पाउडर के 3 प्रतिशत पूरक स्तर पर सभी ऑर्गेनोलेप्टिक पैरामीटर के लिए उच्चतम स्कोर प्राप्त हुए इस प्रकार, यह देखा गया कि निर्जलित सहजन के पत्तों के पाउडर के साथ 3 प्रतिशत समावेशन स्तर पर गोभी की सब्जी को शुष्कता पैमाने पर सभी ऑर्गेनोलेप्टिक पैरामीटर के संबंध में सर्वोत्तम माना गया। येगाम्बल और स्वर्णलता (2019) ने मोरिंगा के पत्तों में पोषक तत्वों के विश्लेषण और उत्पादों के विकास पर एक अध्ययन किया। अध्ययन से पता चला कि मोरिंगा के पत्तों में सभी मैक्रो और माइक्रोन्यूट्रिएंट्स होते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि इस अद्‌भुत पत्तियों के पोषक तत्वों को विभिन्न उद्देश्यों पर लगाया जाए। मोरिंगा के पत्तों के पाउडर से विकसित उत्पाद पोषक तत्वों के अच्छे स्रोत हैं। इसलिए, अध्ययन ने निष्कर्ष निकाला कि विभिन्न उत्पादों से मोरिंगा के पत्तों को शामिल करने से कुपोषण में कमी आएगी।

4. सारांश एवं उपसंहार

सहजन पत्ते का पाउडर का मिश्रण करके खाध का विकास और मानकीकरण काफी उपयुक्त पाया गया | 5 प्रतिशत स्तर पर पूरक मूल्य वर्धित चपाती, भटूरा, छोला (काबुली चना), मेदु वड़ा, चीला (चना के बेसन) के साथ निर्जलित सहजन के पत्तों के पाउडर की समग्र स्वीकार्यता के औसत स्कोर ने सभी संवेदी विशेषताओं के लिए महत्वपूर्ण रूप से उच्चतम स्कोर प्राप्त किए। 3 प्रतिशत स्तर पर पूरक मूल्य वर्धित आलू, गोभी और केला भुर्जी और गोभी के पत्तों के पाउडर के औसत स्कोर ने सभी संवेदी विशेषताओं के लिए महत्वपूर्ण रूप से उच्चतम स्कोर प्राप्त किए। सभी स्वीकृत मूल्य वर्धित व्यंजनों ने अपने संबंधित नियंत्रण व्यंजनों की तुलना में उच्च स्कोर प्राप्त किया। जिसमें सभी व्यंजन में अल्पउपयोगी सहजन पाउडर का उपयोग कई तरीकों से किया जा सकता है | मौजूदा उत्पादों में शामिल करके और पोषक तत्वों से भरपूर मूल्यवर्धित उत्पादों का निर्माण करके टिकाऊ, सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य, लागत प्रभावी रणनीति की खोज करना आवश्यक है ,जिससे *मोरिंगा ओलीफेरा* के पत्ते का पाउडर की खपत बढ़ाई जा सके और इस तरह सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से निपटा जा सके । आधुनिक घरों में खाने के तरीके और जीवनशैली में आए बदलावों को ध्यानपुर्वक रखते हुए रेसिपी तैयार की गई है। रेसिपी का चयन सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के साथ-साथ मोरिंगा ओलीफेरा के पत्ते की खपत बढ़ाने के उद्देश्य से किया गया है। इसके अलावा, इसका उद्देश्य है कुपोषण के प्रबंधन के लिए *मोरिंगा ओलीफेरा* के पाउडर का उपयोग करके कम लागत वाले सुपर फूड का विकास एवं मानकीकरण एवं आहार में विविधता लाना भी है।चयनित रेसिपी भारतीय आबादी के लगभग सभी आयु समूहों द्वारा खाई जाती हैं और इन्हें कम सामग्री और कम समय में तैयार किया जा सकता है | हालांकि बच्चों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का जोखिम होता है, लेकिन वे ज्यादातर स्नैक्स और फास्ट फूड आइटम पसंद करते हैं। इसलिए सहजन पाउडर के साथ जैसे : चपाती, छोला, भटूरा, मूंग दाल की चिला, मेदू वडा, आलू की भुजिया, सूजी का इडली, आलू की भुजिया और केला की भुजिया को समृद्ध करके, आहार में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा सुनिश्चित की जा सकती है और इडली को नाश्ते के रूप में भी परोसा जा सकता है और भोजन के रूप में भी खाया जा सकता है। इसलिए सहजन पाउडर के साथ इन आम खाद्य पदार्थों में बिना अधिक प्रयास के आहार में सूक्ष्म पोषक तत्वों को शामिल करने का एक तरीका हो सकता है। यह खाध उत्पाद की आधारित रणनीति औषधीय अनुपूरण की तुलना में अधिक सुरक्षित है।

,
गृह विज्ञान विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा बिहार
aanchalsingh.singh@gmail.com

संदर्भ:

1. Alakali, J. S.,and Kucha, C.T.I.A.(2015). Effect of drying temperature on the nutritional quality of Moringa oleifera leaves, African. J. FoodSci. , 9(7): pp. 395-399.
2. Boateng, L., Nyarko, R., Asante, M., and Asiedu, M.S. (2018). Acceptability of complementary Foods that Incorporate Moringa oleifera Leaf Powder among Infants and Their Caregivers. Food Nutr Bull. ,39(1):137-148.
3. Mishra, S. P., Singh, P., and Singh, S. (2012). Processing of Moringa leaves for Human consumption. Bull. Env. Pharmacol. Life. Sci., 2(1):28-3.
4. Nambiar, V. S. and Parnami, S. (2007). Standardization and organoleptic evaluation of drumstick (moringa oleifera) leaves incorporated into traditional Indian recipes. J Trees for Life, 3:2-6.
5. Rangana, S. (1986). Mannual of analysis of fruits and vegetable products. Tata Mcgraw-Hill Publishing Company Limited, New Delhi.
6. Thippeswamy, T. G., Shreedhar, M.V., Murty, B. R. S., and Thijaswi, N. (2020). Ascorbic acid andmineral content in Moringa oleifera leaves: A study of ascorbic acid stability. J. Pharm. Sci. Res.,12(7):978-986.
7. Yegambal, S., and Swarnalatha, A. (2019). Nutrient analysis and development of products indrumstick leaves. J. Pharmacogn. Phytochem., 8(1):1173-1176.

शब्दावली आयोग CSTT

10. फसलों में खाद एवं उर्वरकों का सही उपयोग: आर्थिक दृष्टिकोण

[1]विजय कुमार और [2]रूही

सार: खाद कई प्रकार की होती हैं, परन्तु आज के इस आधुनिक समय में किसान अपनी फसलों की उपज को बढ़ाने के लिए अत्यधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करता जा रहा है। हालांकि इन उर्वरकों का असर बहुत कम समय तक रहता है, और यह मृदा की प्राकृतिक उपजाऊ शक्ति को भी प्रभावित करता है, जिससे कि फसलों की लागत और कीमतों में भी लगातार बढ़ोतरी होती जा रही है। अत: किसानों को सभी प्रकार की प्राकृतिक खादों की जानकारी हासिल करके ही खाद को ही खेत में इस्तेमाल करना चाहिए। गोबर की खाद, हरी खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मी कम्पोस्ट व जीवाणु खाद भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने के साथ-साथ पर्यावरण को भी हानि नहीं पहुंचाती है, हालांकि रासायनिक उर्वरकों की अपेक्षा खाद फसलों पर धीरे प्रभाव डालती हैं। प्रस्तुत लेख में खादों के सही उपयोग के साथ इसके आर्थिक पहलुओं पर भी चर्चा की गई है, ताकि किसान कम लागत में अधिक लाभ अर्जित कर सके और मृदा की सेहत को बनाए रखे। गोबर खाद, हरी खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट और जीवाणु खाद का उचित प्रयोग किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार ला सकता है, और साथ ही पर्यावरणीय लाभ भी प्रदान करता है।

मुख्य शब्द: गोबर खाद, हरी खाद, कम्पोस्ट, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट, जीवाणु खाद।

1. प्रस्तावना

कृषि में खाद का बहुत अधिक महत्व है, अगर हम कहें की खादों के बिना कृषि संभव नहीं है, तो यह अनुचित नहीं होगा। कोई भी फसल चाहे अनाज, दालें या फल सब्जियां आदि सभी के लिए खादों का इस्तेमाल करना पड़ता है। आजकल तो किसान अपनी फसल की उपज बढ़ाने के लिए अंधाधुंध उर्वरकों का उपयोग कर रहें हैं। जिससे एक बार तो यह हो सकता है, कि फसल की उपज में बढ़ोतरी हो जाए परंतु यह उर्वरक जमीन में बहुत कम समय तक रहती है, और मानव के शरीर में खाने के साथ जाकर शारीर में नुकसान भी करती है। आज के युग में किसान जागरूक हो गया है, जिससे वह पुन: गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद व हरी खाद आदि का प्रयोग भी करने लगा है। इस प्राकृतिक खाद से मिट्टी में आवश्यक तत्वों की पूर्ति भी हो जाती है, और भूमि की उपजाऊ शक्ति भी बढ़ जाती हैं, तथा मानव के शरीर पर भी कोई दुष्प्रभाव भी नहीं पड़ता है। इसलिए आज हम इस लेख में खाद व इनके प्रकार के बारे में विस्तार से चर्चा करेंगे।

ऐसे कार्बनिक पदार्थ जो पशुओं, पक्षियों, मानव, पेड़ पौधों तथा अनेकों जीव जंतुओं के व्यर्थ आदि में अवशिष्ट पदार्थों के अक्षय एवं अपघटन के परिणाम स्वरूप प्राप्त होते हैं, के अंदर बहुत से पोषक तत्व जटिल कार्बनिक रूपों में मौजूद होते हैं, को खाद के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। खाद मुख्यत: चार प्रकार की पाई जाती हैं, जिसमें गोबर खाद, हरी खाद, कंपोस्ट खाद व रसायनिक खाद शामिल हैं।

2.1. गोबर खाद:

गाय, भैंस, बैल आदि के मल को गोबर कहा जाता है। इन पशुओं के द्वारा घास-फूस, भूसा खली आदि बहुत प्रकार के चौपाइयों के द्वारा खाया जाता है। जिसके पाचन में बहुत से रसायनिक परिवर्तन होते हैं तथा पाचन क्रिया के पश्चात जो पदार्थ उपस्थित रह जाते हैं, वह शरीर के अन्य पदार्थों के साथ बाहर निकल जाते हैं, जिसको गोबर का नाम दिया जाता है। गोबर सामान्यतः नम और अर्ध-ठोस रूप में होता है। परंतु इन पशुओं के द्वारा खाए गए भोजन के अनुसार इसमें परिवर्तन भी मिलता है। जो पशु केवल हरी घास या अधिक खली पर निर्भर होते हैं, उन पशुओं का गोबर प्राय: पतला, इसका रंग पीला और लुगडा भूरा होता है। गोबर में घास, फूस, भूसा, अन्न दानों के टुकड़े भी पाए जाते हैं, जिन्हें सरलता से पहचाना भी जा सकता है। गोबर सूखने के बाद पिंड के रूप में हाथ से उपले में बदल दिया जाता है।

गोबर में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, मैगनिज, चूना, लोहा, एलमुनियम, गंधक और सिलिकॉन आदि कुछ अधिक मात्रा में पाए जाते हैं, तथा कोबाल्ट, आयोडीन व मोलिब्दिनम आदि की भी थोड़ी मात्रा मिलती है। इस प्रकार इसमें अधिकांश खनिजों के कारण गोबर को खाद के रूप में इस्तेमाल से मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बढ़ावा मिलता है। पौधों की मुख्य जरूरत नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटैशियम (NPK) की होती है, जो पशुओं के गोबर में क्रमश: 0.3-0.4, 0.10-0.15 तथा 0.15-0.2 प्रतिशत तक विद्यमान रहती है। मिट्टी के गोबर के संपर्क में आने से से इसमें मौजूद विभिन्न तत्व मिट्टी के कणों को आपस में बांधते हैं। यह तत्व इन कणों को दूर-दूर भी कर देते हैं, जिससे मिट्टी में हवा का प्रवाह बढ़ जाता है, और पौधों की जड़ें आसानी से सांस ले पाती हैं।

2.2 गोबर खाद बनाने हेतु विभिन्न प्रकार की विधियां:

गोबर से मुख्यतः तीन विधियों के द्वारा खाद बनाई जा सकती है।

(i) शीत विधि: इस विधि में 20 से 25 फुट लंबे, 5 से 6 फुट चौड़े और 3 से 10 फुट गहरे खड्डे खोदे जाते हैं और इनमें गोबर भर दिया जाता है। गोबर भरते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है, कि कोई जगह खाली ना रह जाए। इसलिए इसको अच्छी तरह से दबाया भी जाता है। गड्ढे के ऊपर वाले भाग को गुंबद की तरह बना देते हैं, और उसको गोबर के लेप से ही ढक दिया जाता है, जिससे वर्षा के दौरान पानी अंदर ना घुस पाए। उसके पश्चात इसको लगभग 3 महीने तक छोड़ दिया जाता है। इस विधि में खड्डे का तापमान 34 डिग्री से ऊपर नहीं जा पाता, क्योंकि गड्ढे में रासायनिक क्रियाएं भी हवा की अनुपस्थिति में ज्यादा नहीं हो पाती हैं, और नाइट्रोजन युक्त पदार्थ खाद के रूप में इसमें विद्यमान रहते हैं।

(ii) तप्त विधि: इस विधि में सबसे पहले गोबर की तह बिना दबाए डाल दी जाती है, जिससे हवा की मौजूदगी के कारण उसके अंदर रासायनिक परिवर्तन होते हैं, और तापमान 60 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है। उसके बाद उस तह को दबा दिया जाता है, और दूसरी गोबर की पतली परत उसके ऊपर डाल दी जाती है। फिर उसी प्रक्रिया में दोबारा तापमान बढ़ता है, रासायनिक क्रियाएं होती हैं। इस प्रकार 10 से 20 फुट तक ऊंचा ढेर बन जाता है। जिसको कुछ महीनों के लिए उसको खुला छोड़ दिया जाता है। इस विधि से फायदा यह होता है, कि तापमान अधिक होने के कारण घास मोटे अनाज पौधों के बीज जो गोबर में रह जाते हैं, वह सब नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार प्रत्येक पशु से लगभग 5 से 6 टन खाद बन सकती हैं।

(iii) हवा की मौजूदगी में खाद और गैस का उत्पादन: यह विधि भारतीय कृषि अनुसंधान केंद्र के द्वारा विकसित की गई है। जिसमें एक साधारण यंत्र का प्रयोग किया जाता है जिसमें गोबर की खाद को हवा की अनुपस्थिति में तैयार किया जाता है। इस विधि में एक प्रकार की गैस निकलती है, जो भोजन पकाने के लिए ईंधन के रूप में तथा यंत्र चलाने में प्रकाश के लिए भी काम आती है। इसमें गोबर पानी का मिश्रण करके यंत्र में प्रतिदिन डालते रहते हैं, और निकलने वाली गैस को ईंधन के रूप में इस्तेमाल करते हैं। इस विधि की खास बात यह है, कि गोबर सड़कर गंधहीन खाद अर्थवा ईंधन के रूप में प्राप्त होता है। इसके नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश आदि तत्व बिना नष्ट हुए इसी में सुरक्षित रह जाते हैं और इससे उपयोगी गैस भी प्राप्त हो जाती है।

शब्दावली आयोग CSTT

तालिका 1. भारत में गोबर की मात्रा और उसमें उपस्थित नाइट्रोजन फास्फोरस और पोटाश का वार्षिक उत्पादन

क्रम संख्या	तत्व या पदार्थ का नाम	मात्रा (लाख टन में)
1	गोबर सूखा	1446
2	कार्बनिक पदार्थ	1157
3	नाइट्रोजन	18.08
4	फास्फोरस	7.23
5	पोटाश	1.085

2.3 गोबर खाद के इस्तेमाल के आर्थिक लाभ

गोबर खाद के उपयोग से किसानों को कई आर्थिक लाभ मिलते हैं, जो खेती की लागत को कम करने और लाभप्रदता बढ़ाने में सहायक होते हैं। ये लाभ निम्नलिखित हैं:

(i) **रासायनिक खादों पर निर्भरता कम होती है:** गोबर खाद का उपयोग करने से किसानों को महंगी रासायनिक खादों की खरीदारी पर खर्च कम करना पड़ता है। इससे उनकी उत्पादन लागत घटती है और मुनाफे में वृद्धि होती है।

(ii) **स्थानीय संसाधनों का उपयोग:** गोबर खाद स्थानीय रूप से उपलब्ध होती है, जिससे किसानों को इसे बाहर से खरीदने या लाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इससे परिवहन लागत बचती है, और किसानों के लिए अधिक किफायती समाधान बनता है।

(iii) **मिट्टी की उर्वरता में सुधार:** गोबर खाद मिट्टी की संरचना में सुधार करती है, जिससे पौधों को लंबे समय तक पोषण मिलता है। इससे फसल की गुणवत्ता और पैदावार बढ़ती है, जो सीधे किसानों की आय को प्रभावित करती है।

(iv) **जल की बचत:** गोबर खाद मिट्टी की जल धारण क्षमता को बढ़ाती है, जिससे सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। इससे पानी और सिंचाई के खर्च में कमी आती है।

(v) **लंबी अवधि के फायदे:** गोबर खाद धीरे-धीरे काम करती है, जिससे पोषक तत्व लंबे समय तक पौधों को मिलते रहते हैं। इससे बार-बार खाद डालने की जरूरत कम हो जाती है, जिससे अतिरिक्त खर्च से बचा जा सकता है।

कुल मिलाकर, गोबर खाद का उपयोग किसानों के लिए आर्थिक रूप से फायदेमंद है, क्योंकि यह प्राकृतिक, सस्ता और टिकाऊ विकल्प प्रदान करता है, जो कृषि उत्पादन की लागत को कम करता है और उनकी आय में वृद्धि करता है।

3. कृषि हरी खादः

कृषि में हरी खाद उस फसल को कहते हैं, जिसको मुख्यतः उगाने के बाद बिना पके उसको भूमि में हल चलाकर मिट्टी में मिला दिया जाता है। यह भूमि के पोषक तत्वों को बढ़ाने और उसमें जैविक पदार्थों की पूर्ति करने के उद्देश्य से की जाती है। इस हरी खाद से भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ती है, और उसके जैविक पदार्थ एवं पोषक तत्वों की रक्षा भी की जाती है। भूमि में बिना गले-सड़े हरे पौधों को, चाहे वह दलहनी फसल हो या कोई अन्य फसल जैसे कि डेंचा, मूंग इत्यादि को भूमि की नाइट्रोजन युक्त या जीवांश की मात्रा को बढ़ाने के लिए खेत में मिलाया जाता है। हरी खाद को मिट्टी में डालने से न केवल नाइट्रोजन की मात्रा भूमि में बढ़ती है, बल्कि भूमि की भौतिक, रासायनिक और जैविक दशा में भी अत्यंत सुधार होता है। इससे भूमि प्रदूषण एवं वातावरण प्रदूषण की समस्या को भी बहुत हद तक कम किया जा सकता है। भूमि में सूक्ष्म तत्वों की आपूर्ति होती है और साथ ही मृदा की उपजाऊ शक्ति भी बढ़ जाती है।

हरी खाद के लिए दलहनी फसलों में मुख्यतः डेंचा, मूंग, लोबिया, उड़द, ग्वार, व सन हेंप इत्यादि फसलों का उपयोग किया जाता है। इन सभी फसलों की वृद्धि कम समय में जल्दी हो जाती है। इनकी पत्तियां बहुत अधिक संख्या में रहती हैं और वजनदार होती हैं। इनकी उर्वरक व जल की आवश्यकता भी बहुत कम होती है। इस कारण कम लागत में अधिक कार्बनिक खाद प्राप्त हो जाता है। दलहनी फसलों की जड़ों में नाइट्रोजन को वातावरण से लेकर मृदा में स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु पाए जाते हैं। ज्यादा वर्षा वाले स्थानों में सनहेंप का प्रयोग किया जा सकता है। सूखे की दशा वाले स्थानों में डेंचा उपयोग में लाया जा सकता है। कम बारिश वाले क्षेत्रों में रेतीली या कम उपजाऊ भूमि में ग्वार को उपयोग में लाया जा सकता है और लोबिया को अच्छे जल निकास वाली क्षारीय मृदा में और उड़द और मूंग को ग्रीष्म काल में ऐसी भूमि में उपयोग में लाया जा सकता है जहां जलभराव की समस्या न हो। इनसे इनकी फलियों से अच्छी उपज प्राप्त हो जाती है और शेष पौधा हरी खाद के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है। हरी खाद के लिए उपयोग में लाए फसल को बुवाई के 40 से 60 दिन की अवस्था में मिट्टी पलटने वाले हल से 15 से 20 सेंटीमीटर की गहराई पर पलट देना चाहिए। अगर हम समय से पहले पलट देंगे तो पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक पदार्थ प्राप्त नहीं होंगे और अगर देर से पलटेंगे तो पौधे का रेशा अधिक होने के कारण उसको गलने और सड़ने में ज्यादा वक्त लगेगा। अतः हरी खाद के लिए फसल को समय पर पलटना लाभदाई होता है। सनहेम्प की फसल को हरी खाद के रूप में पलटने के बाद उसमें पानी भर के धान की रोपाई की जा सकती है।

चित्र 2. हरी खाद हेतु ढेंचा का प्रयोग

3.1 हरी खाद के इस्तेमाल के आर्थिक लाभ

हरी खाद का उपयोग कृषि में एक प्रभावी रणनीति है, जो न केवल मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है, बल्कि किसानों को कई आर्थिक लाभ भी प्रदान करता है। ये लाभ निम्नलिखित हैं:

(i) **रासायनिक खादों की कमी**: हरी खाद का प्रयोग करने से किसानों को महंगी रासायनिक खादों पर निर्भरता कम हो जाती है। यह उनकी उत्पादन लागत को घटाने में मदद करता है, जिससे उनकी लाभप्रदता बढ़ती है।

(ii) **स्थानीय संसाधनों का उपयोग**: हरी खाद के लिए विभिन्न फसलों, जैसे कि दलहन और अन्य हरित पौधों का उपयोग किया जाता है, जो स्थानीय स्तर पर उपलब्ध होते हैं। इससे परिवहन की लागत बचती है और स्थानीय संसाधनों का बेहतर उपयोग होता है।

(iii) **मिट्टी की उर्वरता में सुधार**: हरी खाद मिट्टी की संरचना को सुधारती है, पोषक तत्वों को बढ़ाती है और मिट्टी की जल धारण क्षमता को बढ़ाती है। इससे फसल की पैदावार और गुणवत्ता में सुधार होता है, जो सीधे तौर पर किसानों की आय को बढ़ाता है।

(iv) **निम्न श्रेणी की फसलों का सहारा**: हरी खाद, जैसे कि दालें, जब अन्य फसलों के साथ उगाई जाती हैं, तो यह मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाती हैं। इससे अन्य फसलों के उत्पादन में सुधार होता है, जिससे किसानों को बेहतर आर्थिक लाभ मिलता है।

(v) **पारिस्थितिकी संतुलन**: हरी खाद का उपयोग मिट्टी में जैव विविधता को बढ़ावा देता है और कीटों और बीमारियों से फसलों की रक्षा करता है। इससे कीटनाशकों की आवश्यकता कम होती है, जिससे किसानों को बचत होती है।

(vi) **सिर्फ एक फसल के लिए नहीं**: हरी खाद का उपयोग लंबे समय में फसलों की उपज को बढ़ाता है, जिससे किसानों को प्रति एकड़ अधिक आय होती है। यह एक स्थायी समाधान प्रदान करता है, जो कृषि में दीर्घकालिक लाभ सुनिश्चित करता है।

कुल मिलाकर, हरी खाद का उपयोग किसानों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी है, क्योंकि यह एक प्राकृतिक, सस्ता और टिकाऊ विकल्प प्रदान करता है, जो उनकी कृषि उत्पादन की लागत को कम करता है और आय में वृद्धि करता है।

4. कंपोस्ट:

यह जैविक पदार्थों के अपघटन व पुन: चक्रण से प्राप्त होती है। कंपोस्ट जैविक खेती का एक मुख्य घटक है। कंपोस्ट को बड़ी आसानी से तैयार किया जा सकता है। इसमें नम पदार्थ जैसे पत्तियां व बचा कुचा खाने का ढेर बनाकर, कुछ समय तक प्रतीक्षा करना होती है जिससे उसका विघटन हो जाए। इसकी विघटन में कुछ हफ्ते या महीने तक लग जाते हैं। उसके बाद यह यह ह्यूमस में बदल जाता है। कंपोस्ट बनाने की आधुनिक विधि कई चरणों में पूरी होती है। प्रत्येक चरण में जल, वायु, कार्बन तथा नाइट्रोजन से समृद्ध पदार्थों को बड़ी सावधानी से एक निश्चित अनुपात में डाला जाता है। जैविक खाद यानी कंपोस्ट को बनाने में अपशिष्ट अपघटक जीवाणु का प्रयोग किया जाता है।यह एक प्रकार के सूक्ष्म जीव हैं जो जैविक खाद बनाने में मदद करते हैं और बहुत कम समय में जमीन की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं। यह वेस्ट डीकंपोजर देसी गाय के गोबर से निकला गया एक सूक्ष्म जीवों का संघ है जिसमें सभी प्रकार के कार्बनिक पदार्थों के अपघटक सूक्ष्म जीव सम्मिलित होते हैं। 30 ग्राम की बोतल की कीमत ₹20 होती है। इसको राष्ट्रीय जैविक खेती

केंद्र से बहुत आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। वेस्ट डी कंपोजर को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद नई दिल्ली ने भी मान्यता दे रखी है ।

4.1 कंपोस्ट खाद कैसे तैयार करें: किसी समतल जगह में प्लास्टिक की चादर के ऊपर, 1 टन फसल के अवशेष, घर की सब्जियों का छिलका , खराब खाना तथा गोबर इत्यादि डाल दें। इसके अंदर तैयार वेस्ट डीकंपोजर घोल का 20 लीटर मात्रा का छिड़काव कर दें। इसकी परत के ऊपर फसल अपशिष्ट की एक और परत चढ़ा दें और फिर से इस परत के ऊपर 20 लीटर वेस्ट डीकंपोजर के घोल का छिड़काव कर दें। इस प्रकार 200 लीटर वेस्ट डीकंपोजर को अपशिष्ट की 20 परत के लिए काम में लेते हैं। कंपोस्ट खाद बनाने की पूरी प्रक्रिया के दौरान जब तक खाद बनती है तो इसमें 60% नमी को बनाए रखते हैं। और प्रत्येक 7 दिनों के अंतर पर इसको पलटते रहते हैं । यह 30 दिनों में खाद उपयोग के लिए तैयार हो जाता है। अगर आप इस खाद का इस्तेमाल बीज बोने से पहले करते हैं तो उत्पादन बेहतर होता है।

कंपोस्ट के इस्तेमाल के आर्थिक लाभ

कंपोस्ट का उपयोग कृषि में कई आर्थिक लाभ प्रदान करता है। ये लाभ निम्नलिखित हैं:

(i) **कम लागत**: जैविक खाद बनाने के लिए, किसान स्थानीय जैविक अवशेषों, जैसे कि फसल के अवशेष, गोबर, और रसोई के बचे हुए पदार्थों का उपयोग कर सकते हैं। इससे उन्हें महंगी रासायनिक खादों की खरीद पर निर्भर नहीं रहना पड़ता, जिससे उत्पादन की लागत में कमी आती है।

(ii) **उर्वरता में सुधार**: जैविक खाद मिट्टी के गुणों को बेहतर बनाती है, जिससे उसकी उर्वरता बढ़ती है। यह फसलों की पैदावार और गुणवत्ता में सुधार लाता है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है।

(iii) **पौधों की सेहत**: जैविक खाद पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है, जिससे वे स्वस्थ और मजबूत होते हैं। स्वस्थ पौधे बीमारियों और कीटों के प्रति अधिक प्रतिरोधी होते हैं, जिससे कीटनाशकों की आवश्यकता कम हो जाती है और लागत में बचत होती है।

(iv) **जल धारण क्षमता**: जैविक खाद मिट्टी की जल धारण क्षमता को बढ़ाती है, जिससे फसलों को सूखे के समय में भी पानी की पर्याप्त मात्रा मिलती है। इससे किसानों को सिंचाई की लागत कम करने में मदद मिलती है।

(v) **स्थायी कृषि**: जैविक खाद के प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है और भूमि की गुणवत्ता में सुधार होता है, जो दीर्घकालिक फसल उत्पादन के लिए सहायक होता है। यह सतत कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देता है, जिससे किसान भविष्य में भी लाभ उठा सकते हैं।

(vi) **पारिस्थितिक संतुलन**: जैविक खाद का उपयोग कृषि में पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने में मदद करता है। यह मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ाता है, जो मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(vii) **बाजार मूल्य में वृद्धि**: जैविक उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण, किसान यदि जैविक खाद का उपयोग करते हैं, तो वे उच्च बाजार मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

कुल मिलाकर, जैविक खाद का इस्तेमाल किसानों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी है, क्योंकि यह उत्पादन लागत को कम करता है, फसल उत्पादन और गुणवत्ता में सुधार करता है, और दीर्घकालिक कृषि विकास को प्रोत्साहित करता है।

5. उर्वरक

कृषि में उपज को बढ़ाने के लिए बहुत से रसायनों का प्रयोग किया जाता है जो पेड़ पौधों की वृद्धि में सहायता करते हैं, उनको उर्वरक कहा जाता है। पानी में जल्दी घुलने वाले यह रसायन मिट्टी में या पत्तियों पर छिड़काव करके प्रयोग किए जाते हैं। पौधे पत्तियों के द्वारा उर्वरकों को सोख लेते हैं। यह उर्वरक पौधों के लिए आवश्यक तत्वों की तुरंत पूर्ति कर देते हैं।

पौधे के लिए तीन मुख्य पोषक तत्व होते हैं नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश। द्वितीयक पोषक तत्व कैल्शियम, सल्फर और मैग्नीशियम होते हैं और सूक्ष्म पोषक तत्व बोरान, मैंगनीज, लोहा, जस्ता, तांबा, क्लोरीन और मोलिब्दीनम आदि होते हैं। प्रमुख रासायनिक उर्वरकों में यूरिया, डाई अमोनियम फास्फेट, सुपर फास्फेट, जिंक सल्फेट व पोटाश खाद पाए जाते हैं।

उर्वरकों को मुख्य रूप से तोलिए या कपड़े की झोली में डाल कर छोटे पौधों में आधा व बड़े पौधों में 1 फुट के तने की दूरी रखते हुए डाला जाता है। खाद को पौधे की टहनियों के फैलाव के नीचे बिखेर कर मिट्टी में मिला दिया जाता है। छिड़काव विधि से उर्वरक का पतों के ऊपर छिड़काव किया जाता है।अधिकतर यूरिया खाद को पानी में घोलकर पत्तों पर छिड़काव किया जाता है। एक किलो यूरिया को 50 लीटर पानी में डालकर छिड़काव करना चाहिए

शब्दावली आयोग CSTT

अन्यथा कम पानी में मिलाने से पत्तों के झुलसने की संभावना बन जाती है। बिखेर कर डालने की विधि में पौधों की 2 पंक्तियों के बीचों बीच पौधों से उचित दूरी बनाते हुए खाद बिखेर कर डाली जाती है।

उर्वरक के इस्तेमाल से आर्थिक लाभ

उर्वरक, विशेष रूप से रासायनिक और जैविक दोनों प्रकार के, कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनके इस्तेमाल से किसानों को कई आर्थिक लाभ मिलते हैं, जो निम्नलिखित हैं:

(i) **उच्च पैदावार**: उर्वरक का सही उपयोग फसलों की पैदावार को बढ़ाता है। इससे किसान अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं, जो उनकी आय को सीधे प्रभावित करता है।

(ii) **गुणवत्ता में सुधार**: उर्वरक फसलों की गुणवत्ता को बेहतर बनाते हैं। उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों की मांग अधिक होती है, जिससे किसानों को बेहतर मूल्य मिल सकता है।

(iii) **जलवायु अनुकूलता**: उर्वरक फसलों को विभिन्न जलवायु परिस्थितियों में बढ़ने में मदद करते हैं। इसके परिणामस्वरूप, किसान विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन कर सकते हैं, जो आय के विविध स्रोत प्रदान करता है।

(iv) **संवर्धित मिट्टी स्वास्थ्य**: सही मात्रा में उर्वरक का उपयोग मिट्टी के पोषक तत्वों के संतुलन को बनाए रखता है। इससे मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है और दीर्घकालिक उत्पादन संभव होता है, जो आर्थिक स्थिरता प्रदान करता है।

(v) **सिंचाई लागत में कमी**: उर्वरक का उचित उपयोग मिट्टी में पानी धारण करने की क्षमता को बढ़ाता है, जिससे किसानों को सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। यह उनकी कुल उत्पादन लागत को कम करता है।

(vi) **सामाजिक-आर्थिक विकास**: उर्वरक के प्रभावी इस्तेमाल से कृषि उत्पादकता बढ़ती है, जो ग्रामीण समुदायों में रोजगार के अवसर पैदा करता है। इससे स्थानीय अर्थव्यवस्था में सुधार होता है।

(vii) **निवेश पर प्रतिफल (रिटर्न)**: उर्वरक पर किए गए निवेश से उत्पादकता में वृद्धि के कारण किसान बेहतर प्रतिफल प्राप्त करते हैं। यह उन्हें अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में मदद करता है।

(viii) **बाजार पहुंच**: उर्वरक के सही उपयोग से किसान उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों का उत्पादन करते हैं, जो बाजार में अधिक मांग में होते हैं। यह उन्हें उच्च मूल्य प्राप्त करने में मदद करता है।

कुल मिलाकर, उर्वरक का उपयोग कृषि में आर्थिक लाभ प्रदान करता है, जिससे किसान अपनी उत्पादन क्षमता को बढ़ा सकते हैं और दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता प्राप्त कर सकते हैं।

6. वर्मीकम्पोस्ट (केंचुआ खाद):

केंचुओं की सहायता से कचरे को खाद में बदलने हेतु केंचुओं को नियंत्रित वातावरण में पाला जाता है। इस प्रक्रिया को वर्मीकल्चर कहा जाता हैं, इन केंचुओं द्वारा कचरा खाकर जो कास्ट निकलती है उसे वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं।

केंचुओं का महत्त्व: जिस प्रकार खाद का कृषि में बहुत योगदान है उसी प्रकार केंचुओं का भी कृषि में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। इनकी क्रिया मिट्टी में स्वतः चलती रहती है। पहले के समय में अक्सर भूमि में केंचुए देखे जाते थे और बारिश के समय भूमि पर देखे जाते थे। परन्तु आज के युग में खेती में अत्यधिक रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशकों के लगातार प्रयोगों से केंचुओं की संख्या में बहुत कमी हो गई है। जिसके कारण भूमि की उर्वरा शक्ति भी दिन प्रतिदिन कमजोर होती जा रही है। वास्तव में केंचुआ मिट्टी में पाये जाने वाले जीवों में सबसे अहम है। ये अपने खाने के रूप में मिट्टी तथा कच्चे जीवांश को निगलकर अपनी पाचन नलिका से गुजारते हैं जिससे वह एक महीने में ही कम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाती है और अपने शरीर से बाहर छोटी-छोटी कास्टिग्स के रूप में निकालते हैं। इसी कम्पोस्ट को वर्मी कम्पोस्ट कहा जाता है।

चित्र 5: वर्मी कम्पोस्ट

6.1 वर्मीकम्पोस्ट में विभिन्न तत्वों की मात्रा

वर्मीकम्पोस्ट में साधारण मिट्टी की तुलना में 5 गुना अधिक नाइट्रोजन, 7 गुना अधिक फॉस्फेट, 7 गुना अधिक पोटाश, 2 गुना अधिक मैग्नीशियम व कैल्शियम होते हैं। प्रयोगशाला में जाँच करने पर विभिन्न पोषक तत्वों जैसे, नाइट्रोजन 1.0-2.25 %, फास्फोरस 1.0-1.50 %, पोटाश 2.5-3.00 % मात्रा में पाए जाते हैं।

6.2 वर्मी कम्पोस्ट के लाभ

वर्मी कम्पोस्ट खेती के लिए एक अच्छी किस्म की खाद है और साधारण कम्पोस्ट या गोबर की खाद से बहुत अधिक लाभकरी साबित हुई है। इसके प्रयोग करने से निम्नलिखित लाभ अपेक्षित है:

(i) वर्मी कम्पोस्ट को भूमि में छिड़कने से भूमि थोड़ी हल्की, भुरभुरी एवं उपजाऊ बनती है। इससे पौधों की जड़ों के लिये उचित वातावरण बन जाता है। जिससे उनका अच्छा विकास होता है।

(ii) वर्मी कम्पोस्ट में आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर व सन्तुलित मात्रा में होते हैं। जिससे पौधे सन्तुलित मात्रा में विभिन्न आवश्यक तत्व प्राप्त कर सकते हैं।

(iii) वर्मी कम्पोस्ट के प्रयोग से मिट्टी भुरभुरी हो जाती है जिससे उसमें पोषक तत्व व जल संरक्षण की क्षमता बढ़ जाती है व हवा का आवागमन भी मिट्टी में ठीक रहता है।

(iv) भूमि एक जैविक माध्यम है तथा इसमें अनेक जीवाणु होते हैं जो इसको जीवन्त बनाए रखते हैं। इन जीवाणुओं को भोजन के रूप में कार्बन की आवश्यकता होती है। वर्मी कम्पोस्ट मृदा से कार्बनिक पदार्थों की वृद्धि करता है तथा भूमि में जैविक क्रियाओं को निरन्तरता प्रदान करता है।

(v) वर्मी कम्पोस्ट क्योंकि कूड़ा-करकट, गोबर व फसल अवशेषों से तैयार किया जाता है अतः गन्दगी में कमी करता है तथा पर्यावरण को सुरक्षित रखता है।

7. जीवाणु खाद

यह एक प्रकार की प्राकृतिक खाद है।जीवाणु खाद सूक्ष्म जीवाणुओं से बनती है जो फसल एवं पर्यावरण के मित्र होते हैं। इस खाद को विभिन्न प्रकार के जैविक पदार्थ (माध्यम) में मिलाकर बनाया जाता है। इस खाद को धरती की सबसे सस्ती खाद भी कहा जाता है।

7.1 जीवाणु खाद का काम करने का तरीका: जीवाणु खाद प्रमुख रूप से दो प्रकार की होती है। एक प्रकार की जीवाणु खाद वायुमंडल में उपलब्ध नाइट्रोजन का स्थरीकरण करके फसल को उपलब्ध कराता है। दूसरे प्रकार की जीवाणु खाद मिट्टी में उपलब्ध अघुलनशील अर्थात फसलों को अप्राप्त फास्फोरस को घुलनशील बनाकर फसल को उपलब्ध कराती है।

शब्दावली आयोग CSTT

चित्र 6: राइजोबियम

7.2 जीवाणु खाद के उपयोग से लाभ: यह पूर्ण रूप से जैविक खाद है जिसका कोई गलत प्रभाव किसी भी जीवधारी पर नहीं पड़ता है। इस खाद के व्यवहार से फसल को हर तरह से लाभ होता है। फसल में बाहरी नाइट्रोजन की आपूर्ति 30% तक कम हो जाती है। फसल की वानस्पतिक एवं प्रजनन अवस्था समान रूप से चलती है। इसका प्रभाव धीरे-धीरे फसल पर होता है और बहुत अधिक समय तक बना रहता है। कृषि उत्पाद की गुणवत्ता काफी बढ़ जाती है। फसल की उत्पादन लागत घट जाती है और उत्पादन बढ़ जाता है।

जीवाणु खाद के इस्तेमाल के आर्थिक लाभ

जीवाणु खाद, जो माइक्रोबियल खाद के रूप में भी जानी जाती है, फसलों के लिए अत्यधिक लाभकारी होती है। इसके आर्थिक लाभ निम्नलिखित हैं:

(i) पैदावार में वृद्धि: जीवाणु खाद का इस्तेमाल फसलों की पैदावार को बढ़ाता है। यह पौधों के पोषण में सहायक होता है, जिससे किसान अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं, जो उनकी आय में वृद्धि करता है।

(ii) मिट्टी की उर्वरता: जीवाणु खाद मिट्टी की जैविक संरचना को सुधारती है और उसे अधिक उर्वर बनाती है। इससे मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ती है, जो दीर्घकालिक फसल उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है।

(iii) रासायनिक उर्वरकों की कमी: जीवाणु खाद का उपयोग रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता को कम कर सकता है। इससे किसानों को उर्वरकों की खरीद पर होने वाले खर्च में कमी आती है, जिससे उनकी उत्पादन लागत घटती है।

शब्दावली आयोग CSTT

(iv) पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता: जीवाणु खाद का इस्तेमाल पौधों को रोगों और कीटों से लड़ने में मदद करता है। इससे किसानों को कीटनाशकों पर निर्भरता कम करने में मदद मिलती है, जो आर्थिक रूप से फायदेमंद है।

(v) पर्यावरणीय लाभ: जीवाणु खाद के इस्तेमाल से पर्यावरण को नुकसान नहीं पहुँचता, जो कि दीर्घकालिक कृषि उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। इससे किसान सतत कृषि प्रथाओं को अपनाने में सक्षम होते हैं।

(vi) पोषक तत्वों का बेहतर उपयोग: जीवाणु खाद फसलों को पोषक तत्वों का अधिक प्रभावी ढंग से उपयोग करने में मदद करती है। इससे फसलों की वृद्धि में तेजी आती है, जिससे किसानों को उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद मिलते हैं।

(vii) स्थायी कृषि: जीवाणु खाद का उपयोग कृषि में स्थिरता लाने में मदद करता है, जिससे किसान दीर्घकालिक रूप से आर्थिक रूप से लाभान्वित होते हैं।

(viii) सामाजिक लाभ: जीवाणु खाद का सही उपयोग ग्रामीण समुदायों में रोजगार के अवसर पैदा करता है, जिससे सामाजिक-आर्थिक विकास होता है।

कुल मिलाकर, जीवाणु खाद का इस्तेमाल किसानों को आर्थिक और पर्यावरणीय दृष्टि से लाभ पहुंचाता है, जिससे उनकी कृषि उत्पादकता और आय में वृद्धि होती है।

फसलों में खाद और उर्वरकों का सही इस्तेमाल न केवल कृषि उत्पादन को बढ़ाने में महत्वपूर्ण है, बल्कि यह किसानों की आर्थिक स्थिति को भी मजबूत करने में सहायक है। गोबर खाद, हरी खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट और जीवाणु खाद जैसे कार्बनिक खादों के उपयोग से किसान महंगी रासायनिक खादों पर निर्भरता कम कर सकते हैं, जिससे उनकी उत्पादन लागत घटती है। इन खादों का उपयोग मिट्टी की उर्वरता में सुधार लाता है, जल की बचत करता है, और फसलों की गुणवत्ता और पैदावार बढ़ाता है। साथ ही, ये खादें पर्यावरण के लिए भी फायदेमंद हैं, क्योंकि ये प्रदूषण को कम करने में मदद करती हैं और मृदा की सेहत को बनाए रखती हैं।

इस प्रकार, किसानों को खादों के सही उपयोग के माध्यम से न केवल अधिक लाभ अर्जित करने की संभावना है, बल्कि वे एक सतत और स्वस्थ कृषि प्रणाली को भी बढ़ावा दे सकते हैं। इससे न केवल उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होगा, बल्कि कृषि क्षेत्र में टिकाऊ विकास को भी सुनिश्चित किया जा सकेगा।

[1]जिला विस्तार विशेषज्ञ (फार्म प्रबंधन), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केंद्र, उचानी, करनाल (हरियाणा)-132001

[2]सहायक वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय अनुसन्धान केंद्र, उचानी, करनाल (हरियाणा)- 132001

पत्राचार लेखक: [1]डॉ विजय कुमार, ईमेल: v_jay1977@hau.ac.in

संदर्भ

1. https://www.bhaskar.com/news/MP-GWA-HMU-MAT-latest-mo-news.html
2. https://www.amazon.in/-/hi/Ugaoo
3. https://hindi.thebetterindia.com/27872/how-to-make-compost-kitchen-waste-home-organic-garden-tips-india/
4. https://hi.vikaspedia.in/agriculture/91594393793f
5. https://blog.mygov.in
6. https://hi.wikipedia.org/wiki
7. https://tarunmitra.in/other-news/farming/organic-and-inorganic-fertilizers/cid2366456.htm
8. https://hindi.indiawaterportal.org/content/varamai-kamapaosata-vermicompost/content-type-page/68250

शब्दावली आयोग CSTT

11. गढ़वाल हिमालय क्षेत्र में *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा ग्रे, 1827* की आकारमिति और प्रजनन पारिस्थितिकी पर एक व्यापक अध्ययन

[1]स्मिता डंगवाल, [2]दिनेश कुमार शर्मा

सार: यह अध्ययन उत्तर-पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र में वितरित अगैमिड छिपकली लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा की आकृतिक और व्यवहारिक विशेषताओं पर आधारित है। अध्ययन क्षेत्र 350 मीटर की ऊँचाई पर स्थित उपोष्ण कटिबंधीय पर्णपाती वनों से लेकर 1700 मीटर की ऊँचाई तक फैले समशीतोष्ण चीड़-मिश्रित वनों तक विस्तृत है। यह शोध जनवरी 2020 से दिसंबर 2021 तक की दो वर्षों की अवधि में संचालित किया गया। लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा मुख्यतः गर्म और शुष्क पर्यावासों में पाई जाती है, जिसमें चट्टानी क्षेत्र, परित्यक्त भवन, और मानव निर्मित दीवारें शामिल हैं, जहाँ वनस्पति प्रायः जड़ी-बूटियों, झाड़ियों और घासों से युक्त होती है। वयस्क छिपकलियों को आकारमिति और गणनात्मक विश्लेषण हेतु फंदा विधि का उपयोग कर पकड़ा गया। अध्ययन के परिणामों में लैंगिक द्विरूपता देखी गई, जहाँ नरों में मादाओं की तुलना में प्रोथ से गुदा तक की लंबाई (SVL), सिर की लंबाई (HL), सिर की चौड़ाई (HW), अग्रपाद की लंबाई (FLL), पश्चपाद की लंबाई (HLL), तथा चौथे अंगुली की लंबाई (L4thT) अधिक पाई गई। हालांकि, गणनात्मक विशेषताओं में नर और मादा के बीच कोई सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया। व्यवहारिक आंकड़े फोकल प्रतिचयन विधि द्वारा संकलित किए गए। प्रजनन काल (अप्रैल से अक्टूबर) के दौरान, नर डंड लगाने जैसे प्रदर्शन कर मादाओं को आकर्षित करते हैं और प्रतिद्वंद्वी नरों को चेतावनी देते हैं। यह प्रजाति प्रत्येक प्रजनन चक्र में एक बार अंडे देती है। अध्ययन के दौरान दर्ज किए गए 47 क्लचों में प्रति क्लच 3 से 19 अंडे (औसत 8.23±0.58 अंडे) पाए गए। अंडों का ऊष्मायन काल औसतन 36.21±0.99 दिन रहा, और इनसे अंडों के फूटने की सफलता दर 77.80±2.28% दर्ज की गई। सर्दियों (दिसंबर से जनवरी) के दौरान लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों से बचने के लिए शीतनिद्रा में चली जाती है।

मुख्य शब्द: अंडों के फूटने की सफलता दर, ऊष्मायन काल, गणनात्मक विशेषताएँ, आकारमिति, डंड लगाना, लैंगिक द्विरूपता

1. प्रस्तावना

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा जिसे आमतौर पर कश्मीर रॉक अगामा के नाम से जाना जाता है, एक अगैमिड छिपकली प्रजाति है जो अफगानिस्तान, चीन, कश्मीर, उत्तरी पाकिस्तान, तिब्बती पठार, भारत और नेपाल के उत्तर-पश्चिमी

हिमालयी क्षेत्रों में पाई जाती है। भारत में इसका वितरण विशेष रूप से जम्मू और कश्मीर, लद्दाख, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में दर्ज किया गया है। यह प्रजाति हिमालयी क्षेत्र की स्थानिक है, और इसका प्रथम वैज्ञानिक वर्णन बंगाल से किया गया था (Smith, 1935)। संरक्षण की दृष्टि से *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* को आईयूसीएन (IUCN) रेड लिस्ट में कम चिंताजनक संस्करण 3.1 (Least Concern ver. 3.1) श्रेणी में सूचीबद्ध किया गया है (Das *et al.*, 2021)। यह प्रजाति एक ऊर्ध्वाधर रूप से चपटी देह संरचना रखती है। इसकी औसत कुल लंबाई 292.53±0.88 मिमी (167.67–384.96 मिमी) और शरीर भार 52.03±17.63 ग्राम (22–91 ग्राम) तक होता है। इस प्रजाति की प्रमुख आकृतिक विशेषताओं में सतही कर्णछिद्र, मजबूत अंग, और छल्लेदार खंडों के साथ लंबी पूंछ शामिल हैं। नर सामान्यतः मादाओं की अपेक्षा आकार और भार में बड़े होते हैं, जो लैंगिक द्विरूपता का स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करता है । इनके शरीर का रंग स्लेटी से लेकर नीले और भूरे रंग के विभिन्न शेड्स में हो सकता है। *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* एक दिवाचार प्रजाति है और सामान्यतः शुष्क, पथरीले आवासों जैसे चट्टानों की दरारों, परित्यक्त मकानों और मानव निर्मित दीवारों में पाई जाती है।

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा में प्रजनन गतिविधियाँ गर्मियों की शुरुआत के साथ प्रारंभ होती हैं, जो सामान्यतः अप्रैल से जून तक चलती है। अंडोत्सर्जन मुख्य रूप से मानसून काल में, जुलाई से सितंबर के मध्य होता है। प्रजनन काल के दौरान नर छिपकलियों की पहचान उनके शरीर विशेष रूप से पैरों, पेट के किनारों और पूंछ के आधार पर उभरने वाले विशिष्ट नीले रंग के विविध छायाओं से की जा सकती है। इस अवधि के दौरान नर छिपकलियाँ सक्रिय रूप से प्रणय और क्षेत्रीय व्यवहार प्रदर्शित करती हैं। इनमें डंड लगाने और गले के प्रदर्शन जैसी गतिविधियाँ शामिल होती हैं, जिनका उद्देश्य प्रतिद्वंद्वी नरों पर प्रभुत्व स्थापित करना और संभावित मादाओं को आकर्षित करना होता है। मादाओं में भी पुश-अप्स व्यवहार परिलक्षित होता है, जो प्रायः घोंसले अथवा अंडों की सुरक्षा के दौरान एक रक्षात्मक प्रतिक्रिया के रूप में प्रदर्शित होता है।

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा की आकृतिक-विज्ञान और प्रजनन पारिस्थितिकी से संबंधित वर्तमान जानकारी सीमित, खंडित और अधिकांशतः पुराने अध्ययनों पर आधारित है। अब तक किए गए *आकारमिति* अध्ययन मुख्यतः पूर्व प्रकाशित कार्यों पर तक ही सीमित रहे हैं (Raina and Duda, 1967; Duda and Kaul, 1976)। उत्तर-पश्चिमी हिमालय, विशेषकर गढ़वाल क्षेत्र में, इस प्रजाति पर संगठित और दीर्घकालिक अध्ययनों की स्पष्ट कमी रही है। इस संदर्भ में Waltner (1991) ने विभिन्न ऊँचाई स्तरों पर एक तुलनात्मक पारिस्थितिकीय अध्ययन किया, जबकि Joshi (1991) ने प्रजाति के कुछ पारिस्थितिकीय-जीववैज्ञानिक पहलुओं की जांच की थी।

अपने पारिस्थितिक महत्व के बावजूद, *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* को अब तक वैज्ञानिक समुदाय से अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया गया है। यह प्रजाति हिमालयी खाद्य जाल में एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करती है, जो न केवल

शोधावली आगाम CSIT

कृषि के हानिकारक कीटों को नियंत्रित करती है, , बल्कि पक्षियों और साँपों जैसे उच्च श्रेणी के शिकारियों के लिए प्रमुख आहार स्रोत है। इस द्वैत भूमिका के कारण यह प्रजाति पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में सहायक होने के साथ-साथ पारिस्थितिकीय और व्यावहारिक अनुसंधानों हेतु एक आदर्श मॉडल जीव के रूप में भी उभरती है। वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य उत्तर-पश्चिमी हिमालय के गढ़वाल क्षेत्र में इसकी पारिस्थितिक एवं व्यावहारिक विशेषताओं पर व्यापक जानकारी प्रदान करना है, जिससे इस क्षेत्र में प्रजाति से संबंधित ज्ञान के अभाव को दूर किया जा सके। इसके परिणाम भविष्य में इस प्रजाति के संरक्षण, प्रबंधन और पारिस्थितिकीय अनुसंधान के लिए आवश्यक आधारभूत आंकड़े उपलब्ध कराएंगे, जो क्षेत्रीय जैव विविधता संरक्षण प्रयासों में भी योगदान दे सकते हैं।

2. कार्यप्रणाली

2.1 अध्ययन क्षेत्र

अध्ययन हेतु तीन स्थलों का चयन ऊँचाई के अंतराल के आधार पर किया गया। पहला स्थल (S1) समुद्र तल से 350 मीटर की निम्न ऊँचाई पर स्थित था, जिसकी भौगोलिक स्थिति 30° 07' 32.37" उत्तर और 78° 18' 50.93" पूर्व थी। यह क्षेत्र उप-उष्ण कटिबंधीय चौड़ी पत्ती और शुष्क पतझड़ी वनों से आच्छादित था, जहाँ प्रमुख वृक्ष प्रजातियों में साल (*Shorea robusta*), शीशम (*Dalbergia sissoo*), और टीक (*Tectona grandis*) शामिल थे। दूसरा स्थल (S2) मध्यम ऊँचाई, अर्थात् 1000 मीटर पर स्थित था, जिसकी भौगोलिक स्थिति 30° 19' 15.71" उत्तर और 78° 21' 0.57" पूर्व थी। यह क्षेत्र उप-उष्ण कटिबंधीय मिश्रित पतझड़ी वनों तथा चीड़ के जंगलों से युक्त था। तीसरा स्थल (S3) 1700 मीटर की उच्च ऊँचाई पर स्थित था, जिसका अक्षांश 30° 20' 10.58" उत्तर और देशांतर 78° 24' 26.55" पूर्व था। इस स्थल पर चीड़-बांज के मिश्रित वन पाए जाते थे, जिनमें प्रमुख रूप से समशीतोष्ण शंकुधारी वृक्ष प्रजातियाँ जैसे चिर पाइन (*Pinus roxburghii*), हिमालयन पाइन (*Pinus wallichiana*), और बांज ओक (*Quercus leucotrichophora*) शामिल थीं। इनके अतिरिक्त काफल (*Myrica esculenta*) और बुरांश (*Rhododendron arboreum*) जैसे महत्त्वपूर्ण वृक्ष भी उपस्थित थे (चित्र 1)।

2.2 अध्ययन विधि

अध्ययन अवधि को दो प्रमुख मौसमों में विभाजित किया गया था: प्रजनन काल (अप्रैल से सितंबर) और गैर-प्रजनन काल (अक्टूबर से मार्च)। तीनों चयनित स्थलों पर प्रत्येक में 1 किलोमीटर लंबाई की एक-एक ट्रांसेक्ट (पगडंडी) निर्धारित की गई। सर्वेक्षण कार्य गर्मियों में सुबह 8:00 बजे से शाम 6:00 बजे तक तथा सर्दियों में सुबह 9:00 बजे से शाम 5:00 बजे तक संपन्न किए गए। छिपकलियों को पकड़ने के लिए फंदा विधि का प्रयोग किया गया। उनके शारीरिक माप जैसे आकृतिमापक आँकड़े डिजिटल कैलिपर्स की सहायता से लिए गए, जबकि शरीर का वजन

इलेक्ट्रॉनिक किचन बैलेंस से मापा गया। इसके अतिरिक्त, गणनात्मक लक्षणों की गिनती के लिए हैंड लेंस का उपयोग किया गया।

अध्ययन के दौरान छिपकलियों के विविध आकृतिमापक एवं गणनात्मक लक्षणों का सुव्यवस्थित विश्लेषण किया गया। आकृतिमापक लक्षणों में प्रोथ से गुदा तक की लंबाई (SVL), सिर की लंबाई (HL), सिर की चौड़ाई (HW), अग्रपाद की लंबाई (FLL), पश्चपाद की लंबाई (HLL), चौथी अंगुली की लंबाई ($L4^{th}F$), चौथे पैर की अंगुली की लंबाई ($L4^{th}T$), तथा कुल शरीर की लंबाई (TBDL) शामिल थी। इसी प्रकार, गणनात्मक लक्षणों में सुप्रालैबियल्स (SL), इन्फ्रालैबियल्स (IL), चौथी अंगुली पर स्थित सब डिजिटल पटलिकाएं ($SDLF4^{th}F$), पैर की चौथी अंगुली पर स्थित सब डिजिटल पटलिकाएं ($SDLF4^{th}T$), मेरुदंडीय कणों की लंबवत पंक्तियाँ (LVS), उदर कैलोस शल्कों की पंक्तियाँ (AS), उदर कैलोस शल्कों की लंबाई (LAS), उदर कैलोस शल्कों की चौड़ाई (WAS), गुदपूर्वी कैलोस शल्कों की पंक्तियाँ (PAS), गुदपूर्वी कैलोस शल्कों की लंबाई (LPAS), और गुदपूर्वी कैलोस शल्कों की चौड़ाई (WPAS) का मापन किया गया। आकृतिक शब्दावली के निर्धारण हेतु Ananjeva *et al.* (2011) और Baig *et al.* (2012) के प्रकाशनों का संदर्भ लिया गया। सभी मापदंडों को औसत±मानक त्रुटि (Mean±SE) के रूप में प्रस्तुत किया गया। डेटा की सामान्यता की जांच शापिरो-विल्क परीक्षण (Shapiro-Wilk test) द्वारा की गई । नर और मादा के बीच आकृतिमापक एवं गणनात्मक लक्षणों में अंतर का विश्लेषण स्वतंत्र नमूना टी-परीक्षण (independent sample t-test) के माध्यम से किया गया। इसके अतिरिक्त दोनों लिंगों के लिए पृथक रूप से सहसंबंध मैट्रिक्स (correlation matrix) तैयार की गई। समस्त सांख्यिकीय विश्लेषण SPSS सॉफ़्टवेयर के संस्करण 23 (SPSS ver. 23) की सहायता से संपन्न किए गए।

3. परिणाम और चर्चा

3.1 आकृतिक विज्ञान

तीन अध्ययन स्थलों से, जिनकी ऊँचाई समुद्र तल से 350 से 1700 मीटर के बीच थी, कुल 141 वयस्क छिपकलियाँ (85 नर और 56 मादा) पकड़ी गई। यह प्रजाति स्पष्ट लैंगिक द्विरूपता प्रदर्शित करती है, जहाँ नर मादाओं की तुलना में आकार में बड़े और वजन में भारी होते हैं। शरीर का रंग नीला से जैतूनी भूरा होता है और उस पर विभिन्न प्रकार के धब्बे देखे जा सकते हैं। टांगों पर नीले रंग के विविध छायाएं तथा पूंछ के आधार पर नीला और सिरे पर गहरा काला रंग पाया जाता है। मादाओं की रंगत नर की तुलना में अपेक्षाकृत कम चमकीली होती है (Dangwal *et al.*, 2022) (चित्र 2)। परिपक्व नर की प्रोथ से गुदा तक की लंबाई (SVL) 74.39-144.92 मिमी (114.28±1.58 मिमी) और वजन 22-91 ग्राम (54.89±2.05 ग्राम) होता है, जबकि परिपक्व मादाओं की SVL 82.76-130.15 मिमी

(109.19±1.83 मिमी) और वजन 23-78 ग्राम (47.68±1.95 ग्राम) होता है। नर छिपकलियों में वजन (Wt), प्रोथ से गुदा तक की लंबाई (SVL), सिर की लंबाई (HL), सिर की चौड़ाई (HW), अग्रपाद की लंबाई (FLL), पश्चपाद की लंबाई (HLL), और चौथे पैर की अंगुली की लंबाई (L4thT) जैसे मापदंड मादाओं की तुलना में अधिक पाए गए। हालांकि, कुल शरीर की लंबाई (TBDL) और चौथे अंगुली की लंबाई (L4thF) में दोनों लिंगों के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया (तालिका 1)।

शरीर की आकृति और आकार में पाई जाने वाली लैंगिक द्विरूपता जैसे कि नरों का बड़ा सिर और लंबी टांगें, उन्हें नर-से-नर प्रतिस्पर्धा और मादा को आकर्षित करने में लाभ प्रदान करती हैं (Vitt and Caldwell, 2009)। यह लैंगिक द्विरूपता नर और मादा के बीच भिन्न विकासीय पैटर्न के कारण उत्पन्न होती है, जो नजदीकी कारणों जैसे हार्मोनल प्रभाव (John-Alder *et al.*, 2007) और अंतिम कारणों) जैसे लैंगिक चयन (Cox *et al.*, 2003) से प्रेरित होती है, साथ ही आकृति में यह भिन्नता अक्सर सभीमित विकास के परिणामस्वरूप होती है (Butler and Losos, 2002)। सह-संबंध मैट्रिक्स नरों और मादाओं दोनों में विभिन्न शारीरिक मापों जैसे वजन (Wt), प्रोथ से गुदा तक की लंबाई (SVL), सिर की लंबाई (HL), सिर की चौड़ाई (HW), अग्रपाद की लंबाई (FLL) और पश्चपाद की लंबाई (HLL) के बीच मजबूत सकारात्मक सहसंबंध को दर्शाती है (तालिका 2, तालिका 3)। यह इंगित करता है कि जब किसी एक माप में वृद्धि होती है, तो अन्य मापों में भी समान रूप से वृद्धि होती है, जो इन लक्षणों के बीच एक अंतर्निहित जैविक समन्वय का संकेत है। हालांकि, कुल शरीर की लंबाई (TBDL) के साथ सह-संबंध नरों में अपेक्षाकृत कमजोर और मादाओं में मध्यम स्तर का पाया गया, जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि TBDL का विकास अन्य मापों की तुलना में एक भिन्न विकासात्मक दिशा का अनुसरण करता है।

नरों में सुप्रालैबियल्स (SL) की संख्या 8 से 12 (10.25±0.12) के बीच पाई गई, जबकि मादाओं में यह सीमा (10.21±0.11) 9 से 12 के बीच रही। इन्फ्रालैबियल्स (IL) की संख्या नरों में 8 से 12 के बीच (10.12±0.95) और मादाओं में 8 से 12 (9.86±0.14) के बीच देखी गई।SL और IL शल्कों की यह विविधता अधिकांश *लौडाकिया* प्रजातियों में किए गए पूर्ववर्ती अध्ययनों से मेल खाती है (Baig *et al.*, 2012)। नरों में चौथी अंगुली पर सबडिजिटल पटलिकाएं (SDL4thF) 18 से 30 (25.12±0.33) के बीच और मादाओं में 21 से 29 (25.27±0.28) के बीच थी। इसी प्रकार, चौथे पैर की अंगुली पर सबडिजिटल पटलिकाएं (SDL4thT) नरों में 21 से 34 (29.16±0.34) और मादाओं में 24 से 34 (28.86±0.26) के बीच पाई गईं। SDL4thT की संख्या SDL4thF की तुलना में अधिक पाई गई, जो चौथी पैर की अंगुली की अपेक्षाकृत लंबाई के कारण है। यह प्रवृत्ति पहले भी लौडाकिया में दर्ज की गई है (Baig, 1992)। नरों में मेरुदंडीय कणों की लंबवत पंक्तियाँ (LVS) 12 से 16 (14.07±0.13) और मादाओं में 12 से 17 (14.46±0.18) के बीच थी (तालिका 4)। ये तीव्र रूप से कीलयुक्त LVS शल्क अधिक सतह क्षेत्र प्रदान करके

सूर्यप्रकाश के परावर्तन में सहायक होती हैं, जिससे अत्यधिक गर्मी में ताप-नियमन में मदद मिलती है, वहीं इनकी मोटाई जल हानि को सीमित करने में सहायक होती है (Bahuguna, 2008)। किसी भी गणनात्मक लक्षण में नर और मादा के बीच कोई सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया, जो *लौडाकिया मेलान्यूरा लिराटा* (ब्लैक अगामा) पर किए गए पूर्व अध्ययनों के निष्कर्षों के अनुरूप है (Heidari *et al.*, 2013) (तालिका 4)।

नरों की एक विशिष्ट शारीरिक विशेषता उनके उदर और पूंछ के पूर्व-पूंछीय क्षेत्र में स्थित कैलोस शल्कों की उपस्थिति से है, जिनके माप तालिका 5 में प्रस्तुत किए गए हैं। ये शल्क केवल नरों में पाए जाते हैं और मादाओं में पूर्णतः अनुपस्थित होते हैं। कैलोस शल्क अत्यधिक विकसित होलोक्राइन ग्रंथियों से युक्त होते हैं, जो प्रजनन काल के दौरान फिरोमोन का स्रवण करती हैं। ये फिरोमोन रासायनिक संचार और क्षेत्रीय चिन्हांकन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं (Dujsebayeva *et al.*, 2007)। ऐसे कैलोस शल्क की उपस्थिति अन्य अगैमिड प्रजातियों जैसे *अगामा अगामा* (कॉमन अगामा), *अगामा बिब्रोनी* (बिब्रॉन'स अगामा) और *अगामा इनर्मिस* में भी दर्ज की गई है (Harris, 1963; Gabe and Saint-Girons, 1965)। हालाँकि, मादाओं में क्षेत्रीय व्यवहार की प्रकृति और उसकी भूमिका को लेकर वर्तमान में जानकारी सीमित है (Cook, 2019)।

3.2 प्रजनन और व्यवहार

अवलोकन अवधि के दौरान कुल 35 घंटों में छिपकलियों के व्यवहार का अध्ययन किया गया। प्रजनन काल में कुल 19 छिपकलियाँ देखी गईं, जिनमें 13 नर और 6 मादा शामिल थीं, जबकि गैर-प्रजनन काल में 16 छिपकलियाँ (11 नर, 5 मादा) दर्ज की गईं। इन छिपकलियों की प्रमुख गतिविधियाँ हैं: धूप सेंकना, भोजन करना, डंड लगाना, और चलना-फिरना। चूंकि ये स्थलीय बाह्यतापी जीव हैं, इनका व्यवहार मुख्यतः पर्यावरणीय तापमान से प्रभावित होता है। तापमान नियंत्रित करने के लिए ये छिपकलियाँ धूप सेंकती हैं, सूक्ष्म-आवासों के बीच आवाजाही करती हैं, और अपनी गतिविधियों के समय व स्वरूप को तदनुसार समायोजित करती हैं। इन छिपकलियों की सक्रियता अवधि मार्च से नवंबर तक रहती है। सर्दियों के महीनों (मध्य दिसंबर से फरवरी तक) में ये सामूहिक रूप से शीतनिद्रा में चली जाती हैं और आमतौर पर चट्टानों की दरारों या बड़े पत्थरों के नीचे शरण लेती हैं। चार वर्षों के अध्ययन में पाया गया कि वयस्क छिपकलियाँ 34-80 दिन (55.25±11.37) प्रति वर्ष शीतनिद्रा में रहती हैं, जबकि किशोर 12-56 दिन (30.75±10.5) प्रति वर्ष शीतनिद्रा करते हैं। किशोर छिपकलियाँ शीतनिद्रा में सबसे अंत में प्रवेश करती हैं और सबसे पहले उससे बाहर आती हैं। हालांकि, विभिन्न आयु वर्गों के बीच शीतनिद्रा की अवधि में कोई सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया।

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा एक मौसमी प्रजनक है, जो प्रत्येक प्रजनन ऋतु में केवल एक अंड समूह उत्पन्न करती है, जैसा कि पहले (Waltner, 1991) द्वारा वर्णित किया गया है। यह प्रजनन रणनीति अन्य छिपकली कुलों जैसे

वैज्ञानिक आयोग CSTT

स्किन्किड्स, गेक्कोनिड्स, अगैमिड्स और वरानिड्स में देखी जाने वाली प्रवृत्तियों से मेल खाती है। इस प्रजाति का प्रजनन काल अप्रैल में प्रारंभ होता है और प्रणय और संतानोत्पत्ति की गतिविधियाँ जून तक चलती है। इस अवधि में मुख्य रूप से जलवायु परिस्थितियों पर निर्भर करती हैं (Panov & Zykova, 2016), क्योंकि तापमान अंडोत्सर्जन और शुक्राणु विकास दोनों प्रक्रियाओं के लिए महत्वपूर्ण होता है (Bradshaw *et al.*, 1991)। प्रजनन काल की यह समयावधि *कैलोटेस वर्सीकलर* (ओरिएंटल गार्डन लिज़र्ड) और *सिटाना पोंटिसेरियाना* (फैन-थ्रोटेड लिज़र्ड) जैसी अन्य अगैमिड प्रजातियों के प्रजनन काल से मेल खाती है, जो विशेष रूप से गर्म महीनों (मई से अगस्त) में प्रजनन करती हैं (Patankar *et al.*, 2013; Mukherjee & Parida, 2014)।

प्रजनन काल के दौरान नर छिपकलियाँ विशिष्ट प्रदर्शनात्मक व्यवहार दिखाती हैं, जिनमें सबसे प्रमुख है डंड लगाना। अगैमिड्स में ऐसे प्रदर्शन दो प्रकार के होते हैं: आत्म-प्रदर्शक– यह व्यवहार हल्की तीव्रता वाला होता है और इसमें न तो शरीर की मुद्रा में विशेष परिवर्तन होता है, न ही दिशा में। चुनौतीपूर्ण/आक्रामक– इसमें व्यवहार की तीव्रता अधिक होती है और यह लक्षित होता है, जिसमें आमने-सामने की टक्कर, पीछा करना, और शारीरिक संघर्ष शामिल होते हैं। ऐसे संघर्षों में गर्दन या पूँछ को काटने की कोशिश तक देखी गई है। इन आक्रामक व्यवहारों में नर छिपकलियाँ अक्सर सिर हिलाना और डंड लगाने जैसे प्रदर्शन करती हैं, जिसमें वे अपने अग्रपादों से शरीर को ज़मीन से ऊपर उठाकर झटकेदार गतियाँ करती हैं। इस दौरान नर अत्यधिक क्षेत्रीय आक्रामकता प्रदर्शित करते हैं और अन्य प्रतिद्वंद्वी नरों को भगाने या पराजित करने हेतु उनका पीछा करते हुए उनसे लड़ाई करते हैं। ये निष्कर्ष पूर्व में *स्केलोपोरस अंडुलैटस* (ईस्टर्न फेंस लिज़र्ड) पर किए गए पूर्व शोध से मेल खाते हैं, जहाँ यह देखा गया कि आक्रामकता और संघर्ष विशेष रूप से प्रजनन काल में ही चरम पर होते हैं (Smith और John-Alder, 1999)। गैर-प्रजनन काल में भी कुछ हद तक आक्रामक व्यवहार देखा गया है, विशेष रूप से जब नर छिपकलियाँ शिकार प्राप्त करने में असफल रहती हैं। ऐसी स्थिति में वे अन्य छिपकलियों का निरर्थक रूप से पीछा करती हैं, हालांकि किसी प्रकार की लड़ाई नहीं होती। *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* में इस प्रकार का व्यवहार पूर्व में जोशी (1991) ने भी रिपोर्ट किया है।

प्रजनन काल के दौरान मादाएँ घोंसला खोदते समय तथा अंडे देने के पश्चात विशेष रूप से सतर्क मुद्रा अपनाती हैं और डंड लगाने एवं मुँह खोलने जैसे व्यवहार प्रदर्शित करती हैं, जो संभवतः एक रक्षात्मक रणनीति के रूप में कार्य करते हैं। ऐसा ही व्यवहार Trivedi *et al.* (2013) द्वारा *सिटाना पोंटिसेरियाना* (फैन-थ्रोटेड लिज़र्ड) में भी दर्ज किया गया है, जो Smith और John-Alder (1999) के निष्कर्षों का समर्थन करता है, जिनके अनुसार प्रजनन काल में मादाएँ भी आक्रामक तथा रक्षात्मक व्यवहार प्रदर्शित करती हैं। *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* में इस प्रकार का अंडे-संरक्षण व्यवहार पूर्व में प्रयोगशाला स्थितियों में भी दर्ज किया जा चुका है (Schleich & Kästle, 2002)। इसके

शुद्धनी झीखी CST

अतिरिक्त, यह व्यवहार अन्य प्रजातियों जैसे *पैरालौडाकिया कॉकेसिया* (कॉकेशियन रॉक अगामा) (Mandel and Klochenhoff, 1972) और *सायक्लूरा राइलेई* (सैन साल्वाडोर रॉक इगुआना) (Cyril, 2001) में भी देखा गया है ।

प्रजनन और गैर-प्रजनन दोनों मौसमों में नर और मादा के बीच डंड लगाने वाले व्यवहार की आवृत्ति और अवधि में सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर पाया गया। दोनों ही मौसमों में यह व्यवहार नरों में अधिक प्रबल था, विशेषतः प्रजनन काल के दौरान। प्रजनन मौसम में डंड लगाने की आवृत्ति और अवधि दोनों अधिक पाई गई, विशेष रूप से नर छिपकलियों में: "अप" स्थिति में नर: 2.44±0.67 मिनट/घंटा (औसत 1.67±0.3 मिनट), "अप" स्थिति में मादा: 0.57±0.09 मिनट/घंटा (औसत 0.46±0.07 मिनट), "डाउन" स्थिति में नर: 1.76±0.47 मिनट/घंटा (औसत 1.27±0.23 मिनट), "डाउन" स्थिति में मादा: 0.45±0.12 मिनट/घंटा (औसत 0.36±0.11 मिनट)। गैर-प्रजनन मौसम में भी नर छिपकलियों ने मादाओं की तुलना में डंड लगाने की अधिक आवृत्ति और अवधि दिखाई: "अप" स्थिति (नर): 1.29 ± 0.29 मिनट/घंटा (औसत 1.16 ± 0.27 मिनट) "अप" स्थिति (मादा): 0.32 ± 0.13 मिनट/घंटा (औसत 0.30 ± 0.1 मिनट) "डाउन" स्थिति (नर): 0.96 ± 0.22 मिनट/घंटा (औसत 0.87 ± 0.22 मिनट), "डाउन" स्थिति (मादा): 0.21 ± 0.08 मिनट/घंटा (औसत 0.21 ± 0.07 मिनट) (तालिका 6)।

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा में अंडे देने की अवधि जुलाई से सितंबर तक विस्तारित रहती है। अंडे देने का व्यवहार बहुपर्यायी होता है, जिसमें निम्नलिखित चरण शामिल होते हैं: स्थान के लिए भटकना, संभावित स्थल का निरीक्षण करना, घोंसले के लिए गड्ढा खोदना, सतर्क मुद्रा में रहना, अंडों का उत्सर्जन, मिट्टी को दबाना, तथा क्षेत्र को तुरंत छोड़ देना। मादा छिपकलियाँ अग्रपाद का उपयोग करके गड्ढा खोदती हैं और आमतौर पर ऐसे स्थल चुनती हैं जो उनके भोजन या शरण स्थलों से कुछ दूरी पर स्थित होते हैं, गड्ढा खोदने के बाद वे लगभग 180° घूम जाती हैं ताकि उनकी अवस्कर गड्ढे के ठीक ऊपर आ जाए यह स्थिति "straddling" कहलाती है (चित्र 3(a))। इसी प्रकार का घोंसला खुदाई और अंडे देने का व्यवहार कुछ दक्षिण अफ्रीकी छिपकलियों (Fitzsimons, 1943) और कई ओरिएंटल अगैमिड प्रजातियों में भी दर्ज किया गया है जैसे कि *कैलोटेस लियोसिफैलस* (क्रेस्टलेस लिज़र्ड) (Amarasinghe and Karunarathna, 2008), *कैलोटेस कैलोटेस* (इंडियन गार्डन लिज़र्ड) (Gabadage *et al.*, 2008), *कैलोटेस वर्सीकलर* (ओरिएंटल गार्डन लिज़र्ड) (McCann, 1937), *कैलोटेस सीलोनेंसिस* (सीलोन ब्लडसकर) (Pradeep and Amarasinghe, 2009), *कैलोटेस लायोलिपिस* (श्रीलंका अगामा) (Karunarathna *et al.*, 2009), *कैलोटेस निग्रिलाब्रिस* (ब्लैक-चीक्स लिज़र्ड) (Karunarathna *et al.*, 2011), *कैलोटेस नेमोरिकोला* (निलगिरी फॉरेस्ट लिज़र्ड) (Balakrishna *et al.*, 2012), *सिटाना पोंटिसेरियाना* (फैन-थ्रोटेड लिज़र्ड) (Trivedi *et al.*, 2013), *सैमॉफिलस डॉर्सालिस* (पेनिनसुलर रॉक अगामा) (Balakrishna and Achari, 2014), *ओटोक्रिप्टिस*

विएगमानी (विगमैन'स फॉरेस्ट लिज़र्ड) (Lakkana *et al.*, 2018), *अगामा अगामा* (कॉमन अगामा) (Harris, 1964), and *अगामा एट्रिकोलिस* (ब्लैक-नेक्ड अगामा) (Mendes, 2006).

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा में अंडे देने की पूरी प्रक्रिया लगभग 16.57 से 31.78 मिनट तक चली, जिसमें औसत समय 22.95±0.6 मिनट दर्ज किया गया। मादाओं ने 3 से 19 अंडे (औसत 8.23±0.58 अंडे) दिए, और यह अवधि 6.57 से 21.78 मिनट (12.88±0.57 मिनट) के बीच रही। इस प्रक्रिया के दौरान मादाओं द्वारा सबसे अधिक देखे जाने वाले व्यवहारों में प्रोथ का प्रयोग करके अंडों को उचित ढंग से व्यवस्थित करना तथा मिट्टी को दबाना शामिल थे। अंडे देने के तुरंत बाद मादाओं ने उन्हें घोंसले में 3 से 33 बार (7.28±0.66 बार प्रति 22.95±0.6 मिनट) सावधानीपूर्वक व्यवस्थित किया। इस अवधि में अंडों की स्थिति समायोजित करने हेतु प्रोथ का प्रयोग 45 से 162 बार (88.34±4.57 बार) किया गया। इसके बाद, मादाओं ने प्रोथ से मिट्टी डालकर और दबाकर घोंसले को ढंकने का कार्य किया, जिसे उन्होंने 28 से 229 बार (औसतन 105.79±7.96 बार प्रति 22.95±0.6 मिनट) दोहराया। अंत में, घोंसले का गड्ढा बंद करने की प्रक्रिया 2 से 16 बार (8.64±0.47 बार) की गई (तालिका 7)। अंडों को ढकते समय मादा ने घोंसले पर कोई स्पष्ट निशान नहीं छोड़ा, जिससे उसका पता लगाना कठिन था। यह व्यवहार अंडों को संभावित शिकारियों से सुरक्षित रखने की एक प्रभावी रणनीति के रूप में कार्य करता है।

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा के अंडों और घोंसले से संबंधित मापदंड तालिका 8 में संक्षेप में प्रस्तुत किए गए हैं। इस प्रजाति के अंडे छोटे, अंडाकार, फीके सफेद रंग के होते हैं और इनका कवच मुलायम होता है (चित्र 3(b))। एक बार में दिए गए अंडों की संख्या 3 से 19 (8.23±0.58 अंडे) के बीच दर्ज की गई (n=47)। यह आंकड़ा पहले किए गए अध्ययनों के निष्कर्षों के अनुरूप है (Waltner, 1991; Bashir, 2017)। अंडों के फूटने की सफलता 50 से 100% (77.80±2.28%) के बीच रही। ऊष्मायन काल 25 से 52 दिनों (36.21±0.99 दिन) तक दर्ज किया गया (तालिका 8)। इसके अतिरिक्त घोंसले की औसत गहराई 3-15 सेमी (6.29±0.39) दर्ज की गई, जो *सिटाना पोंटिसेरियाना* (फैन-थ्रोटेड लिज़र्ड) के औसत घोंसले की गहराई से काफी मेल खाती है (Trivedi *et al.*, 2013)। प्रजनन ऋतु की शुरुआत में औसत वायुमंडलीय तापमान अधिक था, जो मानसून के आगमन के साथ धीरे-धीरे कम होता गया। मानसून के दौरान सापेक्षिक आर्द्रता और वर्षा में वृद्धि देखी जाती है, जिससे मिट्टी नम बनी रहती है। यह नमी भ्रूण के विकास के लिए अत्यंत आवश्यक होती है, क्योंकि मिट्टी इन अंडों के लिए एक प्रभावी ऊष्मायन माध्यम के रूप में कार्य करती है (तालिका 9)। सबसे अधिक सापेक्षिक आर्द्रता अगस्त से नवंबर के बीच दर्ज की गई जब मादाएं अंडे दे रही थीं और स्फुटन अंडों से बाहर निकल रहे थे। वर्षा के कारण कीटों और वनस्पति की उपलब्धता में वृद्धि होती है, जिससे पर्यावरण में खाद्य संसाधनों की प्रचुरता बढ़ती है। यह संसाधन वृद्धि प्रजनन गतिविधियों के लिए आवश्यक ऊर्जा की पूर्ति में सहायक होती है (Patterson, 1999)। इस प्रकार मानसून के दौरान जलवायु की इष्टतम

परिस्थितियाँ, जैसे उपयुक्त तापमान, पर्याप्त नमी और खाद्य की भरपूरता मिलकर सबसे अनुकूल प्रजनन काल को प्रोत्साहित करती है (Cody, 1966; Fitch, 1985)।

4. निष्कर्ष

लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा जो उत्तर-पश्चिमी हिमालय के विशिष्ट पारिस्थितिक तंत्रों में पाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण अगैमिड प्रजाति है, जो अपने अद्वितीय व्यावहारिक और जैविक गुणों के कारण वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है। गढ़वाल क्षेत्र में *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* पर आधारित यह अध्ययन दर्शाता है कि यह प्रजाति स्पष्ट लैंगिक द्विरूपता, विशिष्ट प्रजनन व्यवहार, तथा पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति उच्च अनुकूलन क्षमता प्रदर्शित करती है। प्रजनन काल में नरों द्वारा प्रदर्शित प्रदर्शनात्मक व्यवहार जैसे डंड लगाना मादाओं को आकर्षित करने और क्षेत्रीय प्रभुत्व स्थापित करने की रणनीति के रूप में कार्य करते हैं। वहीं मादाओं का अंडों की सावधानीपूर्वक व्यवस्था, उन्हें ढकने की क्रियाएँ, और घोंसले की रक्षा हेतु रक्षात्मक डंड लगाने इस प्रजाति की उन्नत मातृ देखभाल प्रवृत्तियों को दर्शाती हैं। मानसून का आगमन प्रजनन गतिविधियों और अंडों के विकास के लिए एक अनुकूल वातावरण प्रदान करता है। यह प्रजाति हिमालयी पारिस्थितिक जाल में कीट नियंत्रण और शिकारियों के लिए भोजन स्रोत के रूप में एक महत्वपूर्ण कड़ी है। वर्तमान अध्ययन न केवल *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* की जीवविज्ञान संबंधी जानकारी में महत्वपूर्ण योगदान देता है, बल्कि क्षेत्रीय जैव विविधता संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन के लिए नीति-निर्धारण में भी उपयोगी हो सकता है। इसके आधार पर भविष्य में दीर्घकालिक जैवविविधता अध्ययन, संरक्षण आधारित शोध कार्य, जलवायु परिवर्तन,मानवीय हस्तक्षेप और पर्यावास विखंडन के संभावित प्रभावों की भी वैज्ञानिक जांच की जा सकती है।

प्राणीशास्त्र विभाग, एचएनबी गढ़वाल विश्वविद्यालय,
एसआरटी परिसर, बदशाहीथौल, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड, भारत
*पत्राचार लेखक ईमेल: smitadangwal.99@gmail.com

कृतज्ञता

लेखकगण प्रयोगशाला सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए प्राणीशास्त्र विभागाध्यक्ष के प्रति हृदय से आभार प्रकट करते हैं। हम उत्तराखंड वन विभाग, देहरादून का भी धन्यवाद करते हैं, जिन्होंने इस अध्ययन हेतु अनुमति प्रदान की।

अनुदान

प्रथम लेखिका स्मिता डंगवाल भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रदान की गई यूजीसी गैर-नेट फैलोशिप (UGC Non-NET Fellowship) के रूप में प्राप्त वित्तीय सहायता के लिए हम हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

लेखकीय योगदान

अध्ययन की रूपरेखा और संकल्पना स्मिता डंगवाल एवं दिनेश कुमार शर्मा द्वारा संयुक्त रूप से तैयार की गई। क्षेत्रीय कार्य, आंकड़ों का विश्लेषण और मूल प्रारूप का लेखन स्मिता डंगवाल द्वारा किया गया। दिनेश कुमार शर्मा ने पर्यवेक्षण, लेखन-समीक्षा एवं संपादन में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

तालिका 1: *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* के आकारमिति लक्षण

आकारमिति **लक्षण (ग्राम और मिमी)**	**नर (n=85)**		**मादा (n=56)**		**p मान**
	मान सीमा	**औसत±SE**	**मान सीमा**	**औसत±SE**	
वजन (Wt)	22-91	54.89±2.05	23-78	47.68±1.95	.012
प्रोथ से गुदा तक की लंबाई (SVL)	74.39-144.92	114.28±1.58	82.76-130.15	109.19±1.83	.040
सिर की लंबाई (HL)	19.82-44.47	33.47±0.54	23.26-39.24	31.14±0.52	.004
सिर की चौड़ाई (HW)	17.60-33.15	25.53±0.46	18.16-26.31	22.15±0.30	.000
अग्रपाद की लंबाई (FLL)	38.95-67.07	53.18±0.74	40.1-57.32	49.60±0.54	.000
पश्चपाद की लंबाई (HLL)	62.07-102.51	81.93±1.06	62.92-86.85	75.15±0.91	.000
चौथी अंगुली की लंबाई ($L4^{th}F$)	10.69-19.85	14.30±0.23	12.35-21.75	14.57±0.28	.450
चौथे पैर की अंगुली की लंबाई ($L4^{th}T$)	14.49-25.68	19.41±0.29	15.07-21.10	18.27±0.31	.010
कुल शरीर की लंबाई (TBDL)	167.67-384.96	297.28±4.19	167.93-349.92	285.33±5.14	.074

तालिका 2: नर के आकारमिति लक्षणों का सहसंबंध मैट्रिक्स

M	**Wt**	**SVL**	**HL**	**HW**	**FLL**	**HLL**	**TBDL**
Wt	1.00						
SVL	0.97	1.00					
HL	0.94	0.95	1.00				
HW	0.95	0.92	0.94	1.00			
FLL	0.82	0.84	0.85	0.83	1.00		
HLL	0.73	0.76	0.78	0.75	0.91	1.00	
TBDL	0.45	0.48	0.47	0.44	0.52	0.59	1.00

तालिका 3: मादा के आकारमिति लक्षणों का सहसंबंध मैट्रिक्स

F	Wt	SVL	HL	HW	FLL	HLL	TBDL
Wt	1.00						
SVL	0.87	1.00					
HL	0.87	0.87	1.00				
HW	0.89	0.77	0.81	1.00			
FLL	0.72	0.73	0.77	0.81	1.00		
HLL	0.67	0.56	0.65	0.78	0.81	1.00	
TBDL	0.74	0.65	0.70	0.72	0.78	0.74	1.00

तालिका 4: *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* के गणनात्मक लक्षण

गणनात्मक लक्षण (No.)	**नर (n=85)**		**मादा (n=56)**		**p मान**
	मान सीमा	**औसत±SE**	**मान सीमा**	**औसत±SE**	
सुप्रालैबियल्स (SL)	8-12	10.25±0.12	9-12	10.21±0.11	.829
इन्फ्रालैबियल्स (IL)	8-12	10.12±0.95	8-12	9.86±0.14	.124
चौथी अंगुली पर स्थित सब डिजिटल पटलिकाएं (SDLF4thF)	18-30	25.12±0.33	21-29	25.27±0.28	.768
पैर की चौथी अंगुली पर स्थित सब डिजिटल पटलिकाएं (SDLF4thT)	21-34	29.16±0.34	24-34	28.86±0.26	.119
मेरुदंडीय कणों की लंबवत पंक्तियाँ (LVS)	12-16	14.07±0.13	12-17	14.46±0.18	.081

तालिका 5: नर के कैलोस शल्क

कैलोस शल्क (संख्या/*मिमी*)	**नर (n=85)**	
	मान सीमा	**औसत±SE**
उदर कैलोस शल्कों की पंक्तियाँ (AS)	6-19	12.67±0.32
गुदपूर्वी कैलोस शल्कों की पंक्तियाँ (PAS)	4-8	5.78±0.11
उदर कैलोस शल्कों की लंबाई (LAS)	6.43-20.17	14.71±0.42
उदर कैलोस शल्कों की चौड़ाई (WAS)	4.61-15.72	10.87±0.33
गुदपूर्वी कैलोस शल्कों की लंबाई (LPAS)	8.35-15.92	12.59±0.22
गुदपूर्वी कैलोस शल्कों की चौड़ाई (WPAS)	2.9-10.34	5.43±0.15

शब्दावली आयोग CSTT

तालिका 6: प्रजनन और अप्रजनन ऋतु में *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* में पुश-अप्स व्यवहार की तुलना

पुश-अप्स (प्रजनन ऋतु)	नर (n=13)		मादा (n=6)		p मान
	औसत±SE		औसत±SE		
	आवृत्ति	समय (मिनट)	आवृत्ति	समय (मिनट)	
अप	2.44±0.67	1.67±0.30	0.57±0.09	0.46±0.07	.016
डाउन	1.76±0.47	1.27±0.23	0.45±0.12	0.36±0.11	.017
पुश-अप्स (अप्रजनन ऋतु)	**नर (n=11)**		**मादा (n=5)**		**p मान**
	औसत±SE		**औसत±SE**		
	आवृत्ति	समय (मिनट)	आवृत्ति	समय (मिनट)	
अप	1.29±0.29	1.16±0.27	0.32±0.13	0.30±0.10	.008
डाउन	0.96±0.22	0.87±0.22	0.21±0.08	0.21±0.07	.008

तालिका 7: *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* मादा की अंडे देने की प्रक्रिया में देखे गए व्यवहार

व्यवहार (मिनट, संख्या)	(n=47)	
	मान सीमा	**औसत±SE**
संपूर्ण अंडे देने की प्रक्रिया में लगा कुल समय	16.57-31.78	22.95±0.6
अंडे देने का समय	6.57-21.78	12.88±0.57
दिए गए अंडों की संख्या	3-19	8.23±0.58
अंडों को समायोजित करना	3-33	7.28±0.66
प्रोथ का प्रयोग करना	45-162	88.34±4.57
मिट्टी को दबाना	28-229	105.79±7.96
गड्ढा भरना (मिट्टी एकत्र करना)	2-16	8.64±0.47

शब्दावली आयोग CSTT

तालिका 8: *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* के अंडों और घोंसले के मापदंड

लक्षण (n=47)	मान सीमा	औसत±SE
अंडे की संख्या	3-19	8.23±0.58
अंडे की लंबाई (मिमी)	18.78-26.99	22.11±0.27
अंडे की चौड़ाई (मिमी)	11.28-18.76	14.76±0.27
अंडे से बच्चे का निकलना (%)	50-100	77.80±2.28
अंडे का विकसित होने का समय (दिन)	25-52	36.21±0.99
घोंसले की लंबाई ((सेमी)	4-10	6.97±0.25
घोंसले की चौड़ाई (सेमी)	3-10	5.67±0.25
घोंसले की गहराई (सेमी)	3-15	6.29±0.39

तालिका 9: *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* की प्रजनन ऋतु के विभिन्न चरणों के दौरान तापमान (°C), सापेक्ष आर्द्रता (%) और वर्षा (मिमी)

प्रजनन की विभिन्न गतिविधिया	तापमान (°C)	सापेक्ष आर्द्रता (%)	वर्षा (मिमी)
प्रणय और संसेचन	26.14±3.43	42.5±5.37	63.47±9.89
अंडे देना	25.13±2.43	80.44±2.02	274.96±5.43
बच्चों का बाहर निकलना	21.18±2.37	70.10±1.06	120.37±4.65
कुल प्रजनन अवधि	23.73±2.81	60.30±3.00	131.58±5.70

शब्दावली आयोग CSTT

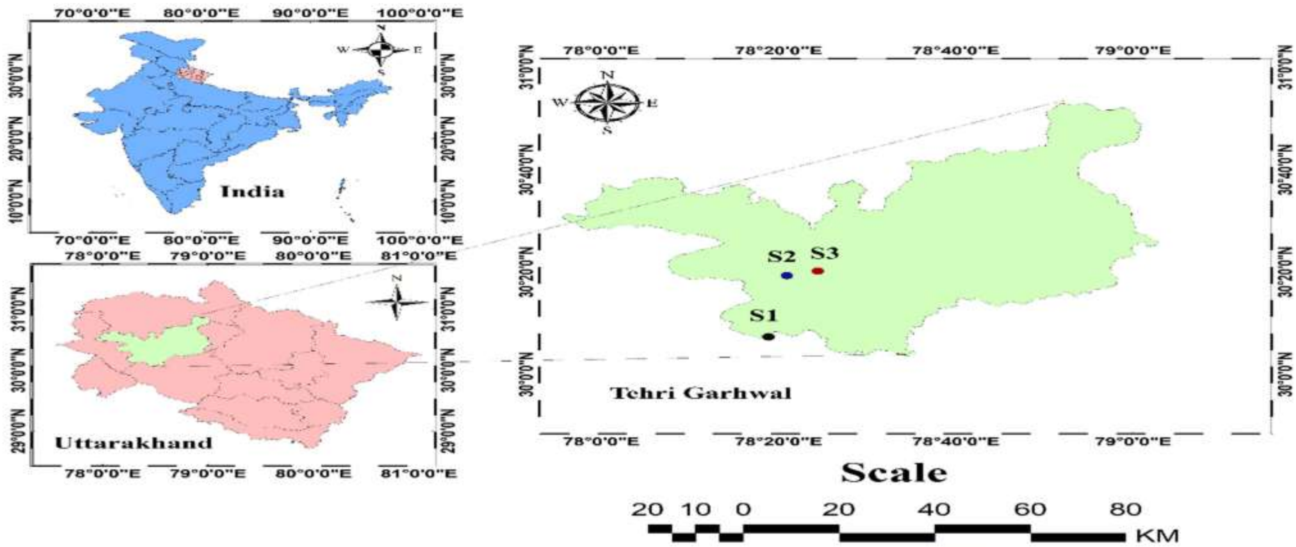

चित्र 1 अध्ययन क्षेत्र का मानचित्र (Dangwal, 2023)

चित्र 2 *लौडाकिया ट्यूबरकुलाटा* (a) नर, (b) मादा

चित्र 3 (a) मादा, अंडे देती हुये (b) मिट्टी में अंडों का समूह

संदर्भ

1. Altmann, J. (1974). Observational study of behavior: sampling methods. *Behaviour*, *49* (3–4), 227–266.
2. Amarasinghe, A. T., & Karunarathna, D. M. S. S. (2008). Observations on the ovipositional behavior of the Crest–less lizard *Calotes liocephalus* (Reptilia: Agamidae) in the Knuckles Forest Region of Sri Lanka. *Asiatic Herpetological Research*, *11*, 13–16.
3. Ananjeva, N. B., Guo, X., & Wang, Y. (2011). Taxonomic diversity of agamid lizards (Reptilia, Sauria, Acrodonta, Agamidae) from China: a comparative analysis. *Asian Herpetological Research, 2*(3), 117–128.
4. Bahuguna, A. (2008). Altitudinal variations in morphological characters of *Laudakia tuberculata* Hardwicke and Gray, 1827 from Western Himalayas (Uttarakhand), India. *Russian Journal of Herpetology*, *15*(3), 207–211.
5. Baig, K. J. (1992). Systematic Studies of the Stellio–Group of Agama (Sauria: Agamidae) Doctoral dissertation, Quaid–i–Azam University Islamabad, Pakistan.
6. Baig, K. J., Wagner, P., Ananjeva, N. B., & Boehme, W. (2012). A morphology-based taxonomic revision of *Laudakia* Gray, 1845 (Squamata: Agamidae). *Vertebrate Zoology, 62*(2), 213–260.
7. Balakrishna, S., Achary, N., & Kumar, A. (2012). Observations on the ovipositional behaviour of the Nilgiri forest lizard *Calotes nemoricola* (Jerdon, 1853). (Squamata: Agamidae) in Hulikal, Karnataka, India. *Herpetology Notes*, *7,* 441–443.
8. Balakrishna, S., & Achari, N. (2014). Preliminary observations on the ovipositional behavior of the Peninsular Rock Agama *Psammophilus dorsalis* (Gray, 1831) from Savandurga forest area of Southwestern Karnataka, India. *Herpetology Notes*, 7*,* 319–322.
9. Bashir, M., Bhat, B. A., Khanday, A. L., Fazili, M. F., & Ahmad, F. (2017). Observations on some breeding parameters of Kashmir rock agama (*Laudakia tuberculata* Hardwicke & Gray, 1827) from Teetwal Kupwara (Jammu & Kashmir), India. *International Journal of Zoology Studies*, *2*(6), 75–77.

शब्दावली आयोग CSTT

10. Bradshaw, S. D., Saint, H., & Bradshaw, F. J. (1991). Patterns of breeding in two species of agamid lizards in the arid subtropical Pilbara region of Western Australia. *General and comparative endocrinology, 82*(3), 407–424

11. Butler, M. A., & Losos, J. B. (2002). Multivariate sexual dimorphism, sexual selection, and adaptation in Greater Antillean Anolis lizards. *Ecological Monographs*, *72*(4), 541–559.

12. Cody, M. L. (1966). A general theory of clutch size. Evolution, 20, 174–184.

13. Cook, E. G. (2019). Characterizing Territoriality and the Mechanisms That Mediate It in female *Anolis gundlachi* Lizards (Doctoral dissertation, University of Missouri–Columbia).

14. Cox, R. M., Skelly, S. L., & John-Alder, H. B. (2003). A comparative test of adaptive hypotheses for sexual size dimorphism in lizards. *Evolution*, *57*(7), 1653–1669.

15. Cyril, S. (2001). Behavioral ecology of the endangered San Salvador rock iguana (*Cyclura rileyi rileyi*) in the Bahamas. Unpublished MS Thesis, Loma Linda University, Loma Linda, California, USA.

16. Dangwal, S. (2023). Altitudinal Distribution, Habitat Structure and Breeding Ecology of Kashmir Rock Agama (*Laudakia tuberculata*) Gray, 1827 in Subtropical Region of Garhwal. [Doctoral dissertation, Hemwati Nandan Bahuguna Garhwal University]. Shodhganga. http://hdl.handle.net/10603/619864.

17. Dangwal, S., Sharma, D. K., & Chauhan, J. S. (2022). Distribution, Morphometric and Meristic Study of The Agamid Lizard Laudakia tuberculata Gray, 1827 in The North-Western Himalaya. Journal of Mountain Research, 17(2), 243–256.

18. Das, A., Huang S., & Shi. L. (2021). *Laudakia tuberculata.* The IUCN Red List of Threatened Species 2021: e.T47751975A47751989.

19. Dodsworth, P. T. L. (1913). On the habits of the rock lizard (*Agama tuberculata*). *Journal of Bombay Natural History Society, 22*(2), 404–405.

20. Duda, P. L., & Kaul, O. (1976). Subtunic Leydig cells in the testis of *Agama tuberculata* (Gray). *Brit. Jour. Herpetology*, *5*(6), 539–541.

21. Dujsebayeva, T., Ananjeva, N., & Miroschnichenko, L. (2007). Studies on specialized epidermal derivatives in iguanian lizards. I. Gross morphology, topography and histology of callose scales in the Asian Rock Agama, *Laudakia himalayana* (Steindachner, 1869) (Squamata: Agamidae). *Amphibia–Reptilia*, *28*(4), 537–546.
22. Fitch, H. S. (1985). Variation in clutch and litter size in New World reptiles. *Univ Kans Mus Nat Hist Misc Publ*, *76,* 1–76.
23. FitzSimons, V. F. (1943). The lizards of South Africa: Systematic account of the lizards (Sauria) of Southern Africa. *Transvaal Museum Memoirs*, *1*(1), 1–6.
24. Gabadage, D. E., Amarasinghe, A. T., & Bahir, M. M. (2008). Notes on the ovipositional behavior of *Calotes calotes* (linnaeus, 1758) (reptilia: agamidae) in Sri Lanka. *Herpetotropicos: Tropical Amphibians & Reptiles*, *5*(1), 21–25.
25. Gabe, M. & Saint-Girons, H. (1965). Contribution à la morphologie comparée du cloaque et des glandes épidermoides de la région cloacale chez le lépidosauriens. Memoires du Museum National d'Histoire Naturelle," *Nouvelle Serie. Serie A. Zoologie*, *33,* 149–292.
26. Harris, V. A. (1963). The anatomy of the Rainbow Lizard: *Agama agama* (L): with a glossary of anatomical terms. London: Hutchinson. (pp. 104). Hutchinson Tropical Monographs.
27. Harris, V. A. (1964). The Life of the Rainbow Lizard. London: (pp. 174). Hutchinson Tropical Monographs.
28. John-Alder, H. B., Cox, R. M., & Taylor, E. N. (2007). Proximate developmental mediators of sexual dimorphism in size: case studies from squamate reptiles. *Integrative and Comparative Biology*, *47*(2), 258–271.
29. Joshi, V. D. (1991). Study of some eco-biological aspects in the Himalayan Lizard *Agama tuberculatus* - Gray, in field. *Journal of Advanced Zoology, 12*(1), 26–33.
30. Karunarathna, D. M. S. S., Bandara, I. N., & Chanaka, A. W. A. (2009). The ovipositional behavior and captive eggs hatching notes of the endemic whistling lizard *Calotes liolepis* Boulenger, 1885 (Reptilia: Agamidae) in the Knuckles Forest region of Sri Lanka. *Acta Herpetol*, *4*(1), 47–56.

शब्दावली आयोग CSTT

31. Karunarathna, D. M. S. S., Pradeep, W. A. A. D. G., Peabotuwage, P. I. K., & De Silva, M. C. (2011). First report on the ovipositional behaviour of *Calotes nigrilabris* Peters, 1860 (Reptilia: Sauria: Agamidae) from the Central massif of Sri Lanka. *Russian Journal of Herpetology*, *18*(2), 111–118.

32. Lakkana, P. H. T., Thilakarathne, K. G. D. D., Sampath, J. K. H., & Meegaskumbura, M. (2018). Thermal Ecology of an Endemic Sri Lankan Kangaroo Lizard (*Otocryptis wiegmanni*) under Wild and Captive Conditions.

33. Mandel, G., & Klockenhoff, H. (1972). Beobachtungen an Kaukasus–Agamen *Agama c. caucasia* (Eichwald, 1831) in Afghanistan. *Aquaterra*, *9*, 3–7.

34. McCann, C. (1937). Notes on *Calotes versicolor* (Daudin) Jerdon. *Journal of the Bombay Natural History Society*, *39*, 843–848.

35. Mendes, A. J. (2006). Some aspects of nest digging and egg laying behaviour in the arboreal agamid lizard, Agama atricollis Smith 1849 (*Acanthocercus atricollis* Smith 1849). *Herpetological bulletin*, *98,* 12–22.

36. Mukherjee, R. K., & Parida, P. (2014). Behavioral ecology, breeding period, sexual dimorphism and ovipositional behavior of *Psammophilus blanfordanus* (Family: Agamidae): case study. *Indian Journal of Applied Research*, *4*(1), 28–32.

37. Panov, E. N., & Zykova, L. Y. (2016). *Rock agamas of Eurasia*. (1st ed.). Moscow, Russia, KMK Scientific Press.

38. Patankar, P., Desai, I., Trivedi, J. N., & Balakrishnan, S. (2013). Ethogram of courtship and mating behaviour of *Sitana cf. ponticeriana* (Reptilia: Draconinae: Agamidae) in India. *Taprobanica*, *5*(1), 44–49.

39. Patterson, D. T., Westbrook, J. K., Joyce, R. J. V., Lingren, P. D., & Rogasik, J. (1999). Weeds, insects, and diseases. *Climatic change*, *43*(4), 711–727.

40. Pradeep, W. G., & Amarasinghe, A. T. (2009). Ovipositional behavior of *Calotes ceylonensis* Müller, 1887 (Reptilia: Agamidae) observed in the Central province of Sri Lanka. *Taprobanica*, *1*(1), 24–27.

शब्दावली आयोग CSTT

41. Raina, M. K., & Duda, P. L. (1967). A Pulmo–Portal Vein, An Abnormality in *Agama tuberculata* (Gray). *Herpetologica, 23(*1), 64–64.

42. Schleich, H. H., & Kästle, W. (2002). *Amphibians and reptiles of Nepal. Biology, Systematics, Field Guide.* (pp. 1200–1201). Koenigstein: Koeltz Scientific Books.

43. Smith, L. C., & John-Alder, H. B. (1999). Seasonal specificity of hormonal, behavioral, and coloration responses to within-and between-sex encounters in male lizards (*Sceloporus undulatus*). *Hormones and Behavior*, *36*(1), 39–52.

44. Smith, M. A. (1935). *The Fauna of British India, Including Ceylon and Burma. Reptilia and Amphibia.* Vol. II. Sauria. (pp. 440). Taylor and Francis, London.

45. SPSS Statistics 22.0. (2022). https://www.ibm.com/support/pages/spss-statistics-220 available-download (accessed May 10, 2022).

46. Trivedi, J., Bayani, A. S., Pratyush, P., & Suresh, B. (2013). Study of Egg–Laying Behaviour of Fan–Throated Lizard, *Sitana Ponticeriana* (Cuvier, 1829) from Shrubland of Vadodara City, Gujarat, India. *International Research Journal of Biological Sciences*, *2,* 74–77.

47. Vitt, L. J., & Caldwell, J. P. (2009). *Herpetology: an introductory biology of amphibians and reptiles*. Academic press. London, UK.

48. Waltner, R. C. (1991). Altitudinal Ecology of *Agama tuberculata* Gray in the Western Himalayas.

CSTT

12. हृद् वाहिका रोग के प्रमुख कारक एवं त्वरक के रूप में इंसुलिन प्रतिरोध संलक्षण: एक समीक्षात्मक पुनरावलोकन

[1]डॉ सुभाष भिमराव दोंदे

सार: हृद्वाहिका रोग (cardiovascular disease) प्ररुप 2 मधुमेह (type - 2 diabetes) की वृहद रक्तवाहिनियों की जटिलताओं की देन है, इसलिए हृदय रोग को "गेर-निदानी मधुमेह" (undiagnosed diabetes) भी कहते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने चयापचयी संलक्षण (metabolic syndrome) को जिस तरह से परिभाषित किया है, उसमें ना ही कुल कोलेस्टेरॉल और ना ही निम्न घनत्व लिपोप्रोटीन (एलडीएल) कोलेस्टेरॉल का जिक्र है, परंतु दुनिया भर में इन दोनों कोलेस्टेरॉल के प्रति एक डर ज्यों का त्यों बना हुआ है, जिसके कारण दशकों से अतिशर्करारक्तता (hyperglycaemia), अतिइंसुलिनरक्तता (hyperinsulinemia) और इंसुलिन प्रतिरोध (insulin resistance) की ओर किसी का ध्यान आकर्षित नहीं होता, और ना इसके विपरीत कोई चेतना जागृत हुई है। दरअसल इस जानलेवा बीमारी के मुख्य वाहक और त्वरक दोनों ही हैं, अर्थात सीरम में वसीय ट्रायग्लिसेराइड्स (fatty triglyceride) का बढ़ जाना, और हृदय-हितैषी कोलेस्टेरॉल या उच्च घनत्व लिपोप्रोटीन (एचडीएल) का घट जाना अथवा उनके परस्पर अनुपात का बढ़ जाना इत्यादि स्वयंसिद्ध हानिकारक इंसुलिन प्रतिरोध से जुड़े हुए हैं। अतिशर्करा रक्तता एवं अतिइंसुलिन रक्तता इन दोनों से निर्मित एक दुष्चक्र इंसुलिन प्रतिरोध को दर्शाता है। यह शरीर के अंदर एथेरोमैटिक डिसलिपिडेमिया (atheromatic dyslipidaemia), अल्कोहल-रहित वसीय यकृत (non-alcoholic fatty liver), सूजन या शोथ (inflammation), ऑक्सीकर तनाव (oxidative stress), सूत्रिविभाजक दुष्क्रिया (mitotic dysfunction) आदि व्यपजनीय प्रक्रियाओं (degenerative processes) को बल देता है। हृदय तथा हृद्वाहिका रोग से मुक्ति के लिए कुल कोलेस्टेरॉल या एलडीएल कोलेस्टेरॉल के अलावा पूरा ध्यान और प्रयास अतिशर्करारक्तता, अतिइंसुलिनरक्तता और इंसुलिन प्रतिरोध से बचने पर होना चाहिए। चयापचयजन्य विकार (metabolic disorders) में ग्लूकोज और फ्रक्टोज़, मोनोसैकेराइड्स ,जिस पॉलीसैकेराइड्स से बनते हैं, उस मंड (starch) के अति सेवन में अंतर्निहित है। इंसुलिन संवेदनशीलता की पुनःस्थापना से ही हृदयरोग से मुक्ति की कुंजी है। अंततः प्ररुप-2 मधुमेह, एक संवहनी (vascular) रोग है, और हृद्वाहिका रोग (cardiovascular disease) उसी निदानी या गैर निदानी प्ररुप 2 मधुमेह की ही जानलेवा वृहद रक्तवाहिनी जटिलता है।

मुख्य शब्द: हृद्वाहिका रोग, प्ररुप-2 मधुमेह, वृहद रक्तवाहिनी जटिलता, अतिशर्करारक्तता अतिइंसुलिनरक्तता, इंसुलिन प्रतिरोध, एथेरोमैटिक डिसलिपिडेमिया, अल्कोहल-रहित,वसीय यकृत, शोथ, ऑक्सीकर तनाव, सूत्रिविभाजक दुष्क्रिया।

1. प्रस्तावना

अधिकांश प्ररुप 2 मधुमेह से पीड़ित एवं पूर्व मधुमेह रोगी हृद्‌वाहिका रोग से मरते हैं, और अक्सर किसी औसत व्यक्ति की तुलना में बहुत कम उम्र में मरते हैं। हृदय रोग को मधुमेह की वृहद रक्तवाहिनियों की जटिलताओं से संबंधित एक शक्तिशाली त्वरक के रूप में स्वीकार किया जाता कोलेस्टेरॉल है, जो किसी भी अन्य संचालक या त्वरक या त्वरक से अधिक महत्वपूर्ण है। परंतु आज भी विश्व में, और खासकर भारत में सिर्फ को ही हृदय रोग से मृत्यु का मुख्य जोखिमकारक मान लिया जाता है, जो अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार, हृद्‌वाहिका रोग वैश्विक स्तर पर मृत्यु का प्रमुख कारण है, जिससे हर साल अनुमानत: 17.9 करोड़ लोगों की जान चली जाती है। संगठन ने इसके व्यावहारिक जोखिम कारकों में अस्वास्थ्यकर आहार, शारीरिक निष्क्रियता, तंबाकू से जुड़े धूम्रपान और शराब के हानिकारक सेवन को महत्वपूर्ण माना है। इसके अलावा व्यक्तियों में व्यवहारगत जोखिम कारकों में बढ़ा हुआ रक्तचाप, बढी हुई रक्त शर्करा, बढ़ा हुआ रक्त वसा अनुपात, और मोटापे के रूप में प्रभाव दिखाई देता है। विशेष बात यह है, कि विश्व स्वास्थ्य संगठन ने हृद्‌वाहिका रोग के जोखिम कारकों की सूची में कुल कोलेस्टेरॉल (total cholesterol) या एलडीएल (low density cholesterol or bad cholesterol) कोलेस्टेरॉल का कहीं भी उल्लेख नहीं किया है। परंतु इन दोनों कोलेस्टेरॉल को लेकर एक डर जनमानस में ज्यों का त्यों बना हुआ है, जिसके कारण दशकों से अतिशर्करारक्तता, अतिइंसुलिनरक्तता और इंसुलिन प्रतिरोध को खुली छूट मिली हुई है, जो इस जानलेवा बीमारी के मुख्य कारक और त्वरक भी हैं।

आधुनिक अनुसंधान रक्त में ट्राइग्लिसराइड्स वसा और खराब कोलेस्टेरॉल या एचडीएल (LDL) का बढ़ जाना और हृदय-हितैषी कोलेस्टेरॉल (HDL) का घट जाना अथवा उनके परस्पर अनुपात का बढ़ जाना को एक स्वयंसिद्ध जोखिम कारकों के रूप में इंसुलिन प्रतिरोध से जुड़े हुए हृद्‌वाहिका रोग के एक पूर्व सूचक के रूप में मानता है। परंतु अक्सर रोगी, चिकित्साकर्मी और आम जनता इसे पूरी तरह से कुल कोलेस्टेरॉल अथवा अहितकारक कोलेस्टेरॉल के रूप में एलड़ीएल कोलेस्टेरॉल की गिरफ्त में ही देखती है। इस गहरी जड़ों वाली अस्वास्थ्यकर धारणाओं की पकड़ से आम जनता को मुक्त कराना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है, क्योंकि हृद्‌वाहिका रोग से मुक्ति तभी संभव है, जब जनता में जागरुकता बढ़ेगी और अज्ञान दूर होगा, और इसके समाधान हेतु आधुनिक विज्ञान के माध्यम से जनमानस के मस्तिष्क में कोलेस्टेरॉल की जगह इसके असली कारक एवं त्वरक होंगे।

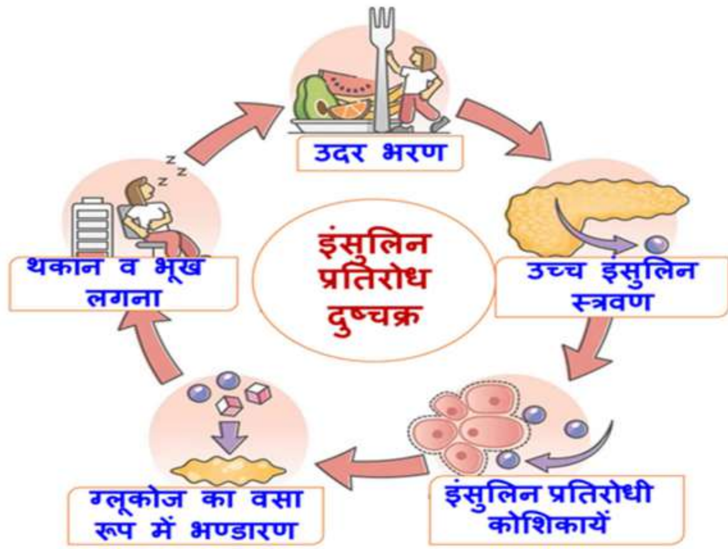

हृद्‌वाहिका रोग को ठीक से संबोधित करने के लिए हमें शोथ (inflammation) के आधार पर ही आहार संबंधी मूल कारणों की व्याख्या करने की आवश्यकता है, जो लोगों को हृदयरोगी बना रही है। हमें रोगियों को बताना होगा, कि इंसुलिन प्रतिरोध संलक्षण (insulin resistance syndrome) से ही इस जानलेवा बीमारी के तार जुड़े हैं, जो मुख्य रूप से आहार और खानपान की आदतों की ही देन है। उन्हें यह विश्वास दिलाना होगा, कि वास्तविक समाधान पोषण एवं खानपान की आदतों से सबंधित है, जिन्हें लागू करना उनके लिए व्यावहारिक रूप से संभव है। इस पृष्ठभूमि में प्रस्तुत यह समीक्षात्मक पुनरावलोकन इंसुलिन प्रतिरोध संलक्षण और हृद्‌वाहिका रोग के परस्पर संबंधों को आधुनिक विज्ञान से मिली पुख्ता जानकारी के आधार पर उजागर करने की एक पहल और कोशिश करता है।

2. रोग कार्यिकी में पथ-प्रदर्शक अनुसंधान (Pioneering Research in Disease Physiology):

उपलब्ध इतिहास के माध्यम से देखें तो स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के अन्तःस्राव विज्ञानी (endocrinologist)
डॉ. जेराल्ड रीवेन ने अपने बैंटिंग व्याख्यान (1988) में दुनिया को समझाया, कि हृदय रोग वास्तव में चयापचयी दुष्क्रिया के कारण होता है। रीवेन ने हृदय रोग, वसा और कोलेस्टेरॉल की प्रचलित कड़ी से विपरीत इंसुलिन प्रतिरोध जनित मूल कारणों और रोग कार्यिकी (disease physiology) को परिभाषित किया। उन्होंने प्ररूप 2 मधुमेह और हृदय रोग में इंसुलिन प्रतिरोध की केंद्रीय भूमिका को उजागर किया, और परिणामों में सुधार के लिए एक व्यावहारिक दृष्टिकोण प्रदान किया। डॉ रिवेन ने मधुमेह और हृदय रोग महामारी की जड़ में मौजूद व्यापक

चयापचय दुष्क्रिया को स्पष्ट करने के लिए 'संलक्षण-एक्स' (syndrome-X) शब्द गढ़ा। रिवेन के इस 'संलक्षण-एक्स' को विश्व स्वास्थ्य संगटन (WHO) आज 'चयापचयी संलक्षण या मेटाबॉलिक सिंड्रोम' के नाम से जानता है। उस समय उन्हें पूरी तरह से यह एहसास नहीं था, कि आधुनिक शोथ संबंधी बीमारियों का एक बड़ा हिस्सा भी उनके संलक्षण से जुड़ा था। चयापचयी संलक्षण का अधिक सटीक शब्द 'इंसुलिन प्रतिरोध संलक्षण' है। चयापचयी संलक्षण होने से न केवल हृदय रोग विकसित होने का खतरा बढ़ जाता है, बल्कि यह अन्य पुरानी दीर्घकालिक बीमारीयों का जोखिम भी बढ़ा सकता है। निम्नलिखित पांच प्रमुख कारकों की पहचान की गई है, जो इंसुलिन प्रतिरोध को घनास्त्रता समर्थक (pro-thrombosis) और शोथ समर्थक चयापचय अवस्था (pro-inflammatory metabolic state) के रूप में परिभाषित करती है:

1. अतिशर्करारक्तता: खाली पेट रक्त में ग्लुकोज की मात्रा 125 मिलीग्राम प्रति डेसीलीटर या ग्लायकेटेड हिमोग्लोबिन (एचबीए1सी) की मात्रा 6.4% हो जाती है।
2. अतिइंसुलिनरक्तता: रक्त में इंसुलिन की सीमा (range) 0.2 से 25.0 mIU/L होती है, किन्तु इंसुलिन का स्तर जितना कम होगा उतना अच्छा और स्वास्थ्यकर होगा। अतिइंसुलिनरक्तता में इंसुलिन का स्तर हमेशा उपरोक्त सीमा की उच्चतम दिशा में बढ़ा हुआ रहता है।
3. मेदर्बुदजनक डिस्लिपिडेमिया: यह अवस्था आपके रक्त में एक या अधिक प्रकार की वसा जैसे कि उच्च घनत्व वाले लिपोप्रोटीन (एचडीएल), कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन (एलडीएल) और ट्राइग्लिसराइड्स के अस्वास्थ्यकर स्तर और उनके परस्पर अनुपात के असंतुलन को संदर्भित करता है।

4. उच्च रक्तचाप और पेट का मोटापा: पेट के मोटापे को कमर की परिधि के रूप में क्रमश: महिलाओं में 88 सेमी (35 इंच) से अधिक और पुरुषों में 102 सेमी (40 इंच) से अधिक में परिभाषित किया गया है। आदर्श रूप से, आपकी कमर की माप आपकी ऊंचाई के आधे से कम होनी चाहिए। पेट के मोटापे से, कमर से ऊंचाई का अनुपात बढ़ जाता है।

निश्चित रूप से इन पर विचार करने के लिए कई अनुवांशिक कारक हैं, लेकिन पिछले सौ वर्षों के दौरान जनसंख्या में इनमें कोई बदलाव नहीं देखा गया है, जिससे हमारी दीर्घकालिक असंक्रामक बीमारी दर में विस्फोट हुआ है। रोग कार्यिकी के आधार पर, आहार से ऊर्जा अधिभार की प्रतिक्रिया में संलक्षण विकसित होता है। अग्न्याशय बीटा कोशिकाओं (pancreas beta cells) के द्वारा इंसुलिन हार्मोन उत्पादित होता है, जो न केवल रक्त शर्करा (blood sugar) को नियंत्रित करता है, बल्कि इससे भी महत्वपूर्ण रूप से उसके उपयोग और भंडारण के बीच ऊर्जा को नियंत्रित और विभाजित करता है।

वर्षों तक अत्यधिक कार्बोहाइड्रेट के सेवन के बाद इंसुलिन प्रतिरोध दुष्चक्र विकसित होता है, जिसमें शरीर निरंतर उपचय अवस्था (anabolic state) में अतिरिक्त ऊर्जा का प्रबंधन करने के लिए संघर्ष करता है। अतिरिक्त ऊर्जा को सामान्य शरीर वसा और/या आंत वसा (visceral fat) के रूप में संग्रहित किया जा सकता है। अतिरिक्त ऊर्जा से निपटने का अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित तरीका है, जबकि दूसरा तरीका चयापचय रोग (metabolic disease) को बढ़ाता है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है, कि ऐसे कई गैर-मोटे लोग हैं, जो चयापचय संबंधी दुष्क्रिया से पीड़ित हैं, परंतु वह ठीक दिखते हैं। उन्होंने अपने पेट के अंदर एक खतरनाक आंत-वसा का भंडार बना लिया है। जैसे-जैसे इंसुलिन प्रतिरोध बढ़ता है, अंतिम अंग (end organ) इंसुलिन अभिग्राहक (insulin receptor) इंसुलिन संकेत प्रति तेजी से प्रतिरोधी होते जाते हैं। यह बदले में अतिइंसुलिन रक्तता को प्रोत्साहित करता है, और दुष्चक्र को आगे बढ़ाता है।

इसमें कई अंग प्रणालियाँ मुख्य रूप से यकृत, लेकिन अग्न्याशय, वसा ऊतक (adipose tissue), आंत्र (bowel) और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र भी शामिल हैं, बदले में कई अन्य हार्मोन अनियमित हो जाते हैं, और लगातार बढ़ते वसा भंडार से सूजन (शोथ) संबंधी परिसंचारी साइटोकिन्स (inflammatory circulating cytokins) का उत्पादन होता है। रीवेन ने इंसुलिन प्रतिरोध पर ध्यान केंद्रित किया था, जबकि रोगविज्ञानी डॉ जोसेफ क्राफ्ट ने अतिइंसुलिनरक्तता और इसके प्रभावों का विकोडन (decoding) किया था। अपने जीवन के दौरान, क्राफ्ट ने कुल मिलाकर 16,000 से अधिक लोगों, विभिन्न रोगियों पर पांच घंटे तक की इंसुलिन जांच की। मधुमेह और हृदय रोग पर उनके इस व्यापक

शोध के साथ यह असाधारण डेटा गहराई से रहस्योद्घाटन करने वाला था। इससे उन्हें पता चला कि, कैसे मधुमेह और हृदय रोग एक दूसरे से जुड़े हुए हैं।

मेटाबॉलिक (इंसुलिन प्रतिरोध) सिंड्रोम के अग्रणी अनुसंधान कर्ता

डॉ जेराल्ड रिवन (1928-2018)

डॉ जोसेफ क्राफ्ट (1920-2017)

क्राफ्ट ने इस प्रकार अतिइंसुलिन रक्तता अवस्था (hyperinsulinemic state) को चयापचय रोग के प्राथमिक संचालक के रूप में पहचाना। उनकी राय में इसमें मनुष्यों में होने वाले हृदय रोग का एक बड़ा हिस्सा शामिल था। हाल ही में अनुसंधानकर्ता कैथरीन क्राफ्ट ने, डॉ. जोसेफ क्राफ्ट के काम पर आधारित नया डेटा प्रकाशित किया है, और वह डॉ. क्राफ्ट के समान ही निष्कर्षों पर पहुंचीं हैं। उन्होंने अतिइंसुलिन रक्तता और चयापचय रोग तंत्र के बारे में भी विस्तार से बताया है। संक्षेप में, अतिशर्करा रक्तता और इंसुलिन प्रतिरोध दोनों ही मधुमेह/ चयापचय संबंधी दुष्क्रिया (metabolic catastrophe) की पहचान करने के लिए देर से आए निष्कर्ष हैं। इस प्रकार मधुमेह से पीड़ित लोग वास्तव में लंबे समय से मधुमेह से पीड़ित हैं।

इस प्रकार उनकी धमनियों पर कई वर्षों पहले से लगातार अतिशर्करा रक्तता और अतिइंसुलिन रक्तता की विनाशकारी प्रक्रियाएं हमला करती रहीं हैं। क्राफ्ट ने कहा है, कि "मधुमेह के अधिकांश रोगियों को पता ही नहीं चलता कि वे मधुमेह से पीड़ित हैं - यानी, जब तक कि उन्हें अपना पहला दिल का दौरा न पड़ जाए"। इससे हम अब यह समझते हैं, कि इसकी प्रारंभिक जांच पर जादा फोकस होना चाहिए। भारत में 10.1 करोड़ लोग मधुमेह से पीड़ित हैं, और 13.6 करोड़ लोग पूर्व-मधुमेह अवस्था से गुजरकर मधुमेह विकसित होने के कगार पर हैं। दुर्भाग्य से अधिकांश स्वास्थ्य देखभाल पेशेवर अतिशर्करा रक्तता, अतिइंसुलिन रक्तता, और इंसुलिन प्रतिरोध की ठीक से जांच नहीं करते हैं। अक्सर वह मधुमेह और चयापचय रोग को चिह्नित करने के लिए रक्त शर्करा के स्तर के आसमान

छूने का इंतजार करते हैं, और वर्षों से चले आ रहे पुराने खराब कोलेस्टेरॉल वाली रूढ़िवादी सोच से निराशाजनक रूप से विचलित हैं।

3. एथेरोजेनिक डिसलिपिडेमिया (atherogenic dyslipidemia)

एथेरोजेनिक डिसलिपिडेमिया चयापचय संलक्षण का एक और महत्वपूर्ण पहलू है, और चयापचय स्वास्थ्य के इंसुलिन-केंद्रित निर्धारण के लिए एक सरल परोक्षी के रूप में कार्य करता है। सरल रूप से परिभाषित किया जाए तो यह केवल कुल कोलेस्टेरॉल (total colestrol) की मात्रा या सांद्रण (consentration) को देखने के बजाय लिपोप्रोटीन की गुणवत्ता और उनके परस्पर अनुपात को संबोधित करने के महत्व पर जोर देता है। डॉ. रीवेन ने कहा था, कि कुछ लिपोप्रोटीन विन्यास कम एचडीएल कोलेस्टेरॉल और उच्च ट्राइग्लिसराइड सहित इंसुलिन प्रतिरोध से निकटता से जुड़े हुए थे। आज हम एलडीएल कण आकार के (बड़े अनुकूल कण बनाम छोटे कण) को भी माप सकते हैं, जो एक और संकेतक (indicator) प्रदान करता है, और कोलेस्टेरॉल की गुणवत्ता को संबोधित करता है। वैसे चयापचयी संलक्षण मौजूद हैं या नहीं, यह निर्धारित करने में कुल कोलेस्टेरॉल एवं एलडीएल कोलेस्टेरॉल सांद्रण को भी प्रासंगिक नहीं माना जाता है। यह निदान में माप के योग्य भी नहीं है, और अपने आप में आपको काफी कुछ बता देगा।

हृदय रोग से जुड़े प्रमुख अध्ययनों में एचडीएल के महत्व को पहचाना गया है, और यह मृत्यु दर के साथ पश्चगतिक (retrograde) या विपरीत रूप से जुड़ा हुआ एक चिन्हक (marker) है। हालाँकि 1988 में यह निष्कर्ष प्रकाशित

हुआ था, लेकिन इस पर कम जोर दिया गया है, शायद इसलिए कि कम एचडीएल को सुरक्षित रूप से संबोधित करने के लिए कोई दवा नहीं मिली है। इस प्रकार जोखिम परिकलन आज भी 'खराब कोलेस्टेरॉल या एलडीएल' को संबोधित करने पर जोर देता है, जबकि एचडीएल, 'अच्छा या हृदय हितैषी कोलेस्टेरॉल' एक गौण लक्ष्य बना हुआ है। जबकि इसके अतिरिक्त, इन महत्वपूर्ण अध्ययनों के डेटा ने युवा वयस्कों में एलडीएल और मृत्यु दर के बीच एक छोटा सा अथवा गौण (लघु) संबंध प्रदर्शित किया, किंतु वृद्ध व्यक्तियों में यह संबंध टूट गया। वास्तव में उच्च एलडीएल यानी कि खराब कोलेस्टेरॉल इन पुराने समूहों में दीर्घायु से जुड़ा हुआ पाया गया है। इस खोज को व्यापक रूप से रिपोर्ट नहीं किया गया, क्योंकि इसने संपूर्ण 'खराब कोलेस्टेरॉल' सिद्धांत को चुनौती दी हुई थी। हालाँकि अधिकांश हृदय संघ (heart association) अब चयापचयी संलक्षण को पहचानते हैं, लेकिन यह निराशाजनक है, कि चयापचयी संलक्षण से संबंधित विशिष्ट उपचार वर्तमान में किसी भी देश के हृदय रोग विशेषज्ञों के संगठनों के दिशानिर्देशों में शामिल नहीं हैं। ऐसा प्रतीत होता है, कि मूल कारण से संबंधित किसी भी चीज़ को उजागर करने से परहेज है, और वह सहयोगी प्रतिनिधि चिन्हकों के ढीलेपन को पसंद करते हैं, जो प्राथमिक लक्ष्य के रूप में कोलेस्टेरॉल पर अधिक जोर देता है।

4. चयापचयजन्य विकार

हृदय रोग की प्रगति में कई योगदानकर्ता हैं, लेकिन इंसुलिन प्रतिरोध संलक्षण उस स्थिति का सबसे अच्छा वर्णन करता है, जो संवहनी अपह्रास) या जटिलताओं को तेज करता है। यह मूलतः चयापचय संबंधी गड़बड़ी की स्थिति है, इसमें कई अंग और जैविक मार्ग शामिल होते हैं, क्योंकि शरीर समस्थिति (homeostasis) को बनाए रखने के लिए संघर्ष करता है। हर समय एक प्रणाली-व्यापी आग किसी के संवहनी जालतंत्र (vascular network system) के माध्यम से जल रही है। वह शोथ (सूजन) जो अनुप्रवाह की ओर विकसित होता है, ऑक्सीकर (ऑक्सीडेटिव) तनाव और उन्नत ग्लायकेशन (ग्लाइकोलिसिस प्रतिक्रिया में ग्लुकोज़ से ऊर्जा निकलना) या ग्लायकेटेड उत्पाद (एचबीए1सी) है, जो अंततः कई अंग प्रणालियों, विशेष रूप से रक्त वाहिकाओं के अंतःस्तर के लिए हानिकारक हैं। रक्त वाहिकाओं के भीतर, धमनीकाठिन्य (arteriosclerosis) उत्तेजित हो उठता है, और जालतंत्र के अचानक टूटने के जोखिम को उजागर करता है। अधिकांशत: यह दिल के दौरे की उत्पत्ति है। यह पहचानना महत्वपूर्ण है, कि धमनीकाठिन्य, ऐथिरोमा या चकत्ता (plaque), शुरू में एक सुरक्षात्मक तंत्र का प्रतिनिधित्व करता है। वह रक्त वाहिका दीवार की क्षति की मरम्मत करता है। चयापचय संबंधी गड़बड़ी का अनुभव करने वाली प्रणाली में, कोलेस्टेरॉल और लिपोप्रोटीन क्षति नियंत्रण का प्रयास करते हैं। दुखद बात यह है, कि लिपोप्रोटीन युक्त कोलेस्टेरॉल भी सूजन) पैदा करने वाली ताकतों के आगे झुक जाता है, और स्वयं क्षतिग्रस्त होकर यह रोग प्रक्रिया को कई प्रकार से आगे बढ़ाता है, जो किसी दुर्घटनाग्रस्त वायु मार्ग में बचे हुए जेट ईंधन की तरह हो जाता है, अर्थात पहले जहां

विमान को सुरक्षित रूप से ऊपर रखना महत्वपूर्ण था, यह अब जीवित यात्रियों को नष्ट करने में दुखद योगदान देता है। हालांकि, कोलेस्टेरॉल स्वाभाविक रूप से विषाक्त नहीं है, इसे समझने के लिये एक सादृश्यता या समरूपता का उपयोग करते हैं, जहाँ कोलेस्टेरॉल अणुओं की उपस्थिति आग लगने की जगह पर अग्निशमन कर्मियों के रूप में कार्य करते हैं, जो वास्तव में आग बुझाकर क्षति की मरम्मत में मदद करता है। कोलेस्टेरॉल को हृदय रोग का सबसे प्रबल जोखिम कारक (strong risk factor) मानने वाले अनुसंधानकर्ताओं ने इसे एक जलते हुए घर को देखकर यह निर्धारित किया कि जितनी बड़ी आग होगी, उतने अधिक अग्निशमनकर्मी मौजूद होंगे, और इस आधार पर यह निष्कर्ष निकाला, कि अग्निशमनकर्मी ही घर जलने या जलाने का कारण है। अत: कोलेस्टेरॉल को दोषी मानना, कुछ हद तक आग लगने के लिए अग्निशमनकर्मियों को दोषी मानने जैसा है, क्योंकि जब आग लगती है, तो वह वहीं मौजूद होते हैं।

एक अन्य समरूपता का उपयोग करते हैं, जो इस संबंध में विशेष रूप से उपयोगी है। एक सुझाव के अनुसार एलडीएल (खराब कॉलेस्टरॉल) दुर्घटनास्थल पर जाने वाली रोगी वाहन (ambulance) की तरह है, जबकि एचडीएल (हृदय-हितैषी कोलेस्टेरॉल) घटनास्थल से निकलने वाली रोगी वाहन की तरह है। हम दुर्घटना के मूल कारण को दरकिनार करते हुए रोगीवाहन पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। अक्सर अवलोकन या निरीक्षण और संबंध धोखा देने वाले हो सकते हैं, और संभवतः यह वैज्ञानिक इतिहास का सबसे बड़ा मामला है, जहां ऐसा हुआ है। वास्तविक मूल कारणों को जाँचना और उनकी शिनाख्त करना महत्वपूर्ण हैं, जबकि परस्पर क्रिया और भ्रमित करने वाले कारकों से विचलित नहीं होना चाहिए। शुक्र है कि रिवेन एवं क्राफ्ट के उत्तराधिकारी वैज्ञानिक और चिकित्साकर्मी धीरे-धीरे जाग रहे हैं, वास्तविकता को समझ रहे हैं और उसे अनुभव के स्तर पर स्वीकार रहे हैं।

धमनीकाठिन्य (arteriosclerosis) एक तेजी से फैलने वाली प्रक्रिया है, और यह एक अस्थिर बीमारी है, जो चकत्ता (plaque) पैदा करती है, जिससे फटने का खतरा सबसे अधिक होता है। चकत्ते के विभिन्न प्रकार काफी खुलासा करने वाले हैं, जिनमें चयापचय रूप से सक्रिय नरम, और अधिक स्थिर कैल्सीकृत (calcified) या कठोर चकत्ते शामिल हैं। चकत्ते (plaque) काफी जटिल दिखाई दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ ज़ख़्म या घावों में कैल्सीकृत सतही कैप अथवा नरम परिगलित या ऊतकक्षयी (necrotic) कोर या भीतरी भाग होते हैं। अधिकांश तीव्र हृदय संबंधी घटनाएं इन कमजोर चकत्तों के टूटने, रक्त वाहिका में सूजन या शोथ वाले पदार्थों को बाहर निकालने और अचानक घनास्रता (thrombosis) का कारण बनने के लिए जिम्मेदार होती हैं। यह तीव्र हृदधमनी संलक्षण (acute coronary syndrome), एक जीवन-घातक स्थिति है, जिसमें तत्काल हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। यदि आप आपातकालीन कक्ष तक पहुंचने के लिए पर्याप्त भाग्यशाली हैं, तो घनास्रलायी (thrombolytic) चिकित्सा, वाहिकासंधान (angioplasty) और धमनी उपमार्ग (bypass) आपको तत्काल संकट से बाहर निकाल सकता है।

इन जीवन-विघातक परिस्थितियों (life threatening situations) में बाकी सब कुछ तुच्छ लगता है, और 'आपातकालीन नलकारी (प्लम्बिंग) कार्य' उस वक्त का सर्वश्रेष्ठ क्रम है। किसी भी बड़ी घटना की प्रतीक्षा करने के बजाय प्रारंभिक उप-नैदानिक रोग की उचित जांच कहीं अधिक प्रभावी होती। निकट भविष्य में यदि किसी को दिल का दौरा पड़ने का खतरा है, तो ऐसे लोगों को चिह्नित करने के लिए हृदय कैल्शियम क्रमवीक्षण (scan) जैसे उपकरणों का उपयोग करने पर ध्यान केंद्रित करने से हमारी सटीकता में काफी सुधार होगा। चयापचय रोग और उसके मूल कारणों को उचित रूप से संबोधित करने से लाखों लोगों को पीड़ित होने और/या अपना जीवन खोने से रोका जा सकेगा। इसे जिस भी तरीके से लिया जाय, चयापचय संबंधी अफरा-तफरी को सही ढंग से संबोधित करना ही स्वास्थ्य जीवन की कुंजी है।

5. इंसुलिन के प्रति सतर्कता

कई अध्ययनों का यह अनुमान है, कि विश्व के कई देशों की आधी से अधिक वयस्क आबादी पूर्व-मधुमेही (pre-diabetic) है। यह संख्या और भी चकित कर देगी अगर अतिइंसुलिन रक्तता की जांच की गई तो और भी बड़े और गहरे संकट का खुलासा किया जा सकता है। यदि इस तरह अतिइंसुलिन रक्तता का परीक्षण नहीं किया गया होता, तो केवल शर्करा परीक्षण के आधार पर ही लोग बेपरवाह रहेंगे, और इस बीमारी का सही वक्त पर व्युत्क्रमण या प्रतिबंधन (inversion or restriction) करने से चूक जाएंगे। इसलिए जाँच महत्वपूर्ण है, फिर भी दुख की बात यह है, कि अधिकांश स्वास्थ्य देखभाल पेशेवर हृदय रोग के बारे में सोचते समय शर्करा को सही ढंग से नहीं मापते हैं। इसके अलावा, वह इंसुलिन की जाँच भी नहीं करते हैं, और न ही चयापचय रोग का ठीक से समाधान किया जाता है।

संवेगी या भावनात्मक हृदय देखभाल सेवाओं में सुधार और धूम्रपान समाप्ति के बावजूद, हृदय रोग की घटनाएं अभी भी बढ़ रही हैं। दरअसल यह मधुमेह और मोटापे की बढ़ती घटनाओं को परावर्तित करती हैं। हालाँकि मधुमेह और हृदय रोग के बीच संबंध अच्छी तरह से स्थापित हैं, फिर भी एक बाधा पर काबू पाना अभी बाकी है, और हमें यह प्रदर्शित करने की आवश्यकता है, कि केवल 'खराब कोलेस्टरॉल' आधात्री (matrix) को देखने की तुलना में चयापचय रोग पर नज़र रखने से जोखिम का बेहतर अनुमान लगाया जा सकता है। मौजूदा अध्ययनों के प्रचलन में हृदसंवहनी प्रतिबिंबन (cardiovascular imaging) और शर्करा तथा इंसुलिन को अधिक उचित तरीके से मापने वाले अध्ययन शामिल हैं, जो 'खराब कोलेस्टेरॉल' को देखने वाले अध्ययनों की तुलना में हृदय संबंधी जोखिम की बेहतर भविष्यवाणी करते हैं।

भविष्य के शोध निश्चित रूप से कोलेस्टेरॉल से हटकर इन सूचनाओं का समर्थन एवं पुष्टि करेंगे, लेकिन उस समय तक अतिशर्करा रक्तता, अतिइंसुलिन रक्तता, और चयापचयी संलक्षण को ठीक से संबोधित करना महत्वपूर्ण बना रहेगा। धमनीकाठिन्य एक चयापचय रोग है, जो संप्रेरक (hormonal) विकृति, अतिशर्करा रक्तता और अतिइंसुलिन रक्तता का परिणाम प्रतीत होता है। इसलिए परिभाषा के अनुसार उपचार को भी चयापचय रोग सुधार के आधार पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। वर्तमान चिकित्सा ने विचारधारा, हठधर्मिता और रूढ़िवादिता ने इसे प्रभावी ढंग से लागू करने से रोका है।

6. निष्कर्ष

एशियाई देशों, अधिकांश यूरोपीय और अमेरिकी देशों के बीच कार्बोहाइड्रेट सेवन की मात्रा काफी भिन्न होती है। शोध से पता चलता है, कि उच्च कार्बोहाइड्रेट आहार रक्त वसा निर्माण को प्रभावित करता है, जिसके परिणामस्वरुप यह धमनीकाठिन्य और विभिन्न संवहनी रोगों के विकास में योगदान कर सकता है, और अंततः मृत्यु हो सकती है। उच्च कार्बोहाइड्रेट सेवन और हृद्वाहिका रोग जोखिम के बीच संबंधों की जांच करने वाले अनुसंधान से भारत सहित एशियाई आबादी में उच्च कार्बोहाइड्रेट सेवन और बढ़े हुए हृद्वाहिका रोग जोखिम के बीच महत्वपूर्ण संबंध का पता चलता है। हृदय तथा हृद्वाहिका रोग से मुक्ति के लिए कुल कोलेस्टेरॉल या एलडीएल कोलेस्टेरॉल के बजाय पूरा ध्यान तथा प्रयास अतिशर्करा रक्तता, अतिइंसुलिन रक्तता और इंसुलिन प्रतिरोध से बचने की ओर होना चहिये। चयापचयजन्य महासंकट का कारक ग्लूकोज और फ्रक्टोज़ मोनोसैकेराइड्स जिस पॉलीसैकेराइड्स से बनते हैं, उस मंड (starch) के अति सेवन (overconsumption) में अंतर्निहित है। इंसुलिन संवेदनशीलता की बहाली ही हृदयरोग से मुक्ति की कुंजी है। अंततः प्ररुप-2 मधुमेह, एक संवहनी (vascular) रोग है, और हृद्वाहिका रोग उसी निदानी या गैर-निदानी प्ररुप 2 मधुमेह की ही जानलेवा वृहद रक्तवाहिनी जटिलता है। यह अध्ययन निष्कर्ष दीर्घकालिक असंक्रामक बीमारियों, विशेषकर हृद्वाहिका रोग के लिए प्रभावी रोकथाम रणनीति विकसित करने में तथा सांस्कृतिक और क्षेत्रीय आहार प्रतिरूप (cultural and regional diatery pattern) पर विचार करने के महत्व पर प्रकाश डालता है।

जंतु विज्ञान प्रभाग, किर्ती कॉलेज (स्वायत्त),(डेक्कन एज्युकेशन सोसायटी, पुणे) दादर (प.) मुंबई - 400 028.
subhash.donde@despune.org

शब्दावली आयोग CSTT

संदर्भ

1. Reaven G. (1988) Banting lecture 1988. Role of insulin resistance in human disease. Diabetes 1988;37(12):1595-607. 13.

2. Pyörälä M., & et. al., (1998) Hyperinsulinemia Predicts Coronary Heart Disease Risk in Healthy Middle-aged Men" Circulation. Vol.98:398-404.

3. Crofts, C., & et al., (2015). Hyperinsulinemia: A unifying theory of chronic disease?. Diabesity 1(4): 34-43. DOI:10.15562/diabesity.2015.19

4. Gerber j., and Cummins I. (2017) Why do people with diabetes die from heart disease? In Diabetes Unpacked Ed. Dr Zoe Harcombe

5. Bezsonov E. & et al., (2023) Lipids and Lipoproteins in Atherosclerosis Biomedicines 2023, 11(5), 1424; https://doi.org/10.3390/biomedicines11051424.

शब्दावली आयोग CSTT

13. सरकारी एवं निजी भागीदारी द्वारा सामुदायिक चारा विकास : एक अनुभव

[1] डॉ देवेश ठाकुर [2]डॉ सुदेश रडोत्रा

सार: सामुदायिक चारा बैंक में किसानों का समूह, चारे की आवश्यकता को पूरा करने के लिए गैर कृषि योग्य या बंजर भूमि में पेड़ों, घासों और फलियों को उगाते हैं। ये बैंक न केवल चारे की उपलब्धता बढ़ाते हैं बल्कि मिट्टी के कटाव को भी कम करते हैं, मिट्टी की उर्वरता की भरपाई करते हैं क्योंकि यह मिट्टी की नाइट्रोजन सामग्री का पुनर्निर्माण करता है। सरकारी और निजी भागीदारी द्वारा सामुदायिक चारा विकास का कार्य हिमाचल प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्रों में पिछले तीन वर्षों में किया गया है । इस लेख में उसी की चर्चा की गयी है।

मुख्य शब्द: सामुदायिक, चारा विकास, किसान, गैर कृषि

1. प्रस्तावना

डॉक्टर जीसी नेगी पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय के पशु चिकित्सा प्रभार शिक्षा विभाग के वैज्ञानिकों द्वारा सामुदायिक चारा विकास के क्षेत्र में कार्य, वर्ष 2020 से शुरू किया गया है । इस परियोजना के अंतर्गत जिला कांगड़ा हिमाचल प्रदेश के दो विकास खंडों बैजनाथ एवं रैत की विभिन्न ग्राम पंचायतों के गावों में सामुदायिक चारा बैंकों का निर्माण किया गया है। यह चारा बैंक सरकारी एवं निजी संस्थाओं की भागीदारी के माध्यम से ही बनाए गए हैं। इन चारा बैंकों की स्थापना के लिए तकनीकी मार्गदर्शन पशु चिकित्सा एवं पशुपालन प्रसार शिक्षा विभाग चौधरी सरवन कुमार कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर द्वारा दिया गया है । वहीं पर वित्तीय सहायता नाबार्ड से प्राप्त हुई । हिमोत्थान सोसाइटी ने आधारभूत स्तर पर लोगों को परियोजना से जोड़ना, ग्रामीण और स्थानीय स्तर पर लोगों की भागीदारी एवं वित्तीय एवं तकनीकी सहायता सुनिश्चित की है । स्थानीय पंचायतों ने चारा बैंक बनाने के लिए भूमि का निर्धारण, मनरेगा के अंतर्गत श्रम के लिए धन का आवंटन सुनिश्चित किया है । इन सामुदायिक चारा बैंकों की स्थापना के लिए स्वयं सहायता समूह के सदस्यों ने स्वैच्छिक श्रम के साथ-साथ न्यूनतम योगदान सुनिश्चित किया है।

2.सामग्री और विधियां

2.1 गांवों का चयन

यह परियोजना हिमाचल प्रदेश के जिला कांगड़ा के बैजनाथ और रैत ब्लॉकों में लागू की गई है। इन दोनों प्रखंडों में बैजनाथ के घोर पीठ, कंदराल, झिकली बेठ, उत्तराला, माधोपुर और हरेड की ग्राम पंचायतों एवं रैत प्रखंडों के रीरकुमार, दरिणी, लाहरी, बोह व सल्ली की ग्राम पंचायतों का चयन किया गया है। इन क्षेत्रों को इसलिए चुना गया क्योंकि गांव के लगभग हर एक घर पर डेयरी पशु हैं। इस क्षेत्र में डेयरी फार्मिंग का मुख्य कार्य महिलाएं ही करती हैं क्योंकि पुरुष गैर कृषि नौकरियों का कार्य करते हैं। इसलिए महिला लाभार्थियों को स्वयं सहायता समूहों में जोड़ा गया। स्वयं सहायता समूहों का गठन प्रारंभ में हिमोत्थान सोसायटी द्वारा किया गया। सदस्यों को 100 रुपये की सदस्यता शुल्क में योगदान करने के लिए कहा गया या सदस्यों द्वारा निर्णय के अनुसार न्यूनतम राशि निर्धारित की गयी। पशुचिकित्सा एवं पशुपालन प्रसार शिक्षा विभाग के फील्ड कार्यकर्ताओं ने इन स्वयं सहायता समूह के संपर्क में रहकर बैठकों एवं प्रशिक्षण शिविर आयोजित करवाई हैं।

2.2 समूह बैठकें

एक बार समूह बनने के बाद सदस्यों को परियोजना में शुरू की जाने वाली गतिविधियों के बारे में बताया और समझाया जाता है। बैठकों में पशु चिकित्सा प्रसार शिक्षा विभाग और हिमोत्थान सोसायटी के परियोजना कर्मचारियों द्वारा जानकारी प्रदान की जाती है। इसके अलावा, प्रस्तावित सामुदायिक चारा विकास गतिविधि के प्रति संसाधनों की लामबंदी की दिशा में अवधारणा को समझाने और उन्हें संवेदनशील बनाने के लिए स्थानीय पंचायत प्रतिनिधियों के साथ भी बैठकें आयोजित की जाती हैं। पंचायत प्रतिनिधियों के आश्वस्त होने के बाद, चारा विकास के लिए जगह का आवंटन और गतिविधि के लिए मनरेगा के अंतगर्त धनराशि को ग्राम सभा में एक प्रस्ताव पारित किया जाता है।

2.3 जगह का चुनाव

सही जगह का चुनाव, सामुदायिक चारा बैंक के गठन मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पशुपालकों के घरों के आसपास खाली पड़ी भूमि जोकि पथरीली या सामान्य खेती के उपयोग मे न आने वाली भूमि का चुनाव किया जाता है। इसके अलावा गांव की साझी जगह जैसे कि बंजर भूमि, चराने वाली भूमि को भी उपयोग मे लाया जा सकता है। जगह के चुनाव के बाद घास रोपण के लिए तैयारी आवश्यक है। बंजर भूमि पर खरपतवार जिन्हें हम हाथों से या रसायनिक उर्वरक द्वारा खरपतवार हटाते हैं। परियोजना के तहत बंजर भूमि ,सामान्य संपत्ति संसाधन (सीपीआर)/अकृषित भूमि के रूप में किसानों के घरों के आसपास खुली भूमि का चयन किया जाता है। यह चयन

स्वयं सहायता समूहों के सदस्यों एवं स्थानीय पंचायत प्रतिनिधियों के साथ समूह बैठक करवाकर किया जाता है। इसके बाद परियोजना के कर्मचारियों, हिमोत्थान सोसायटी के अधिकारियों और स्थानीय प्रतिनिधियों के द्वारा किया जाता है। एक बार भूमि का चयन करने के बाद मनरेगा के तहत धन का उपयोग करने का संकल्प ग्राम पंचायतों द्वारा पारित कर दिया जाता है। स्वयं सहायता समूहों के लाभार्थी भी स्थल विकास के लिए अपना न्यूनतम वित्तीय योगदान देते हैं । इसका उपयोग आम तौर पर चरागाह में लगने वाली बाड़ सामग्री के लिए किया जाता है।

2.4 भूमि की तैयारी

चूंकि चयनित अधिकांश भूमि या तो खरपतवार या किसी न किसी इलाके की बंजर भूमि होती है , इसलिए क्षेत्र की सफाई पहला कदम है। क्षेत्र की सफाई के बाद मिट्टी की स्थिति के आधार पर 7 से 12 फीट लंबाई और 2 से 3 फीट चौड़ाई की नालियां बनाई जाती हैं।

2.5 पौधरोपण एवं रोपण सामग्री

बारिश के मौसम (अगस्त-सितंबर) में पौधरोपण का काम किया गया है क्योंकि इस समय जलवायु की स्थिति घास एवं पौधों के लिए अनुकूल और विकास के लिए बेहतर होती है। मिट्टी एवं नमी के हिसाब से चारा फसल का चुनाव रहता है। वर्षा आधारित भूमि पर पेड़, घास और फलीदार चारा लगाना बेहतर रहता है। सामुदायिक चारा बैंक मे लगाई जाने वाली चारा फसल की निम्नलिखित विशेषता होनी चाहिए:

1. आसानी से स्थापित की जा सके।

2. जल्दी से बढ़ोत्तरी हो सके।

3. जंगली घास से बेहतर उगे ।

4. अच्छी गुणवत्ता का चारा उत्पन्न करे ।

5. बार बार पैदावार दे।

6. शुष्क मौसम में सिंचाई के अभाव में भी ।

7. जहाँ मिट्टी की गुणवत्ता अच्छी न हो वहां पर भी स्थापित हो सके।

शब्दावली आयोग CSTT

पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय के प्रसार शिक्षा विभाग द्वारा चलाए गए सामुदायिक चारा विकास योजना मे यह देखा गया कि हिमाचल प्रदेश के निचले क्षेत्रों में सामुदायिक चारा परिक्षेत्र स्थापित करने के लिए संकर नेपियर बाजरा और सिटेरिया काफी उपयोगी घास है।

2.6 बाड़बंदी

एक बार पौधरोपण पूरा हो जाने के बाद क्षेत्र की बाड़ लगा दी जाती है। यह क्षेत्र को मवेशियों, चोरी या किसी अन्य क्षति से बचाने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। बाड़ लगाने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली सामग्री तार और सीमेंट के खंभे हैं।

2.7 सुरक्षा और प्रबंधन

इस पूरे कार्य की सफलता के लिए चारा भूखंडों का संरक्षण और सवयं सहायता समूह प्रबंधन एक बहुत महत्वपूर्ण पहलू है । चूंकि प्रत्येक भूखंड एक या एक से अधिक सवयं सहायता समूहों को सौंपा जाता है, इसलिए वे पशुओं के चरने से भूखंड की सुरक्षा, पौधों की सुरक्षा और नुकसान और घास की चोरी बचाने के लिए बाड़ जरुरी हैं। प्रबंधन और सुरक्षा में आसानी के लिए समूह के सदस्यों के बीच भूखंड का क्षेत्र समान रूप से विभाजित किया जाता है। प्रत्येक समूह के सदस्यों को निराई, अंतरसांस्कृतिक संचालन, और अपने विभाजित क्षेत्र के हिस्से में खाद डालने की भी जिम्मेदारी रहती है । फसल के समय, प्रत्येक सदस्य को भूखंड के अपने हिस्से की घास प्राप्त होती है।

3. चारा बैंक स्थापित करने की लागत

चारा बैंक स्थापित करने की लागत परियोजना के विभिन्न भागीदारों के बीच साँझा की गई है।चारा बैंकों की स्थापना के लिए बंजर भूमि से लैंटाना जैसे खरपतवार की सफाई, पौधारोपण के लिए गड्ढे एवं खाइयों की खुदाई और वृक्षारोपण, चरागाह में कंटीली बाड की खरीद और परिवहन में काफी खर्च आया। कुल मिलाकर डेढ़ से 2 हेक्टेयर बंजर भूमि को चारा बैंक में तब्दील करने के लिए लगभग एक से डेढ़ लाख का औसत खर्च आया है ।

4.परिणाम

चारा बैंक से एक वर्ष में चारा उत्पादन

पहले ही वर्ष में एक चारा बैंक से औसतन 170 क्विंटल हरे चारा का उत्पादन हुआ है जिसमें 107.58 क्विंटल स्थानीय चारा एवं 69.42 क्विंटल उन्नत किस्म के चारा जैसे नेपियर बाजरा और सिटेरिया का उत्पादन हुआ। दूसरे और तीसरे वर्ष जैसे ही यह चारे वाली घास अपने आप को अच्छे से स्थापित कर लेती हैं । इसलिए चारा उत्पादन 200 क्विंटल से

ज्यादा हो जाता है । इसके अलावा चारा बैंकों में चारा वृक्षों एवं अन्य वृक्षों जैसे शहतूत, कचनार, ओक, आवंला, जामुन आदि का रोपण किया है ।

5.निष्कर्ष

सामुदायिक चारा बैंक मॉडल पहाड़ी क्षेत्रों में पशुपालकों के लिए एक स्थायी समाधान प्रदान करता है। स्थानीय संसाधनों, समुदाय की भागीदारी, और वैज्ञानिक प्रशिक्षण से इसे प्रभावी बनाया जा सकता है। सरकारी योजनाओं और सहकारी प्रयासों से इसकी आर्थिक स्थिरता बढ़ाई जा सकती है। उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, और पूर्वोत्तर राज्यों में इसे स्थानीय अनुकूलन के साथ विस्तारित किया जा सकता है।

आभार

लेखक परियोजना चलाने और वित्तीय सहायता के लिए नाबार्ड शिमला के आभारी हैं। साथ ही साथ लेखक परियोजना को चलाने के लिए, तकनीकी इनपुट प्रदान करने के लिए चारा फसलों और उपयोग पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना, हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर एवं भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान के चरागाह फार्म पालमपुर के वैज्ञानिकों के भी आभारी हैं।

संदर्भ

1. Anonymous. (2005). Community fodder bank: A guideline. Drought Proofing Cell, Kutch Nav Nirman Abhiyan, Dr. Rajaram Campus, Near St. Xavier's English Primary School, Bhuj-Kutch, India.
2. Climate Technology Centre & Network (CTCN). (2016). Fodder bank: A technology option document. United Nations Environment Programme, Copenhagen, Denmark.
3. Government of India (GoI). (2012). Report of the working group on animal husbandry and dairying. 12th Five-Year Plan (2012–2017). Planning Commission, New Delhi, India.
4. Kumar, S., Agrawal, R. K., Dixit, A. K., Rai, A. K., Singh, J. B., & Rai, S. K. (2012). Fodder production technologies for arable lands. Technology Bulletin, 39(9), 255–260.

शब्दावली आयोग CSTT

5. Mukherjee, P. K., Singh, B. P., & Chander, M. (2020). Convergence of dynamic extension approaches for promoting bajra napier hybrid in Uttar Pradesh: A success story. Journal of Crop and Weed, 16(1), 167–171.
6. Owen, E., Smith, T., & Makkar, H. (2012). Successes and failures of animal nutrition practices and technologies in developing countries: A synthesis of an FAO e-conference. Animal Feed Science and Technology, 174(3–4), 211–226.
7. Ponnusamy, K. (2013). Impact of public-private partnership in agriculture: A review. Indian Journal of Agricultural Sciences, 83(8), 803–808.
8. Roy, A. K., Agrawal, R. K., Bhardwaj, N. R., Mishra, A. K., & Mahanta, S. K. (2019). Revisiting national fodder demand and availability. In A. K. Roy, R. K. Agrawal, & N. R. Bhardwaj (Eds.), Indian fodder scenario: Redefining state-wise status (pp. 1–21). ICAR-AICRP on Forage Crops and Utilization, Jhansi, India.
9. Shalini, D., & Maikhuri, R. K. (2012). Fodder banks can reduce women's drudgery and anthropogenic pressure on forests in the Western Himalayas. Current Science, 103(7), 763.
10. Venugopalan, V. K., Prabhakar, M., Gopinath, K. A., Pankaj, P. K., & Rao, C. S. (2016). Community fodder bank for addressing fodder scarcity in rainfed areas. Indian Farming, 66(2), 21–25.

शब्दावली आयोग CSTT

14. स्वास्थ्य पर मधुमेह के दुष्परिणाम

[1]दया शंकर त्रिपाठी

सार: मधुमेह एक गम्भीर बीमारी है जो शरीर के स्राव तंत्र कार्यिकी का विकार है। इसमें शरीर के भीतर शर्करा (शुगर) की मात्रा जरूरत से ज्यादा हो जाती है जिसे शरीर अपने काम में नहीं ले पाता। हमारे भोजन में काफी मात्रा कार्बोहाइड्रेट की होती है। कार्बोहाइड्रेट के आंतो में पचने के परिणामस्वरूप शर्करा का निर्माण होता है। यह शर्करा ग्लूकोज होती है। ग्लूकोज आंतों से अवशोषित होकर रक्त में पहुँच जाती है और रक्त में मिलकर रक्त धमनियों के रास्ते शरीर के प्रत्येक छोटे-बड़े भागो से होते हुए उत्तक और कोशिकाओं तक पहुँच जाती है। प्रस्तुत शोध पत्र में मधुमेह मधुमेह के लक्षण,प्रकार,दुष्परिणाम व निदान पर चर्चा की गई है।

मुख्य शब्द: मधुमेह, ग्लूकोज, किसान,इन्सुलिन,उत्तक

1. प्रस्तावना

किसी भी स्वस्थ व्यक्ति के इस रोग से प्रभावित होते ही उसके स्वास्थ्य में एका एक गिरावट आने लगती है और शारीरिक दुर्बलता दिखने लगती है। यह रोग उन व्यक्तियों को होता है जो शारीरिक श्रम से दूर रहते हैं। अधिकाशतः कुर्सी पर बैठकर कार्य करने वाले लोगों को यह रोग होने की सम्भावना अधिक रहती है। ये लोग एक स्थान पर बैठे विभागीय कार्यों को तो बड़ी ही कुशलता के साथ पूरा करते हैं, परंतु कार्य पूरा करने के चक्कर में अपने स्वास्थ्य पर ध्यान नहीं देते। धनी लोग, जो दिमागी काम करते हैं, बहुत अच्छा खाते हैं. सोच-फिक्र चिन्तन-मनन खूब करते हैं, परन्तु शारीरिक श्रम बिल्कुल नहीं करते, उन्हीं को मधुमेह रोग होता है। डॉकटर, वैद्य, हकीम, वकील, बैरिस्ट्र, प्रोफेसर, पण्डित, त, विद्वान, विद्वान, सेठ-साहूकार सेठ-साहूकार आदि जिनको शारीरिक परिश्रम नहीं करना पड़ता, करते तह लोग इस परंतु भोजन खूब अच्छा रोगे के शिकार होते हैं। आज भारत में लगभग छः करोड़ से भी ज्यादा व्यक्ति प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मधुमेह से ग्रस्त है।

2. मधुमेह के लक्षण

2.1 प्राथमिक लक्षण

बार-बार प्यास लगना, बार-बार पेशाब जाना, मुँह सूखना, सुस्ती महसूस होना, जल्दी-जल्दी भूख लगना, पेशाब करने के बाद उस स्थान पर चीटे-चीटियों का पायाजाना, कब्ज रहना, आँखों से देखने में परेशानी महसूस होना 〇ा मधुमेह

के प्राथमिक लक्षण हैं। घाव भरने में देरी होना, ऑपरेशन के बाद घाव जल्दी ठीक न होना, शरीर पर कहीं भी खरोच लग जाने पर पक जाना और ठीक हिने में काफी समय लगना मधुमेह होने के सम्भावित लक्षण हैं।

2.2 प्रमुख लक्षण

ज्यादा प्यास और लघुशंका की बार-बार शिकायत मधुमेह का प्रमुख लक्षण है। टाइप-एक मधुमेह में स्वभाविक रूप से भूख बढ़ने के बावजूद वजन में गिरावट आती जाती है। परंतु, टाइप-दो मधुमेह के रोगी प्रायः मोटे या स्थूल काय होते होते हैं। रोगी के स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाता है। उसे कमजोरी और थकान बनी रहती है। टाइप - एक श्रेणी का मधुमेह बेकाबू हो जाए तो उल्टियाँ हो सकती हैं और रोगी सुस्त हो जाता है अथवा बेहोशी छा सकती है। दोनों ही श्रेणी के मधुमेह में समय से घाव न भरना, हाथ-पैरों में सूइयाँ चुभने जैसी संवेदना, हाथ पैरों का सुन्न होना, बार-बार फोड़े-फुंसियाँ होते रहना, निद्रा जुकी स्थिति बने रहना, त्वचा अथवा मूत्र पथ में बार-बार संक्रमण होना और दृष्टि क्षमता में बदलाव होते रहना जैसा लक्षण भी प्रायः देखे जाते हैं। टाइप-दो श्रेणी के मधुमेह के अनेक रोगियों में ऐसे कोई लक्षण नहीं दिखते जो रोग के प्रति सचेत कर सकें। उनमें रोग का निदान आकस्मिक तौर पर किसी डाक्टरी जाँच के दौरान की गई मूत्र या रक्त परीक्षण से हो पाता है।

3. मधुमेह का निदान

मधुमेह निदान या मधुमेह जानने का सबसे विश्वसनीय तरीका रक्त शर्करा की जाँच है। इसके लिए अनेक विधियाँ अपनाई जाती हैं। परन्तु यदि खाली पेट रक्त शर्करा की मात्रा 110 मिलीग्राम प्रति डेसी लीटर से कम और ग्लूकोज लेने के दो घंटे बाद 140 मिलीग्राम प्रति डेसी लीटर से ज्यादा मिलती है, तो इस रोग की पुष्टि होती है।

मूलरूप से उपचार के लिए मरीज के शरीर में ग्लूकोज की मात्रा और इंसुलिन की मात्रा के बीच संतुलन स्थापित करना जरूरी होता है। इसके लिए हर स्थिति की बारीकी से परीक्षण वा जाँच करनी पड़नी है। इसके उपचार का मूल आधार आधार नियमबद्ध व संयमित खानपान, नियमित व्यायाम और आवश्यक मामलों में इंसुलिन इंजेक्शन या नाशक मधुमेहसेधी दवाएँ हैं। मधुमेह से बचाव तथा स्वस्थ एवं दीर्घायु होने के लिए यह अनिवार्य है कि मरीज स्वयं इन उपायों की उपयोगिता समझे और सही समय तथा परचिकित्सीय परामर्श और जाँच करवाता रहे। टाइप-दो श्रेणी के मधुमेह के कई मामलों में सिर्फ खान-पान में नियमबद्धता और नियमित व्यायाम से रोग नियंत्रण में किया जा सकता है।

4. मधुमेह के प्रकार

मधुमेह दो प्रकार के होते हैं। मधुमेह का पहला प्रकार आम डाइबिटीज का है, जिसे प्रार्थमिक मधुमेह (प्राइमरी डाइबिटीज) कहते हैं इस रोग का कारण आज भी बहुत स्पष्ट नहीं है। दूसरा प्रकार वह है जिसमें मधुमेह किसी निश्चित कारण से होता है। इसे द्वितीयक मधुमेह (सेकेंडरी डाइबिटीज) कहते हैं। मधुमेह के अधिकांश मामले प्राथमिक मधुमेह (प्राइमरी डाइबिटीज) के होते हैं। यह भी दो प्रकार का होता है:

4.1 टाइप-वन डाइबिटीज (इंसुलिन आश्रित मधुमेह)

पहला टाइप-एक (टाइप-वन डाइबिटीज) या इंसुलिन आश्रित मधुमेह (इंसुलिन डिपेंडेंट डाइबिटीस या आई.डी.डी.एम) कहलाता हैं। यह प्रायः बचपन या किशोर उम्र में ही प्रकट हो जाता है। इसमें शरीर में इंसुलिन नहीं बन पाता और रोगी को जीवित रहने के लिए आजीवन इंसुलिन इंजेक्शन लेते रहना पड़ता है। सन् 1921 से पहले जब तक इंसुलिन की खोज नहीं हुई थी, तब इस प्रकार के रोगी ज्यादा समय तक जीवित नहीं रह पाते थे। अब इंसुलिन का आविष्कार हो जाने तथा जानकारियाँ बढ़ जाने के बाद इसके उचित मात्रा में उपयोग तथा उपयुक्त खान-पान, व्यायाम और सही देख-रेख द्वारा रोगी का जीवन सामान्य बनाया जा सकता है।

4.2 टाइप-टू डाइबिटीज (इंसुलिन अनाश्रित मधुमेह)

दूसरा टाइप-दो (टाइप-टू डाइबिटीज) या इंसुलिन अनाश्रित मधुमेह (नॉन-इंसुलिन डिपेंडेंट डाइबिटीज मेलाइटस या एन.आई.डी.डी.एम.) है। इसमें रोगी को इंसुलिन इंजेक्शन पर आश्रित नहीं रहना पड़ता। इस प्रकार का मधुमेह चालीस वर्ष की उम्र पार करने के बाद होता है। इससे पीड़ित होने वाले अधिकांश रोगियों का शरीर वजनी / स्थूल होता है और उनकी दिनचर्या में शारीरिक श्रम बहुत कम होता है। इंसुलिन आश्रित मधुमेह की तुलना में यह मधुमेह कम उग्र होता है और अनेक मरीजों को तो वर्षों तक इसका पता भी नहीं चल पाता कि उन्हें मधुमेह हो चुका है।

मधुमेह के अधिकांश रोगी इंसुलिन अनाश्रित मधुमेह श्रेणी (एन.आई.डी.डी.एम.) के ही होते हैं। इसमें इंसुलिन तो बनता है, परन्तु वह कम मात्रा में उत्पन्न होने के कारण या तो अप्रभावी हो जाता है या समय से स्रवित नहीं हो पाता, जिससे कि वह रक्त शर्करा को उचित सीमा में रख सके। इसे संयमित स्तर पर बनार रखने एव गोलियाँ और के लिए रोगी को सही व नपा- तुला खान-पान, या नियमबद्ध खान-पान के साथ मधुमेहनाशक, गोलि जीवनशैली में परिवर्तन लाने की आवश्यकता पड़ती है।

5. दूसरी व्याधियों के कारण मधुमेह

द्वितीयक मधुमेह (सेकेंडरी डाइबिटीज) के भी कई रूप होते हैं। इनमें प्रमुख पुराना (क्रोनिक) अग्न्याशय शोथ (पैन्क्रियेटाइटिस) रोग है, जो प्रायः ज्यादा मद्यपान करने वाले व्यक्तियों में देखा जाता है स्रावतंत्र की दूसरी व्याधियों जैसे एक्रोमिगेली, कुशिंग सिन्ड्रोम, फियोक्रोमोसाइटोमा में भी मधुमेह उत्पन्न हो सकती है कुछ दवाएँ जैसे कार्टिकोस्टीराइड की अतिकयता भी मधुमेह पैदा कर सकती है। जिगर के रोग लीवरसिरोसिस और हिपेटाइटिस में भी रक्त शर्करा असामान्य हो सकता है। स्त्रियों के मामले में एक खास किस्म का मधुमेह पाया जाता है, जो सिर्फ गर्भावस्था में ही प्रकट होता है। इसे सगर्भिक मधुमेह (गेस्टेशनल डाइबिटीज) कहा जाता है

6. नहीं खोजा जा सका मधुमेह का स्थायी उपचार

अभी तक अनेक दावों के बावजूद मधुमेह का कोई स्थायी उपचार नहीं खोजा जा सका है। परन्तु नियमित दिनचर्या, संयमित आहार और उपयुक्त चिकित्सा से रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। ऐसा करना अनिवार्य है, अन्यथा यह रोग शरीर को भीतर-भीतर खोखला बना देता है। इससे हृदय और रक्त परिसंचरण तंत्र, आँखे, गुर्दे, स्नायुतंत्र और त्वचा के रोग उत्पन्न हो जाते हैं जिससे आदमी का जीवन कठिन हो जाता है और उम्र भी घट जाती है।

7. चमत्कारी विज्ञापनों से बचें

मधुमेह जिन्हें आनुवांशिक क्रम में प्राप्त हुआ है उनके लिए खान-पान नियंत्रण, व्यायाम और औषधियों का उपयोग जरूरी है। ऐसे लोगों को तरह-तरह के मधुमेहरोधी चमत्कारी विज्ञापनों से बचकर कुशल चिकित्सक की देख रेख में दवाओं का नियमित व निरन्तर सेवन करना चाहिए ।

8. पैन्क्रियाज से निकलता है इन्सुलिन

पैन्क्रियाज से निकलने वाले स्राव इन्स्युलिन से ही चीनी और स्टार्च पचता है, अर्थात् रक्त में मिलने योग्य बनता है। इन्सुलिन की कमी से मधुमेह हो जाता है। मधुमेह का रोगी जो कुछ स्टार्च या कार्बोहाइड्रेट खाता है, वह रक्त में नहीं मिलता। इसलिए उसका कोई भी उपयोग शरीर नहीं कर पाता। यही चीनी पेशाब में आती है। कुछ रोगियों की हालत यहाँ तक बिगड़ जाती है कि ये स्टार्च खाना बन्द करके प्रोटीन या वसा खाते हैं, तो उसकी भी चीनी बन जाती है और पेशाब में चीनी जाना जारी रहता है। हालांकि प्रोटीन से चीनी उतनी अधिक मात्रा में नहीं बनती, जितनी स्टार्च से बनती है, फिर भी एक सीमित मात्रा में चीनी ही अग्रस्था, रहती है। यह रोग की बढ़ी हुई अवस्था होती है।

9. ग्लूकोज है हमारे शरीर का ईंधन

प्रत्येक व्यक्ति के रक्त में ग्लूकोज का पहुँचना बराबर बना रहता है, जिसे शरीर का आन्तरिक तंत्र यह ध्यान रखता है कि रक्त में ग्लूकोम का स्तर सदैव एक-सा बना रहे। यह काम इंसुलिन नामक हार्मोन करता है, जो पेट में पाई जाने वाली ग्रंथि अग्न्याशय (पैन्क्रियाज) के खास कोशिकीय समूहो (बीटा कोशिकाओं) में बनता है। जब जब रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ती है, तब-तब इससे इंसुलिन का साव होता है। इसके प्रभात से ग्लूकोज शरीर की कोशिकाओं के भीतर प्रवेश कर जाता है। यदि इसके बाद भी रक्त में अतिरिक्त ग्लूकोज बच जाता है तो, जिगर (लीवर) इंसुलिन के प्रभाव में उसे अपने अन्दर एकत्र कर लेता है वह उसे (ग्लूकोज की) ग्लाइकोजेन में बदल कर संरक्षित कर लेता है और अविष् की आवश्यकता की पूर्ति लिए उसे संभाले रखता है। जब कभी हम इच्छा अनिच्छा से उपवास करते है अथवा भूखे रह जाते हैं और रक्त में ग्लूकोज की की मात्रा कम हो जाती है, तब 'ग्लूकागॉन' नामक हार्मोन ग्लाइकोजेन के रूप में सुरक्षित शर्करा को दुबारा ग्लूकोज ग्लूकोज में में बदल कर रक्त में सम्मिलित कर देता है, जो हमारे काम आता है ।

ग्लूकोज ही हमारे शरीर का वह ईंधन है जिससे जीवन संचालन के लिए ऊर्जा प्राप्त होती रहती है। रक्त ज में मिल कर आप ग्लूकोज और ऑक्सीजन से ही शरीर की प्रत्येक कोशिका अपना जीवन संचालित करती है। मधुमेह होने पर यह व्यवस्था पूरी तरह से असंतुलित हो जाती है। शरीर में इंसुलिन की कमी या उसका निर्माण बिल्कुल न होना या किसी कारण से उसके अप्रभावी हो जाने से ऐसा होता है तब, कोशिकाएँ रक्त से ग्लूकोम को उतनी आसानी से ग्रहण नहीं कर पाती और रक्त में ग्लूकोज का स्तर अधिक होता जाता है। ऐसे में शरीर कोशिकाओं के लिए जरुरी ग्लूकोज की कमी को दूर करने के लिए संचित प्रोटीन और वसा से ग्लूकोज बनाना शुरू कर देता है। इससे रक्त शर्करां और ज्यादा बढ़ जाता है तथा शरीर के प्रोटीन व वसा से ग्लूकोज बनने के कारण शरीर दुर्बल होने लगता है।

10. गुर्दे पर बढ़ता है दबाव

इसके बाद जब यह खून साफ होने के लिए गुर्दों में पहुँचता है तब गुर्दे पर दबाव बढ़ जाता है। उनका ग्लूकोज को मूत्र में आने से बचाना होता है। कभी-कभी रक्त कोशिका का स्तर इतना बढ़ जाता है कि गुर्दे भी उसे रोकने में अक्षम हो जाते हैं जिससे ग्लूकोम ग्लूकोज मूत्र में घुल कर जानै लगता है। इससे मूत्र में जल की मात्रा दढ़ जाती है और, जल के साथ-साथ शरीर के आवश्यक खनिज तत्व और विद्‌युत अपघट्य (इलेक्ट्रोलाइट) भी बाहर चले जाते हैं जो शरीर को कमजोर बना देते हैं।

शर्करा की कुल मात्रा बढ़ने से रोगी को बार-बार मूत्र त्याग करना पड़ता हैं। रात में भी उसे बार-बार लघुशंका होने लगती है जिससे रोगी रात भर ठीक से सो नहीं पाता। इससे शरीर में जल की मात्रा घटती है, मुँह सूखने लगता है

शब्दावली आयोग

और अनिद्रा की शिकायत हो जाती है। जल की कमी को पूरा करने के लिए उसे बार-बार जल ग्रहण करना पड़ता है। बार-बार लघुशंका की शिकायत और प्यास का बढ़ना मधुमेह के प्रमुख और प्राथमिक लक्षणों में से एक है।

यदि मधुमेह की उग्रावस्था में समुचित उपचार न किया गया तो मरीज के शरीर की मांसपेशियों गलने लगती हैं। प्रोटीन और वसा के जमा भंडार ग्लूकों में में बदल कर मूत्र के साथ बेकार चले जाते हैं। शरीर दुर्बल होता जाता है और मांस-पेशियाँ सूख कर कड़ी हो जाती है। शरीर में अनेक प्रकार के नुकसानदेह रसायन पैदा होने लगते हैं और शरीर की अम्लीयता बढ़ जाती है। इस स्थिति को कीटो अम्लीयता (कीटो-एसिडोसिस) कहते हैं ऐसी स्थिति में आपातकालीन उपचार जुरूरी हो जाता है।

दमा, यक्ष्मा, गठिया, उकवत आदि रोग तो अमीर-गरीब, देहाती. शहरी सबको समान रूप से होते हैं, परन्तु मधुमेह प्रायः उन्हीं को होता है, जो भोजन में परहेज नहीं करते हैं और जौ मिठाई, मॉस-मछली, घी-चीनी मिर्च -मसाले आदि का खाने में अधिक उपयोग है।

11. ऊतक शक्ति में कमी

इस रोग में ऊतकों की शक्ति अत्यन्त कम हो जाती है, इसलिए देह-संचित शर्करा तन्तुओं में यथेष्ट में ज्वलन नहीं हो पाती। वस्तुतः ऑक्सीकरण के अभाव का नाम ही मधुमेह है। जब शरीर में सामिष-जातीय (प्रोटीन) पदार्थों की उत्तम रूप से दहन क्रिया नहीं होती, तब उसे वात रोग, गठिया आदि (रियूमेटिज्म) कहा जाता है। वसा युक्त पदार्थों की अच्छी दहन क्रिया नहीं होती, तो स्थूलता, मोटापा आदि (ओबेसिटी) आ जाती है और जब देह में भली भाँति शर्करा की दहन क्रिया नहीं होती, तब हम उसे 'मधुमेह' कहते हैं। इसीलिए वात रोगों में सामिष भोजन, स्थूलता में वसा युक्त भोजन (चिकनाई, घी इत्यादि) तथा मधुमेह में चीनी (शर्करा एवं श्वेतसार) का परहेज करना पड़ता है ।

12. आयुर्वेद के महान चिकित्सक महर्षि चरक का मत

आयुर्वेद के महान चिकित्सक महर्षि 'चरक' ने भी मधुमेह का कारण कफकारी (गरिष्ठ) भोजन को माना है। पहले कफकारी आहार विहार के कारण कफ बढ़कर प्रमेह (बार बार पेशाब करना) उत्पन्न करता है और बाद में धातुओं के क्षीण हो जाने से वायु बढ़कर रोग लगभग असाध्य हो जाता है। आयुर्वेद में लिखा है कि अनेक कारणों से कुपित होकर, जब वायु अपने रूक्ष और कषाय स्वभाव के कारण ओज को खींच लेती है और मूत्राशय में ले जाकर बाहर निकालने लगता है, तब मधुमेह नामक प्रमेह उत्पन्न होता है। मधुमेह के बारे में 'चरक' ने कुछ विशेष कारणों का उल्लेख किया है भारी, चिकने, खट्टे और नमकीन पदार्थों के अधिक सेवन से, नवीन अन्न खाने से बहुत जल अथवा मद्य पीने से बहुत सोने से बहुत सूखपूर्वक बैठे रहने से, कसरत न करने से कफ, पित्त, मॉस और मेद बढ़ जाते हैं।

फिर उनसे आवृत्त होकर वायु ओज धातु को लेकर वस्तिस्थान में आ जाता है और असाध्य मधुमेह उत्पन्न करता है। स्टार्ची युक्त और चीनी पदार्थ अधिक खाने पर जब यकृत उनका उपयोग ठीक से नहीं कर पाता, तब उस ग्लूकोम को, जो ओजरूप है, वायु वस्तिस्थान अर्थात् मूत्राशय में फेंक देता है चीजों को एक जगह से दूसरी जगह सरकाने का काम वायु करती है तभी मधुमेह उत्पन्न होता है। मधुमेह के साथ-साथ मधुमेह के रोगी को जो व्रण, पाण्डु, फोड़े, घाव, रक्तश्राव, दाद-खाज, मेदवृद्धि (मोटापा) आदि सहायक या पूरक बीमारियों होती हैं, उन सबके लिए अलग अलग कोई चिकित्सा या चिन्ता करने की कुछ भी जरूरत नहीं होती। मधुमेह के दूर होते ही वह सब अपने-आप दूर हो जाते है ।

[1]. बनारस हिंदू विश्वविद्यालय

●●●

शब्दावली आयोग CSTT

© भारत सरकार
प्रकाशन नियंत्रक

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

शिक्षा मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग)

भारत सरकार, पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम्

नई दिल्ली - 110066

Commission for Scientific and Technical Terminology

Ministry of Education,(Department of Higher Education)

Government of India, West Block-7, R.K. Puram,

New Delhi - 110066

☎ 011-20867180, 20867178

Website: www.cstt.education.gov.in, www.shabd.education.gov.in